ISSN : 2348-2656

अठारहवां अंक

पूसा सुरभि

अक्तूबर, 2021–मार्च, 2022

डिजिटल युग में भारतीय कृषि

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान
नई दिल्ली–110012

ISSN : 2348-2656

अठारहवां अंक

पूसा सुरभि

अक्टूबर, 2021 - मार्च, 2022

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान
नई दिल्ली-110012

पूसा सुरभि
अक्टूबर, 2021 - मार्च, 2022

संरक्षक एवं अध्यक्ष
डॉ. अशोक कुमार सिंह
निदेशक

संपादक
केशव देव
संयुक्त निदेशक (राजभाषा)

संपादक मंडल
डॉ. दिनेश कुमार, प्रधान वैज्ञानिक, सस्य विज्ञान संभाग
राजेन्द्र शर्मा, मुख्य तकनीकी अधिकारी, कृषि ज्ञान प्रबंधन इकाई
सुनीता, सहायक निदेशक (राजभाषा)

संपर्क सूत्र
हिंदी अनुभाग
भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110012
दूरभाष: 011-25842451

ISSN - 2348-2656

आवश्यक सूचना
इस अंक में प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचारों/आंकड़ों आदि के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं।

मुद्रण: जुलाई, 2022
भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली के लिए हिंदी अनुभाग द्वारा प्रकाशित एवं
मै. एम एस प्रिंटर्स, सी-108/1 बैक साइड नारायणा इंडस्ट्रीयल एरिया, फेस-1, नई दिल्ली-110028
फोनः 7838075335, ईमेलः msprinter1991@gmail.com

आमुख

प्राकृतिक संसाधन हम सबके लिए अनमोल धरोहर हैं। इनके बिना पृथ्वी पर किसी भी प्रकार का जीवन संभव नहीं है। चाहे वह जल हो, प्रकाश हो, मृदा हो या फिर वायु, इन सभी प्राकृतिक संसाधनों के सहारे ही विश्व की अनेक सभ्यताएं विकसित हुई हैं। पृथ्वी पर मानव जीवन की निरंतरता के लिए आज इन संसाधनों को सुरक्षित एवं स्वस्थ रखना परम आवश्यक है। दूसरी तरफ इन सीमित संसाधनों की गुणवत्ता में लगातार गिरावट आती जा रही है। उदाहरण के लिए हम जल को ही लें, प्रत्येक क्षेत्र में इसकी कमी महसूस हो रही है और इसका प्रदूषण भी एक गंभीर समस्या बनती जा रही है। इसी प्रकार मृदा के कटाव और प्रदूषण को देखें तो इसकी उर्वरा शक्ति में निरंतर कमी देखी जा रही है। इन संसाधनों के अतिरिक्त कृषि में कुछ कृत्रिम संसाधनों अथवा निवेशों यथा- उर्वरक, पीड़कनाशी रसायन, मशीन और जीवांश ईंधन (डीजल) इत्यादि का बड़े स्तर पर प्रयोग किया जाता है। कई बार इनके अविवेकपूर्ण एवं असंतुलित प्रयोग से न केवल प्राकृतिक संसाधनों की गुणवत्ता में गिरावट आती है, बल्कि अनावश्यक रूप से कृषि उत्पादन लागत वृद्धि और कृषि आय में भी कमी आती है। अतः कृषि में इस तरह की तकनीकियों को अपनाने की आवश्यकता है जो प्राकृतिक संसाधनों को संरक्षित करते हुए कृषि उत्पादन एवं आमदनी में पर्याप्त वृद्धि कर सकें। इस दिशा में प्रमुख कृत्रिम निवेशों के उत्तम उपयोग के लिए कुछ अत्याधुनिक तकनीकियां विकसित की जा रही हैं जो भविष्य में काफी उपयोगी साबित हो सकती हैं।

सभी प्रकार के संसाधनों में उत्तम सामंजस्य बिठाने और उनके अनुकूलतम उपयोग के लिए आजकल स्मार्ट एग्रीकल्चर (स्मार्ट कृषि) पर बल दिया जा रहा है। स्मार्ट कृषि में मानव श्रम को अनुकूलित करते हुए कृषि उत्पादों की मात्रा और गुणवत्ता में वृद्धि के लिए आधुनिक सूचना और संचार तकनीकियों का उपयोग किया जाता है। स्मार्ट कृषि की प्रमुख तकनीकियों में मुख्य रूप से मिट्टी, पानी, प्रकाश, आर्द्रता और तापमान प्रबंधन के लिए संवेदक यंत्र (सेन्सर्स), फ़ोन अथवा कंप्यूटर आधारित सॉफ्टवेयर जो खेती के विभिन्न कार्यों में मदद करें, जी.पी.एस. (ग्लोबल पोजिशनिंग सिस्टम), सैटेलाईट (उपग्रह), रोबोट और ड्रोन आदि सम्मिलित हैं। स्मार्ट कृषि की उपर्युक्त तकनीकियों के कृषि में अधिकाधिक प्रयोग पर बल दिया जा रहा है। हालांकि इन तकनीकियों का कृषि में वृहत स्तर पर प्रयोग नहीं हो पाया है क्योंकि अभी ये अपने परीक्षण के आरंभिक काल में है। परंतु यह निश्चित है कि आने वाले समय में इन तकनीकियों एवं उपकरणों का देश की कृषि में अधिकाधिक प्रयोग किया जाएगा। इन्हें अपनाकर हम प्राकृतिक संसाधनों के ह्रास में कमी कर कृषि आय में वृद्धि कर सकते हैं।

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान राजभाषा हिंदी के माध्यम से किसान व जन सामान्य को कृषि संबंधी जानकारियां लगातार उपलब्ध करवा रहा है। इसी क्रम में संस्थान की गृह पत्रिका **"पूसा सुरभि" का अठारहवां अंक** आपके सम्मुख है। मैं पत्रिका के इस सफल प्रकाशन के लिए श्री केशव देव, संयुक्त निदेशक (राजभाषा) एवं

सुश्री सुनीता, सहायक निदेशक (राजभाषा) को बधाई देता हूं, जिनके प्रयासों से संस्थान के राजभाषा कार्यान्वयन में निरंतर प्रगति देखने को मिली है। पत्रिका को गुणवत्ता युक्त और आकर्षक बनाने के लिए संपादक मंडल के सदस्य डॉ. दिनेश कुमार, प्रधान वैज्ञानिक एवं श्री राजेंद्र शर्मा, मुख्य तकनीकी अधिकारी को बधाई देने के साथ-साथ इस अंक में समाहित लेखों के लेखकों के प्रति भी आभार व्यक्त करता हूं। आशा है कि यह प्रकाशन सर्वोपयोगी साबित होगा।

(अशोक कुमार सिंह)
निदेशक

संपादकीय

भारत की सांस्कृतिक और भाषायी विरासत इतनी व्यापक है कि विश्व में इसकी तुलना किसी अन्य सभ्यता और संस्कृति से नहीं की जा सकती। यदि हम भाषा की बात करें, तो विविधता में एकता वाले इस देश में वैदिक संस्कृत, प्राकृत, पालि आदि के पड़ावों से गुजरकर हिंदी सबके दिल की धड़कन बनी है। इसने हम सबको एकता के सूत्र में बांधा हैं। लेकिन बहुत लोग ऐसे हैं, जो अंग्रेजी न आने के कारण स्वयं को दूसरों से कमतर समझते हैं और यही नहीं उनमें कुछ तो ऐसे भी हैं, जो हिंदी बोलने में शर्मिंदगी महसूस करते हैं और इसे अपनी नाकामियाबी की वजह भी मानते हैं, परंतु इसके विपरीत आज देश और दुनिया में ऐसे कई लोग हैं जो हिंदी से न केवल प्रेम करते हैं, बल्कि उस पर गर्व करते हैं। हिंदी को देश के तीन चौथाई लोग बोलते व समझते हैं। उन्हीं के प्यार और विश्वास के कारण आज हिंदी, वर्ल्ड लैंग्वेज डेटाबेस के 22वें संस्करण इथोनोलॉज के अनुसार दुनिया की 20 सर्वाधिक बोली जाने वाली भाषाओं में सम्मिलित, तीसरे स्थान पर है। 1980 के दशक में कार्यालयों में जब कंप्यूटरों का आगमन हुआ तो यह शंका होने लगी थी कि अब हिंदी व भारतीय भाषाओं का स्थान अंग्रेजी ले लेगी। परंतु ऐसा कुछ भी नहीं हुआ, भाषा प्रौद्योगिकी ने इतनी तेजी के साथ विकास किया कि आज हम यूनिकोड के माध्यम से कंप्यूटरों पर हिंदी सहित भारत की अन्य भाषाओं में कार्य करने में पूरी तरह सक्षम हैं। सोशल मीडिया ने तो इसको और गति प्रदान की है। आज हिंदी उस मुकाम पर पहुंच गई है जहां इसकी लोकप्रियता और ग्राह्यता को कोई अन्य भाषा चुनौती नहीं दे सकती है। वर्ल्ड इकोनोमिक फोरम ने एक पावर लेंग्वेज इंडेक्स तैयार किया है जिसमें वो भाषाएं सम्मिलित की गई हैं जो वर्ष 2050 तक दुनिया की सबसे शक्तिशाली भाषाएं होंगी, उनमें से एक हिंदी भाषा भी है। इसी हिंदी को हमारे देश में संघ की राजभाषा का दर्जा प्राप्त है। राजभाषा का मतलब सरकारी कामकाज की भाषा से है, जिससे एक आम नागरिक भी सरकार के कामकाज को समझ सके। किसी देश की प्रगति में उसकी राजभाषा का विशेष महत्व होता है।

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान ने राजभाषा हिंदी के महत्त्व को बखूबी समझा है। इसके प्रचार-प्रसार और गृह मंत्रालय, भारत सरकार के राजभाषा विभाग द्वारा निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने हेतु वह निरंतर प्रयत्नशील है। संस्थान में देश के विभिन्न प्रान्तों के अधिकारी/कर्मचारी कार्यरत हैं। जो आपसी वार्तालाप में अधिकांशतया सरल हिंदी का ही प्रयोग करते हैं। जिससे राजभाषा हिंदी के प्रसार-प्रचार के प्रति एक सुखद वातावरण तैयार होता है। संस्थान द्वारा नियमित रूप से राजभाषा हिंदी में किसान व जन-सामान्य उपयोगी विभिन्न प्रकाशन निर्गत किए जा रहे हैं। इसी क्रम में संस्थान की गृह पत्रिका **'पूसा सुरभि'** का **अठारहवां अंक** आपको हस्तगत है। यह पत्रिका संस्थान की कृषि तकनीकियों को देश के दूरस्थ एवं सीमांत क्षेत्रों के किसान व जनसामान्य तक पहुंचाने का प्रयास कर रही है। पिछले अंकों की भांति इस अंक में भी कृषि के विभिन्न विषयों से संबंधित किसानों एवं जन-सामान्य उपयोगी ज्ञानवर्धक लेख एवं संस्थान की राजभाषा गतिविधियां हैं।

पूसा सुरभि पत्रिका के निरंतर प्रकाशन की अनुमति और राजभाषा कार्यान्वयन के लिए कुशल दिशा निर्देशों हेतु संस्थान के निदेशक महोदय एवं अध्यक्ष, राजभाषा कार्यान्वयन समिति डॉ. अशोक कुमार सिंह के प्रति हम कृतज्ञ हैं। इस अंक की सामग्री को मूर्तरूप देने के लिए संपादन मंडल के सदस्य डॉ. दिनेश कुमार, प्रधान वैज्ञानिक तथा श्री राजेंद्र शर्मा, मुख्य तकनीकी अधिकारी के प्रति मैं आभार व्यक्त करता हूं। सुश्री सुनीता, सहायक निदेशक

(राजभाषा), श्रीमती कृति शर्मा, हिंदी अनुवादक एवं श्री अजय कुमार, कार्यालय सहायक (संविदा पर) इन सभी को भी मैं धन्यवाद देता हूं जिनके सहयोग के बिना पत्रिका का संपादन संभव नहीं था। इसके साथ ही पत्रिका हेतु सामग्री उपलब्ध कराने वाले वैज्ञानिकों, तकनीकी, प्रशासनिक कार्मिकों एवं अन्य सहयोगियों, जिनके अथक सहयोग से यह प्रकाशन सफल हुआ, उन सभी के प्रति भी मैं हृदय से आभार व्यक्त करता हूं। यह अंक कैसा लगा? के बारे में आपके बहुमूल्य विचारों एवं पत्रिका को और अधिक आकर्षक व ज्ञानवर्धक बनाने के सुझावों की हमेशा प्रतीक्षा रहेगी।

(केशव देव)
संयुक्त निदेशक (राजभाषा)

विषय सूची

आमुख (iii)
संपादकीय (v)

तकनीकी खंड...

1. अरहर की जैविक खेती एवं फसल सुरक्षा 3
   - अर्चना उदय सिंह, अमित कुमार मौर्य, विन्नी जॉन, रश्मि राघव एवं हेमलता पंत
2. नाशीजीव कीटों का जैविक नियंत्रण 9
   - सचिन सुरेश सुरोशे, राकेश कुमार एवं कीर्ती एम. सी.
3. मशरूम की खेती: एक लाभदायक व्यवसाय 13
   - सुकन्या बरुआ, राजीव कुमार, बी संगीता, सत्यप्रिय, एल मुरलीकृष्णन एवं सुभाश्री साहू
4. जैविक खेती में कम लागत वाली तकनीक 18
   - शिवाधार मिश्र एवं रणबीर सिंह
5. गुणवत्ता युक्त बीजों का रखरखाव एवं भंडारण तकनीकी 24
   - अशोक जायसवाल, ज्ञानेन्द्र सिंह, चंदू सिंह एवं संजीव शर्मा
6. संरक्षित खेती में सूत्रकृमियों का प्रबंधन 29
   - राशिद परवेज़
7. स्वस्थानी कीटनाशक विश्लेषण के लिए पौधों के योग्य बायोसेंसर 32
   - मोनिका कुंडू, शिप्रा, अनंता वशिष्ठ, अच्छेलाल यादव एवं प्रमीला कृष्णन
8. पादप प्रोटीन आइसोलेट्स- प्रोटीन कुपोषण से निपटने का एक माध्यम 35
   - नविता बंसल, विनुथा टी, दुर्गा लक्ष्मी बाई, दिनेश कुमार आर, रामा प्रशात जी, सुनेहा गोस्वामी, रंजीत कुमार रंजन एवं अरुणा त्यागी

विविधा...

1. हरी खाद से फसलों की तबीयत हरी 41
   - संजय कुमार गुप्ता एवं मंजीत सिंह नैन
2. जैविक खेती अपनाएंगे हम स्वर्ग धरा पर लाएंगे 44
   - रेनू आर्य एवं सोनम आर्य
3. तलने के क्षेत्र में नवीन प्रसंस्करण तकनीकें : एक समीक्षा 53
   - शालिनी गौड़ रुद्रा, विद्या राम सागर, अल्का जोशी, प्रिया पाल एवं जीतेंद्र कुमार बैरवा
4. खाद्य एवं पोषण सुरक्षा में दालों की भूमिका 57
   - रणबीर सिंह एवं अचल दास
5. बदलते जलवायु परिवेश में दलहन फसलों की खाद्य सुरक्षा में भूमिका 63
   - संदीप कुमार एवं सीमा श्योराण

6. ग्रामीण कृषि विपणन से ग्रामीण विकास का बदलता परिदृश्य 68
- प्रेम नारायण
7. भारत में कृषि, वैश्विक खाद्य सुरक्षा के लिए चुनौतियां और अवसर 77
- कालीदिंडी उषा
8. कंबाइन हार्वेस्टर का आवश्यक समायोजन और रख रखाव 80
- मुकेश कुमार सिंह
9. प्राकृतिक खेती : उत्पादन की न्यूनतम लागत द्वारा किसानों की शुद्ध आय बढ़ाने में सहायक 84
- नरेन्द्र मोहन सिंह, राजू आर., नित्यश्री एम. एल. एवं अल्का सिंह

राजभाषा खंड...

1. भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान की राजभाषा प्रगति रिपोर्ट (2021-22) 91
2. पुरस्कार व सम्मान 97

तकनीकी खंड...

अरहर की जैविक खेती एवं फसल सुरक्षा

अर्चना उदय सिंह, अमित कुमार मौर्य, विन्नी जॉन, रश्मि राघव एवं हेमलता पंत

सैम हिग्गिनबॉटम कृषि प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान विश्वविद्यालय,
सीएमपी पीजी कालेज, प्रयागराज (उ.प्र.) एवं
सूत्रकृमि विज्ञान संभाग, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

अरहर हमारे देश की प्रमुख दलहनी फसल है जिसको मुख्य रुप से खरीफ के मौसम में उगाया जाता है। दलहनी फसलों में हमारे प्रदेश में चने के बाद अरहर का प्रमुख स्थान है। यह फसल अकेली तथा दूसरी फसलों के साथ भी बोई जाती है। ज्वार, बाजरा, उर्द और कपास, अरहर के साथ बोई जाने वाली प्रमुख फसलें हैं। मुख्य रूप से खाने में इस्तेमाल की जाने वाली दाल के रूप में अरहर को सबसे उत्तम माना जाता है। इसका पौधा सीधा खड़ा व झाड़ीनुमा होता है। जोकि अपनी प्रजाति के अनुसार अल्पकालिक और बारहमासी दोनों ही प्रकार का हो सकता है। बहुत ज्यादा घनी शाखाओं के साथ इस पौधे की ऊंचाई 1-2 मीटर तक हो सकती है और तने का व्यास लगभग 15 सेमी तक हो सकता है। इसकी पत्तियां अंडाकार होती हैं जो कि एकांत क्रम में शाखाओं में लगी होती हैं। इनका रंग गहरा हरा होता है। इसके फूल पीले और लाल रंग के होते हैं। जिनकी लगभग 2-13 सेमी लंबी और 0.5 से 1.7 सेमी चौड़ी फलियां होती हैं। अरहर की दाल में लगभग 20.21 प्रतिशत प्रोटीन पाया जाता है। अरहर की दीर्घकालीन किस्में, मृदा में 200 कि॰ग्रा॰ तक वायुमंडल नाइट्रोजन का स्थिरीकरण कर मृदा उत्पादकता में वृद्धि करती है।

अरहर के पोषक तत्व

अरहर की प्रति 100 ग्राम दाल से ऊर्जा-343 किलो कैलोरी, कार्बोहाइड्रेट 62-78 ग्राम, फाइबर-15 ग्राम, प्रोटीन-21.7 ग्राम, विटामिन जैसे थाइमिन (बी1) 0.643 मि॰ ग्रा॰, रिबोफैविविन (बी2) (16:) 0.187 मि॰ ग्रा॰, नियासिन (बी3) 2.965 मि॰ ग्रा॰ तथा खनिज पदार्थ जैसे कैल्शियम, 130 मि॰ ग्रा॰, आयरन 5.23 मि॰ ग्रा॰, मैग्नेशियम 183 मि॰ ग्रा॰, मैंगनीज 1.791 मि॰ ग्रा॰, फॉस्फोरस 367 मि॰ ग्रा॰, पोटैशियम 1392 मि॰ ग्रा॰, सोडियम 17 मि॰ ग्रा॰, जिंक 2.76 मि॰ ग्रा॰ आदि पोषक तत्व मिलते हैं जो मनुष्य के स्वास्थ्य के लिए लाभकारी है। यह सुगमता से पचने वाली दाल है। अरहर में पाया जाने वाला प्रोटीन अन्य प्रोटीन की तुलना में अच्छा होता है।

अरहर फसल

अरहर के प्रकार

अरहर दाल का व्यावसायिक रूप से उत्पादन किया जाता है। इसका उत्पादन इसकी प्रजाति के आधार पर किया जाता है। जिनमें ये वार्षिक या अर्धवार्षिक फसल के रूप में उगाई जाती है। अपनी प्रजाति के अनुसार अरहर के पौधे चार प्रकार के होते हैं:

(1) बड़े पौधे

(2) लंबी प्रजाति

(3) बौनी किस्में

(4) छोटी झाड़ियों वाली आदि

अरहर का पौधा नम अथवा सूखे जलवायु में उगाने वाली सबसे महत्वपूर्ण खाद्य फसलों में से एक है। इस

फसल का उत्पादन विशेष रूप से सूखे और कम पानी वाली जगहों पर किया जाता है।

जलवायु

अरहर नम अथवा सूखे दोनों ही प्रकार के इलाकों में भली भांति उगाई जा सकती है लेकिन सूखे भागों में सिंचाई की आवश्यकता होती है। फसल की प्रारंभिक अवस्था में पौधों की अच्छी वृद्धि के लिए गर्म अर्थात नम जलवायु की आवश्यकता होती है। बहुत अधिक वर्षा वाले क्षेत्र अरहर की खेती के लिए उत्तम नहीं माने जाते हैं परंतु 75-100 सेमी वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्र में अरहर की फसल उगाई जा सकती है। अरहर सूखे क्षेत्रों में किसानों द्वारा प्राथमिकता से बोई जाती है। असिंचित क्षेत्रों में इसकी खेती लाभदायक हो सकती है क्योंकि गहरी जड़ एवं अधिक तापक्रम की स्थिति में पत्ती मुड़ने के गुण के कारण यह शुष्क क्षेत्रों के लिए उपयुक्त फसल है। महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश, गुजरात, मध्य प्रदेश, कर्नाटक एवं आन्ध्र प्रदेश देश के प्रमुख अरहर उत्पादक राज्य हैं।

भूमि का चयन

अच्छे जलनिकास व उच्च उर्वरता वाली बलुई दोमट भूमि सर्वोत्तम रहती है। खेत में पानी का ठहराव फसल को भारी हानि पहुंचाता है। उचित जल निकास तथा हल्के ढालू खेत अरहर के लिए सर्वोत्तम होते हैं। लवणीय भूमि में इसकी खेती सफलतापूर्वक नहीं की जा सकती है।

खेत की तैयारी

खेत की पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करने के बाद 2-3 जुताई देसी हल या कल्टीवेटर से करके पाटा लगाकर मिट्टी को समतल कर लेना चाहिए। प्रत्येक जुताई के बाद सिंचाई एवं जल निकास की पर्याप्त व्यवस्था आवश्यक है।

जैविक खाद

पोषक तत्वों के आधार पर अरहर के लिए जैविक खाद उपयुक्त माना जाता है फसल को 30 किलो ग्राम नाइट्रोजन/हे. मिलनी चाहिए। जैसे-

- देशी गोबर के खाद में 5-1: नाइट्रोजन होता है अतः 3-6 टन/हे.
- कुक्कुट के खाद में 1.5-2: नाइट्रोजन होता है अतः 1.5-5 टन/हे.
- केंचुआ के खाद में 1-1.5: नाइट्रोजन होता है अतः 2-3 टन/हे.

जैविक खाद का प्रयोग मृदा परीक्षण के उपरांत करना अच्छा होता है। अच्छी उपज लेने के लिए कुछ जैविक उत्पाद का उपयोग करना लाभदायक माना जाता है। जो कि निम्नवत है-

माइक्रो गोल्ड 40 किग्रा या माइक्रो फर्टी सिटी कंपोस्ट, 40 किग्रा तथा माइक्रो नीम 20 किग्रा को बुवाई से पूर्व पहली जुताई के समय जमीन में छिडक कर अच्छी तरह मिला देना चाहिए तथा अन्य 2-3 जुताइयां देशी हल या कल्टीवेटर द्वारा करना चाहिए।

अरहर की मुख्य अनुमोदित किस्में

यू॰ पी॰ ए॰ एस॰ 120

पकने की अवधि 130-140 दिन

औसत पैदावार 16-18 कु॰/हे. है

अरहर-गेहूं फसल चक्र के लिए

जागृति (आई॰ सी॰ पी॰ एल॰ -151)

पकने की अवधि 130-140 दिन

औसत पैदावार 18-20 कु॰/हे.

अरहर-गेहूं फसल चक्र के लिए

बहार

पकने की अवधि 240-250 दिन

औसत पैदावार 20-25 कु॰/हे.

समय व देर से बुवाई (1-20 सितंबर) के लिए

टाइप-21

पकने की अवधि 160-170 दिन

औसत पैदावार 16-20 कु॰/हे. है

अरहर गन्ना फसल चक्र के लिए

टाइप-17 वाली देर से पकने वाली किस्म है, फसल 270 दिन अवधि, पौधा लंबा, बीज मध्यम आकार का तथा हल्का भूरे रंग का, उपज क्षमता 20-25 कु॰/हे. है, इसमें उकठा एवं नर बंध्यता रोग लगता है।

ग्वालियर-3 पछेती किस्म, फसल 240 दिन अवधि, पौधा लंबा व फैलने वाला, ज्वार के साथ मिश्रित खेती के लिए उपयुक्त है, बीज छोटा व हल्के भूरे रंग का, औसत उपज 20-25 कु॰ प्रति हे. है। कुछ अन्य उन्नतशील प्रजातियां और भी हैं जैसे- नरेंद्र अरहर-1, नरेंद्र अरहर-2, आजाद अरहर, अमर पूसा-9, उपास-120, पारस शरद, टाइप-7, प्रभात और पूसा-84 आदि।

बुवाई का समय अरहर के फसल की अगेती बुवाई करना लाभदायक होता है। जिन क्षेत्रों में सिंचाई की समुचित सुविधा प्राप्त हो वहां पर 1-15 जून तक फसल की बुवाई कर देनी चाहिए। वर्षा के पानी पर निर्भर करने वाले क्षेत्रों में बुवाई जुलाई के प्रथम सप्ताह में ही कर देनी चाहिए। क्योंकि बुवाई के समय का प्रभाव सीधा उपज पर पड़ता है। जुलाई के प्रथम सप्ताह के बाद बुवाई करने से उपज में भारी कमी आने की संभावना हो जाती है।

बुवाई की विधि क्षेत्रीय प्रचलन के अनुसार मिश्रित बुवाई खेती के लिए उपयुक्त मानी जाती है, जबकि अरहर की फसल को ज्वार व बाजरा आदि के साथ बोते हैं तब छिटकाव विधि का प्रयोग करना चाहिए। अरहर की फसल को सदैव पंक्तियों में बोना उत्तम होता है, पंक्तियों की दूरी सदैव साथ बोई गई मूंगफली फसल, मक्का, बाजरा, मूंग और उड़द आदि पर निर्भर करती है। प्रतिकूल परिस्थितियों में अनुसंधान के आधार पर पाया गया है कि मेढ़ों पर फसल की बुवाई करने से अधिक उपज प्राप्त होती है।

अरहर की बुवाई

बीज शोधन की विधि

बीज से फैलने वाले रोगों से बचाव के लिए जैविक फफूंदनाशक दवा ट्राईकोडर्मा विरडी 10 मिली. प्रति किग्रा. बीज की दर से उपचारित करें। उर्वरक प्रबंधन के लिए राईजोबियम कल्चर द्वारा भी दलहनी फसलों के बीज को उपचारित करना लाभदायक होता है। 10 किग्रा. अरहर के बीज के लिए राइजोबियम कल्चर का एक पैकेट पर्याप्त होता है। 50 ग्रा. गुड़ या चीनी को 500 मिली लीटर पानी में घोलकर उबाल लें। घोल के ठंडा होने पर उसमें राइजोबियम कल्चर मिला दें। इस कल्चर में 10 किग्रा. बीज डाल कर अच्छी प्रकार मिला लें ताकि प्रत्येक बीज पर कल्चर का लेप चिपक जाए। उपचारित बीजों को छांव में सुखा कर, दूसरे दिन बोया जा सकता है। उपचारित बीज को कभी भी धूप में न सुखाएं व बीज उपचार दोपहर के बाद करें।

दूरी

पंक्ति से पंक्ति

45-60 सेमी. तथा (शीघ्र पकने वाली)

60-75 सेमी. (मध्यम व देर से पकने वाली)

पौध से पौध

10-15 सेमी. (शीघ्र पकने वाली)

15-20 सेमी. (मध्यम व देर से पकने वाली)

बीजदर

12-15 किग्रा. प्रति हे.

सिंचाई

चूंकि अरहर की फसल असिंचित दिशा में बोई जाती है अतः लंबे समय तक वर्षा न होने पर एवं फूल बनने के समय तथा दाना बनते समय फसल में आवश्यकतानुसार सिंचाई करनी चाहिए। उच्च अरहर उत्पादन के लिए खेत में उचित जल निकास का होना प्रथम शर्त है अतः जल निकास की समस्या वाले क्षेत्रों में मेड़ो पर बुआई करना उत्तम रहता है। अगेती प्रजाति वाली फसल की बुवाई करके तथा अन्य प्रजातियों की बुवाई वर्षा के समय में पर्याप्त नमी होने पर करनी चाहिए अगेती फसल में फलियां बनते समय नमी न होने पर अक्टूबर के महीने में सिंचाई अवश्य करें।

खरपतवार नियंत्रण

अरहर में दो निराई, पहली बुवाई के 25-30 दिन बाद तथा दूसरी 45-50 दिन बाद। शीघ्र पकने वाली प्रजातियों में 30 दिन तथा मध्य या देर से पकने वाली प्रजातियों में बुवाई से 40-45 दिन के अंदर खरपतवार नियंत्रण अवश्य करना चाहिए। सामान्यतः बुवाई के 15-20 दिन बाद एक निराई खुरपी द्वारा की जानी चाहिए तथा दूसरी निराई खुरपी से 45-60 दिन बाद करें।

अरहर फसल के मुख्य कीट तथा नियंत्रण

अरहर की फसल में फली बेधक, ताना मक्खी, रस चूसने वाले कीट तथा पत्तियों को खाने वाले कीट आदि 20-100 प्रतिशत तक क्षति पहुंचाते हैं। जैसे-

वयस्क कीट भूरे रंग का होता है। उसके अगले पंखों में दो सफेद धब्बे होते हैं तथा किनारे पर छोटे-2 काले धब्बे होते हैं। पिछले पंख कुछ पीले सफेद रंग के होते हैं। मादा कीट पत्तियों, फलियों और फूलों पर अंडे देती है। पूर्ण विकसित सूंडी हरे रंग की एवं 2 से॰ मी॰ लंबी होती है। यह कीट जल्दी बोई गई किस्म की प्रजातियों को अगस्त से अक्टूबर तक नुकसान पहुंचाता है। यह फूल, फलियों और पत्तियों में जाले बना देता है। फूल और कलियों के अंदर दाने को खाकर नुकसान पहुंचता है। इस कीट से करीब 20-35 प्रतिशत तक पैदावार में कमी आती है।

कीट प्रबंधन

- अरहर की बुवाई सभी किसानों को समय पर करनी चाहिए।
- फेरामेन (फेरोमोन ट्रेप) या लाइट ट्रेप लगाएं।
- पौधों को हिलाकर सूंडी को गिराएं एवं उनकों इकट्ठा करके नष्ट करें।
- खेत में चिड़ियों के बैठने की व्यवस्था करें।
- 5 लीटर देशी गाय का मट्ठा लेकर उसमें 15 चने के बराबर हींग पीसकर घोल दें, इस घोल को बीजों पर डालकर भिगो दें और 2 घंटे तक रखा रहने दें उसके बाद बुवाई करें। यह घोल 1 एकड़ बीज के लिए पर्याप्त है। 5 लीटर देशी गाय के गोमूत्र में बीज भिगोकर उनकी बुवाई करें, ओगरा और दीमक से पौधा सुरक्षित रहेगा। ओगरा या दीमक से बचाव हेतु बोवाई करने से पहले बीजों को कैरोसिन से उपचारित करें।
- 250 मिली नीम, (25 किलो नीम की पत्तियों को अच्छी तरह से पीसकर 50 लीटर पानी में तब तक उबालें जब तक कि 20-25 लीटर पानी न रह जाए, उसके बाद उसे उतारकर छानकर उपयोग करें) को 25 मिली. माइको जाइम के साथ अच्छी तरह मिलाकर उपयोग करें एवं सुपर 1 गोल्ड मैग्नीशियम 1 किग्रा 45 रु. प्रति बैग 200 लीटर पानी में घोलकर माइको जाइम के साथ मिलाकर अच्छी तरह से छिड़काव करें।
- 500 ग्राम लहसुन, 500 ग्राम तीखी हरी मिर्च लेकर बारीक पीसकर 150-200 लीटर पानी में घोलकर फसलों पर छिड़काव करें इससे रस चूसक कीड़े नियंत्रित होंगे।
- बेहया के पत्ते 3 किलो एवं धतूरे के फल तोड़कर 33 लीटर पानी में उबालें, आधा पानी शेष बचने पर उसे छान लें, इस पानी में 500 ग्राम चने डालकर उबालें। ये चने चूहों के बिलों के पास शाम के समय डाल दें, इससे चूहों से निजात मिलेगी।
- निंबोली शत 5 प्रतिशत का छिड़काव करें। नीम तेल या करंज तेल 10-15 मिली. 1 मिली.

चिपचिपा पदार्थ (जैसे सेन्डोहविट टिपाल) प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

लाइट ट्रेप

अरहर की फसल में लगने वाले प्रमुख रोग और उनका रोकथाम

अरहर फसल में बीमारियों द्वारा किए गए नुकसान का प्रमुख स्थान है तथा लगने वाली बीमारियों से 10-50 प्रतिशत तक उपज कम हो जाती है।

अरहर का उकठा या म्लानि रोग

इस रोग का कारक फ्यूजेरियम ऑक्सीस्पोरम नामक फफूंद है, पौधे एक माह के बाद किसी भी अवस्था में इस रोग से संक्रमित हो सकते हैं, परंतु जिस समय फूल, फल व फली की अवस्था में होते है, इस रोग का प्रकोप अधिक होता है। इस रोग का मुख्य लक्षण पत्तियों का हल्का पीला पड़कर मुरझाना एवं पौधे का सूख जाना है। खेत में ऐसे सूखे पौधे समूह में जगह-जगह दिखाई पड़ते हैं। रोग ग्रसित पौधे से मुख्य तने की सतह पर जमीन से ऊपर की ओर जाती हुई भूरे रंग की धारियां दिखती है। तने के इस भाग का छिलका हटाने पर नीचे भूरे रंग की धारी दिखती है, मुख्यतः यह एक मृदा जनित रोग है लेकिन इसका फैलाव बीज द्वारा भी पाया जाता है।

रोकथाम

अरहर की बुवाई के समय ट्राइकोडर्मा विरिडी से बीजोपचार 5 कि॰ ग्रा॰ प्रति हे0 कि दर से खाद के साथ डालने से उकठा जैसी बीमारियों से बचाव हो जाता है। इस बीमारी से बचने के लिए रोग रोधी जातियां बोनी चाहिए जैसे- नरेंद्र, एन॰ पी॰ (डब्लू॰ आर॰) 15, शारदा, अरहर-2, सी-11, जवाहर के. एम.-7, बी. एस. एम. आर.-853 और प्रभात आदि बोएं।

अरहर का उकठा रोग

उकठा रोग का आंतरिक चित्र

अरहर के बांझ व चितेरी रोग

यह रोग एक विषाणु द्वारा होता है जिसे अरहर के बांझ रोग नाम से जाना जाता है। इसके संचरण आर्मी नामक सूक्ष्म कीट द्वारा होता है, इस रोग का प्रमुख लक्षण यह है कि पौधा बौना, झुरमुटी आकार एवं हल्के रंग का हो जाता है, पत्तियों का आकार सामान्य से काफी छोटा एवं पतला हो जाता है तथा उन पर अनियमित आकार की हल्की हरी एवं गहरी चित्तियां पड़ जाती हैं। रोग ग्रस्त पौधे लंबाई में छोटे रह जाते हैं तथा इनमें अनेक शाखाएं निकल आती हैं, ग्रसित पौधे में फूल एवं फलियां नहीं लगती, इसलिए इसे बांझ रोग कहते हैं।

रोकथाम

इस बीमारी से बचने के लिए रोग रोधी जातियां बोनी चाहिए जैसे- बाहर, ए॰ वाई॰ 3-सी, बसंत, एन॰ पी॰ आदि। फसल की कटाई के बाद रोगी पौधे को काट कर जला दें।

आल्टरनेरिया या अंगमारी रोग का कारक आल्टरनेरिया आल्टरनाटा एवं आल्टरनेरिया टेंयुसीमा नामक फफूंद है, अरहर की पत्तियों पर छोटे-छोटे गोलाकार भूरे धब्बे पाया जाना इस रोग के लक्षण हैं, ये धब्बे आपस में मिलकर बड़े धब्बे के रूप में परिवर्तित हो जाते है, जिससे पत्तियां

झुलस कर झड़ जाती हैं और शाखाएं सूख जाती हैं। जब इसका प्रकोप अधिक होता है तो इसके धब्बे फली पर भी पाए जाते हैं।

रोकथाम

इस बीमारी से बचने के लिए रोग रोधी जातियां बोनी चाहिए जैसे- बाहर, बसंत, सी-11, जवाहर के. एम.-7, एन॰ पी॰ आदि। गौमूत्र और छाछ का 10 प्रतिशत घोल बनाकर 10 दिन के अंदर पर छिड़काव करें।

अरहर का आल्टरनेरिया या अंगमारी रोग

फाईटोप्थोरा अंगमारी

यह एक फफूंद है जिसे फाईटोप्थोरा इनफेस्टैन्स के नाम से जाना जाता है, यह केवल अरहर तथा संबंधित कुल के पौधों को ही संक्रमित करता है। यह मृदा जनित रोग है, इस बीमारी से अरहर के पौधे का पत्ती तथा तना ग्रसित होता है न की जड़। इस बीमारी द्वारा 1-7 सप्ताह तक के पौधे रोग ग्रस्त होते हैं। यह बीमारी शीघ्र पकने वाली अरहर की प्रजातियों में मध्यम तथा देर से पकने वाली प्रजातियों की अपेक्षा अधिक लगती है। खेत में ज्यादा पानी भरना इस बीमारी का मुख्य कारण है इसलिए रोग का संक्रमण खेत के निचले भाग में अधिक होता है जहां जल निकास का उचित प्रबंध न होने के कारण जल भराव अधिक होता है।

रोकथाम

अरहर के खेतों मे जल निकास का उचित प्रबंध रखें तथा बुवाई मेंढ़ों पर करें तथा अरहर की बुवाई जून के मध्य में करें।

कटाई

अरहर की जाति के अनुसार फसल अवधि 120-300 दिन तक पक कर तैयार हो जाती है, जल्दी बुवाई करने वाली फसल नवंबर - दिसंबर व देर में पकने वाली फसल मार्च - अप्रैल में काटी जाती है। फसल को अच्छी प्रकार सुखाकर डंडों से मड़ाई कर लेते हैं या इसके लिए पुलमैन थ्रेसर भी काम में लाया जाता है।

उपज

जातियों के अनुसार दाने की उपज 15-35 कु॰ प्रति हे. तक प्राप्त हो जाती है, लकड़ी प्रति हैक्टेयर 50-60 कु॰ तक प्राप्त हो जाती है।

भंडारण

दाने को अच्छी प्रकार सुखाकर जब उसमे नमी की प्रतिशत 10-12 प्रतिशत रह जाए तब इसे भंडार में रखना चाहिए।

नाशीजीव कीटों का जैविक नियंत्रण

सचिन सुरेश सुरोशे[1], राकेश कुमार[2] एवं कीर्ती एम. सी[1].

कीट विज्ञान संभाग

[1]भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110 012

[2]भा.कृ.अनु.प.-राष्ट्रीय समेकित नाशीजीव प्रबंधन अनुसंधान केंद्र, नई दिल्ली-110012

एक जीव का उपयोग करके दूसरे जीव की संख्या/आबादी को कम करना जैविक नियंत्रण कहलाता है। जैविक नियंत्रण का उपयोग सभी प्रकार के नाशीजीवों के लिए किया जा सकता है, जिनमें पौधों के रोगों एवं खरपतवार के साथ-साथ कीड़े भी शामिल हैं, लेकिन प्रत्येक नाशीजीव के प्रयोग के लिए विधियां, घटक तथा उपयोग अलग-अलग होता है।

हानिकारक कीट वह प्रजाति है जो हमारे संसाधनों पर आक्रमण करता है एवं महत्त्वपूर्ण क्षति पहुंचाता है। हाल के दिनों में यह देखा गया है कि पूर्ववर्ती में जो नाशीजीव कम महत्व रखते थे आज वो प्रमुख नाशीजीव बनकर उभरे हैं जिसका मुख्य कारण मित्रजीवों की घटती संख्या है। ये मित्रजीव प्रभावी नाशीजीवों के घनत्व को कम करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। मित्रजीव मुख्यत: तीन प्रकार की श्रेणियों में पाए जाते हैं जैसे- परभक्षी, परजीवी एवं रोगाणु।

परभक्षी- यह अपने शिकार से आकार में बड़े होते हैं और सामान्यत: छोटे कीड़ों का भक्षण करते हैं। इसके अवयस्क एवं वयस्क दोनों ही छोटे कीटों जैसे- चेंपा, सफ़ेद मक्खी, थ्रिप्स, जैसिड इत्यादि का भक्षण करते हैं। मित्रकीट एवं अन्य आर्थ्रोपोड परभक्षियों को सामान्यतः जैविक नियंत्रण में उपयोग किया जाता है क्योंकि ये छोटे समूह की प्रजातियों का भक्षण करते हैं। प्रमुख कीट शिकारियों में

लेडी बीटल मकड़ी क्राईसोपा

सिरफिड

बग्स सुंडी को खाते हुए

लेडी बीटल, ग्राउंड बीटल, रोव बीटल, प्रेयिंग मेंटिस, बग्स, क्राईसोपा, सिरफिड, मकड़ियां और माइट इत्यादि के अलावा विभिन्न प्रकार के पक्षी भी नाशीजीवों का शिकार करते हैं।

परजीवी- यह एक विशेष तरह के परजीवी होते हैं जिसे पैरासिटॉइड्स कहा जाता है। यह परजीवी अपने अंडे पोषित कीट के बाहर (वाह्य-परजीवी) अथवा पोषित कीट के अंदर (अंत:परजीवी) देते हैं। इसमें परजीवी की अवयस्क अवस्था अपने पोषित कीट को मार देती है। यह परजीवी अलग-अलग कीट के लिए अलग-अलग होते हैं इसीलिए इन्हें विशेष परजीवी कहा जाता है। इसमें वयस्क आमतौर पर मुक्त रहते हैं, तथा वे अन्य संसाधनों जैसे कि हनीड्यू, पौधे के रस या पराग पर जीवन यापन करते हैं। यह परजीवी विभिन्न प्रकार के होते हैं जैसे- अंडा परजीवी,

अंडा परजीवी सुंडी परजीवी मिलीबग का परजीवी

सुंडी परजीवी, सुंडी-प्यूपा परजीवी, मिलीबग का परजीवी इत्यादि।

फूलगोभी की तितली पर परजीवी का प्यूपा

सुंडी परजीवी सुंडी से निकलते हुए

रोगाणु - अन्य जीवों और पौधों की तरह कीड़े भी जीवाणु, कवक, विषाणु और प्रोटोजोआ से संक्रमित होते हैं एवं उनकी बीमारी का कारण बनते हैं। ये रोग कीटों के भक्षण और वृद्धि की दर को कम कर सकते हैं या उनके प्रजनन की वृद्धि को रोक सकते हैं अथवा उन्हें मार सकते हैं। यह रोगाणु विभिन्न प्रकार के होते हैं जैसे *बुवेरिआ, मेटाराईजियम, बेसिलस* इत्यादि। इसके अलावा, कीटों पर कुछ प्रजातियों के सूत्रकृमि का भी प्रकोप होता है।

लोकस्ट पर मेटाराईजियम

स्पोडोप्टेरा के सुंडी पर *मेटाराईजियम*

स्पोडोप्टेरा के प्यूपा पर *बुवेरिआ*

जैविक नियंत्रण के प्रकार:

प्रक्षेत्र स्तर पर जैविक नियंत्रण के उपयोग करने के तीन दृष्टिकोण हैं: परिचय, संरक्षण और ऑग्मेंटेशन

परिचय

इस प्रक्रिया में जैव-एजेंट की एक नई प्रजाति को अपने पोषित के विरुद्ध, स्थापना के लिए एक प्रक्षेत्र में छोड़ा जाता है। यह उसकी प्रभावकारिता के लिए पूरी तरह से प्रयोगशाला परीक्षण एवं क्षेत्र परीक्षण के बाद ही किया जाता है। इस विधि में कीट, संभावित मित्रजीव और उनके जीवन चक्र में व्यापक शोध की आवश्यकता होती है। उपयुक्त मित्रजीव पाए जाने के बाद, अध्ययन एवं संग्रह करके निश्चित रूप से क्वारेंटीन से गुजरना होता है जिससे रोगाणु या परपोषी को नष्ट किया जा सके। इसके पश्चात मित्रजीवों को सावधानीपूर्वक छोड़ा जाता है, मित्रजीव एवं पोषित का जीवन चक्र के प्रति ऐसे स्थान जहां पोषित कीट की पर्याप्त संख्या हो एवं छोड़े हुए मित्रजीव को कोई बाधा उत्पन्न न हो आवश्यक होता है। हालांकि यह प्रक्रिया लंबी और जटिल है, जब यह सफल होता है, तो परिणाम प्रभावशाली और स्थायी हो सकते हैं।

संरक्षण

यह जैविक नियंत्रण का सबसे महत्वपूर्ण घटक है और कीट नियंत्रण में एक प्रमुख भूमिका निभाता है। इस प्रक्रिया में, प्रकृति में मौजूद मित्रजीव को मारे जाने से बचाया जाता है। प्राकृतिक शत्रुओं से बचाव के लिए आवश्यक विभिन्न प्रथाएं निम्नानुसार हैं:

- खेती के दिनों में, रेडियो और टीवी के माध्यम से किसानों को शिक्षित करना, कीटों और मित्रजीव को अलग करना और बिना छिड़काव वाले प्रक्षेत्र में मित्रजीव को छोड़ना।
- परजीवी के अंडे का संग्रह कर उन्हें बांस के पिंजरे सह पक्षी बसेरा पर रखना।
- रासायनिक छिड़काव को अंतिम उपाय के रूप में अपनाया जाना चाहिए और वह भी कीट रक्षकों के अनुपात को देखने के बाद।
- व्यापक स्पेक्ट्रम कीटनाशकों के उपयोग से बचा जाना चाहिए।
- केवल चयनात्मक और अपेक्षाकृत पर्यावरण के अनुकूल कीटनाशकों का उपयोग किया जाना चाहिए।
- जहां तक संभव हो कीटनाशकों को पट्टी या स्थान विशेष पर प्रयोग करें।
- कीट के हमले के चरम मौसम से बचने के लिए बुवाई और कटाई के समय का समायोजन करना चाहिए।
- कीटों को फंसाने और मित्रजीवों की वृद्धि के लिए फसल की वास्तविक बुवाई से पहले मुख्य खेतों की सीमाओं पर कीट आकर्षक फसल उगाना।

परभक्षी के सुषुप्तावस्था के दौरान पौधे उन्हें आश्रय देते हुए

मित्र जीवों के लिए पराग की पूर्ती के लिए फूलगोभी के साथ धनिया को लगाना

कपास में मक्का की अंतर फसल
मित्रजीवों के पराग के लिए

पक्षियों के लिए बसेरा उनके कीड़ों के भक्षण में मदद के लिए

- फसल चक्र और अंतर फसल भी मित्रजीवों के संरक्षण में मदद करते हैं।
- कीटनाशकों की अनुशंसित खुराक एवं मात्रा का उपयोग किया जाना चाहिए।

ऑग्मेंटेशन

इस विधि में पहले से मौजूद मित्रजीव की संख्या उस क्षेत्र में या तो प्रयोगशाला में पैदा किए हुए या उसी प्रजाति को खेत से एकत्रित किए हुए को उस क्षेत्रफल में नाशीजीव को कम करने के लिए किया जाता है। इसे आगे दो प्रकारों में विभाजित किया गया है अर्थात इनोक्युलेटिव रिलीज़ और इनुडेटिव रिलीज़

इनोक्युलेटिव रिलीज़

इस तरह के जैविक नियंत्रण में छोड़े हुए मित्रजीवों की संतानों द्वारा नाशीजीवों का नियंत्रण होता है। यह विशेष रूप से वार्षिक फसलों में हानिकारक कीटों के नियंत्रण में प्रयोग होता है जिसमें कीट के नियंत्रण को बनाए रखने के लिए मित्रजीवों को नियमित रूप से पुन: प्रस्तुत करने की आवश्यकता होती है। यूरोप में कीट परजीवी और परभक्षियों का मौसम के अनुसार ग्रीनहाउस में इनोक्युलेटिव से जैविक नियंत्रण के लिए एक अत्यधिक सफल रणनीति पाई गई। ग्रीनहाउस में यह तकनीक कीटों और रासायनिकों की बढ़ती लागतों तथा कीटनाशकों के प्रति कीटों की प्रतिरोधक क्षमता विकसित होने के कारण उत्पादकों द्वारा इस रणनीति को अपनाया गया था।

यह तकनीक भारतीय किसानों द्वारा भी अपनायी गई है क्योंकि ग्रीन हॉउसों में कई नाशीजीवों द्वारा

रासायनिकों के प्रति प्रतिरोधकता में वृद्धि तथा रासायनिक नियंत्रण में अधिक लागत का होना था। यह कार्यक्रम विशेषकर ग्रीन हाउस परजीवी इन्कर्सिया फॉरमोसा के लिए बनाया गया जो कि सफ़ेद मक्खी तथा परभक्षी *फाइटोस्यूलस परसिमिलस* का दो स्पॉट वाली माइट के लिए किया गया। वर्षों के बाद, अतिरिक्त मित्रजीवों की आवश्यकतानुसार नाशीजीवों के नियंत्रण जैसे थ्रिप्स, पर्णसुरंगक, माहु, सुंडी एवं इनके अलावा सफ़ेद मक्खियों के लिए जोड़ा गया। इस समय यूरोप में जैविक नियंत्रण की लागत रासायनिक नियंत्रण की लागत से बहुत कम है। किसानों को प्रसार सलाहकारों, विशेष पत्रिकाओं और उत्पादकों के अध्ययन समूहों के नेटवर्क के माध्यम से कार्यक्रम के कार्यान्वयन, नए विकास और नए प्राकृतिक दुश्मनों के बारे में बताया जाता है।

इननडेटिव रिलीज़

इस विधि में छोड़े हुए मित्रजीवों द्वारा स्वतः ही नियंत्रण होता है इसमें जैवकारक को रासायनिकों की तरह उपयोग करके नाशीजीवों की संख्या को नियंत्रित किया जा सकता है। बहुतायत में उपलब्ध कीट रोगाणु सांद्रण को इननडेटिव माध्यम से प्रयोग किया जाता है। जीवाणु *बेसिलस थ्यूरीजिऐंसिस* आधारित उत्पाद को अच्छी तरह से जैव कीटनाशी के रुप में जाना जाता है मित्र सूत्रकृमि एक जीवित मित्रजीव का उदाहरण है जोकि इननडेटिव प्रकार से छोड़ा जाता है। ये सूत्रकृमि या तो मिट्टी अथवा मिट्टी की सतह से अपने पोषित के अंदर जाते हैं तथा तेजी से उस पर आक्रमण करते हैं, एक बार अंदर जाने के बाद ये सहजीवी छोड़ते हैं जो पोषित के अंदर अपनी संख्या बढ़ाते हैं तथा पोषित को मार देते हैं। तत्पश्चात सन्युग्मन के उपरांत अपनी संख्या बढ़ाते हैं। एक या दो सप्ताह बाद शलभ सूत्रकृमि अपने कीट शव से बाहर निकलकर नए पोषित की तरफ जाते हैं। सूत्रकृमि सूखे, पराबैंगनी किरणों एवं अधिक तापमान के प्रति संवेदनशील होते हैं। ये जमीन के अंदर या जमीन पर रहने वाले या अन्य संरक्षित वातावरण में रहने वाले कीटों के विरुद्ध अत्यधिक लाभदायक होते हैं। इनकी सफलता के लिए आवश्यक आर्द्रता एवं तापमान लगभग 53°से. से 86°से. होना चाहिए।

प्रक्षेत्र में मित्रकीट एवं माइट मित्रकीट का इननडेटिव रिलीज़ अभी भी महंगा है। क्योंकि आवश्यक संख्या में जीवित मित्रजीव का परिवहन पर व्यय, उनका पालन तथा भंडारण में अधिक लागत आती है। हालांकि मित्रजीवों के लिए कृत्रिम भोजन तथा अन्य दृष्टिकोण व्यापारिक उत्पादन के लिए लागत को कम करने में मदद करेंगे।

आलस्य मनुष्य का सबसे बड़ा शत्रु है और उद्यम सबसे बड़ा मित्र, जिसके साथ रहने वाला कभी दुखी नहीं होता।

- भर्तृहरि

मशरूम की खेती: एक लाभदायक व्यवसाय

सुकन्या बरुआ, राजीव कुमार, बी संगीता, सत्यप्रिय, एल मुरलीकृष्णन एवं सुभाश्री साहू

कृषि प्रसार संभाग

भा.कृ.अनु.प.- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110012

भूमिका:

मशरूम की खेती आर्थिक, पोषण, औषधीय योगदान और आजीविका को सीधे सुधारने वाला व्यवसाय है। हालांकि, यह ध्यान रखना जरूरी है कि कुछ मशरूम जहरीले होते हैं और वह शरीर के लिए घातक हो सकते हैं, अतः उन प्रजातियों की पहचान करने में अत्यधिक सावधानी की आवश्यकता रखनी पड़ती है जिन्हें भोजन के रूप में उपयोग किया जाता है।

मशरूम की खेती गरीबों के लिए उपज के साथ साथ पौष्टिक भोजन, आय और आजीविका का एक महत्पूर्ण स्रोत बनाई जा सकती है। चूंकि इसकी खेती के लिए भूमि की आवश्यकता नहीं है, इसलिए मशरूम की खेती ग्रामीण किसानों और शहर के निकटतम निवासियों दोनों के लिए एक आकर्षक खेती हो सकती है। लघु-स्तरीय स्तर पर इसकी खेती के लिए अत्यधिक पूंजी की आवश्यकता नहीं होती है और मशरूम सब्सट्रेट (खाद) किसी भी कृषि अवशेष से तैयार किया जा सकता है और किसी अस्थायी स्वच्छ स्थान जैसे मिट्टी का घर आदि में, अंशकालिक समय देकर बहुत कम रखरखाव में किया जा सकता है।

मशरूम के पोषण लाभ:

मशरूम विटामिन बी, सी और डी का एक बहुत अच्छा स्रोत है, जिसमें नियासिन, राइबोफैविविन, थियामीन, फोलेट, पोटेशियम, फास्फोरस, कैल्शियम, मैग्नीशियम, लोहा और तांबा सहित विभिन्न खनिज पाए जाते हैं। यह कार्बोहाइड्रेट, वसा और अल्प मात्रा में फाइबर भी प्रदान करता हैं, इसमें कोई स्टार्च नहीं पाए जाते। मशरूम के अन्य स्वास्थ्य लाभों में यह उच्च कोलेस्ट्रॉल स्तर, कैंसर और मधुमेह के खतरा को कम करता है। यह वजन घटाने में और शारीरिक प्रतिरक्षा प्रणाली की शक्ति को बढ़ाने में भी मदद करता है।

उत्पादन की प्रौद्योगिकी:

मशरूम के उत्पादन की पूरी प्रक्रिया निम्न चरणों में विभाजित की जा सकती हैः

(I) स्पॉन (मशरूम का बीज)।

(II) स्पॉलिंग (मशरूम का बीज के उत्पादन की विभिन्न विधि)।

(III) खाद तैयार करने की विधि।

(IV) मशरूम के बीज बोने की विधि।

(V) केसिंग (आवरण का चढ़ाना)।

(VI) फ्रुइटिंग (फल का निकलना आरंभ होना)।

(I) स्पॉन (मशरूम का बीज)

स्पॉन (मशरूम का बीज) का उत्पादन मशरूम के फ्रूटींग या स्टॉक्स से स्टेराइल वातावरण के अंदर प्राप्त किया जाता है। मशरूम स्टॉक्स का उत्पादन प्रयोगशाला में या अन्य अच्छे स्रोतों से प्राप्त किया जाता है। मशरूम के बीज को मुख्य रूप से विदेशी स्रोतों सहित विभिन्न स्थानों से आयात किया जाता है जोकि भारतीय बीज की तुलना में अधिक उपज देती हैं। उच्च उपज और लंबे समय तक भंडारण के अलावा अच्छी स्वाद, बनावट और आकार के लिए स्पॉन की अच्छी गुणवत्ता का होना जरुरी है।

(II) स्पानिंग (मशरूम का बीज के उत्पादन की विभिन्न विधि)

खाद के साथ स्पॉन (मशरूम का बीज) के मिश्रण की प्रक्रिया को स्पानिंग कहा जाता है। स्पानिंग के लिए

अलग-अलग तरीके नीचे दिए गए हैं।

(1) स्पॉट स्पॉनिंग: इस विधि में स्पॉन की गांठ को 5 सेमी गहरे गड्ढे में लगाए जाते हैं जोकि 20-25 सेमी गहरे गड्ढे में खाद देकर तैयार किया जाता है फिर उसे खाद से ढक दिया जाता है।

(2) भूतल स्पॉनिंग: इस विधि में स्पॉन को खाद के ऊपरी परत में समान रूप से फैला दिया जाता है और फिर 3-5 सेमी की गहराई तक खाद के साथ मिलाया जाता है। फिर इस मिश्रण को खाद की एक पतली परत के साथ ढक किया जाता है।

(3) परत स्पॉनिंग: इस विधि में स्पॉन और खाद की लगभग 3-5 परतें तैयार की जाती हैं जो फिर से खाद की एक पतली परत के साथ ढक दी जाती हैं जैसे कि भूतल स्पॉनिंग में की गई थी।

(III) खाद तैयार करने की विधि

सब्सट्रेट (खाद) जिस पर मशरूम का उत्पादन होता है, मुख्य रूप से पौधे के अवशेष (जैसे अनाज का पुआल/ गन्ना का अवशेष आदि), लवण (यूरिया, सुपरफॉस्फेट/ जिप्सम आदि), पूरक (चावल का चोकर/ गेहूं की भूसी आदि) और पानी के मिश्रण से तैयार किया जाता है। 01 किलोग्राम मशरूम के उत्पादन करने के लिए, 220 ग्राम शुष्क सब्सट्रेट की आवश्यकता होती है। यह सलाह दी जाती है कि एक टन खाद में 6.6 किलोग्राम नाइट्रोजन, 2.0 किलोग्राम फॉस्फेट और 5.0 किलोग्राम पोटेशियम (एन: पी: के- 33:10: 25) जो 1.98 % नाइट्रोजन, 0.62 % फॉस्फेट और 1.5% पोटेशियम होना चाहिए। अच्छे सब्सट्रेट के लिए कार्बन और नाइट्रोजन का अनुपात स्टाकिंग के समय 25-30:1 और अंत में 16-17:1 होना चाहिए।

क) खाद उत्पादन की लघु विधि

खाद तैयार करने की इस लघु विधि के पहले चरण के दौरान, धान की पुआल को परतों में बिछा दिया जाता है और उर्वरक, गेहूं का भूसा, व्यर्थ गुड़ (मोलासेस) आदि के साथ मिला कर परत दर परत तैयार कर पर्याप्त मात्रा में पानी दिया जाता है। स्टैक लगभग 5 फीट ऊंची, 5 फीट चौड़ी और किसी भी लंबाई के लकड़ी के तख्तों की सहायता से बनाया जाता है। दूसरे दिन स्टैक पर रखे मिश्रण को फिर से ऊपर नीचे कर पानी देकर मिला दिया जाता है। चौथे दिन जिप्सम और पानी मिला कर छिड़काव किया जाता है। दूसरी बार स्टैक पर रखे मिश्रण को फिर से ऊपर नीचे कर मिला दिया जाता है। तीसरे और अंतिम बार बारह दिन के बाद फिर से ऊपर नीचे कर मिलाया जाता है। तैयार खाद का रंग गहरे भूरे और एक तेज गंध का उत्सर्जन होना चाहिए। खाद में से अमोनिया, कीड़े, नेमाटोड का प्रकोप नहीं रहना चाहिए।

खाद तैयार करने का दूसरा चरण पाश्चुराइजेशन का होता है। माइक्रोब के उपस्थिति में किण्वन प्रक्रिया के परिणामस्वरूप तैयार खाद को अवांछनीय रोगाणुओं और प्रतिद्वंदियों को मारने और अमोनिया को माइक्रोबियल प्रोटीन में परिवर्तित करने के लिए पाश्चुराइज किया जाता है। पूरी प्रक्रिया एक कमरे के अंदर होती है जहां 60 डिग्री सेल्सियस का तापमान 4 घंटे तक बनाए रखा जाता है। अंत में प्राप्त खाद की संरचना दानेदार होती है जिसमें 70% नमी और पीएच 7.5 होना चाहिए। यह गहरे भूरे रंग, खराब, अमोनिया, कीड़े और नेमैटोड से मुक्त होना चाहिए। प्रक्रिया पूरी होने के बाद, सब्सट्रेट को 25 डिग्री सेल्सियस तक ठंडा किया जाता है।

ख) खाद उत्पादन की लंबी विधि

कंपोस्टिंग (खाद तैयार करना) की लंबी पद्धति आमतौर पर उन क्षेत्रों में प्रचलित होती है जहां वाष्प से पाश्चुराइजेशन की सुविधाएं उपलब्ध नहीं होती हैं। इस पद्धति के पहले चरण में सब्सट्रेट (खाद) को छः दिन बाद ऊपर नीचे कर मिश्रित किया जाता है। दूसरी बार खाद को मिश्रित 10 दिन बाद, तीसरी बार 13 दिन के बाद और इसी समय जिप्सम को भी मिलाया जाता है। चौथी, पांचवीं और छठी मिश्रण सोलहवीं, उन्नीसवीं और बीसवें दिन पर की जाती है। पच्चीसवें दिन पर सातवीं बार और इसी समय 10% बीएचसी (125 ग्राम) मिलाना और आठवें बार अट्ठाइस दिन में मिश्रित किया जाता है जिसके बाद यह जांच की जाती है कि खाद में मौजूद अमोनिया की कोई गंध मौजूद है या नहीं।

(iv) मशरूम के बीज बोने की विधि

स्पॉनिंग प्रक्रिया खत्म हो जाने के बाद, लगभग 20-30 किलोग्राम मिश्रित स्पॉन और खाद को पॉलिथीन बैग में भर दिया जाता है जिसका आकार 90 x 90 सेंटीमीटर क्षेत्रफल, 150 गज एवं मोटी पॉलिथीन हो। इस पॉलीथीन बैग को अलमारी की रेक (आकार 1x½ मी.) में रख दिया जाता है। स्पान में फंगल का संक्रमण खत्म होने में लगभग दो सप्ताह (12-14 दिन) लग जाते हैं। पॉलिथीन में मिश्रित स्पॉन और खाद जहां पर रखा है वहां का तापमान लगभग 23 ± 2 लगातार बनाए रखते हैं। इससे अधिक तापमान पर स्पॉन से मशरूम का अच्छी तरह से अंकुरित और इससे कम तापमान पर धीमी गति से अंकुरित होती है। सापेक्षिक आर्द्रता लगभग 90% और सामान्य से अधिक CO_2 सघनता अंकुरण के लिए फायदेमंद होती है।

(V) केसिंग (आवरण का चढ़ाना)

खाद की परत पर स्पॉन को फैला देने के बाद 3-4 सेमी मिट्टी की एक परत (आवरण) से ढक दिया जाता है। ढकने वाली मिट्टी की गुणवत्ता अधिक छिद्र वाली, पानी को जमा कर रखने की क्षमता वाली और इसका क्षारीय (pH) मात्रा 7-7.5 होना चाहिए। पीट मॉस (दलदली काई), जिसे सबसे अच्छा आवरण सामग्री माना जाता है जोकि भारत में उपलब्ध नहीं है। इसे दोमट मिट्टी और रेत (4:1) का मिश्रण या गोबर खाद और दोमट मिट्टी (1:1), मिलाया गया खाद 2-3 वर्षीय पुराना या रेत और चूने से तैयार किया जाता है।

आवरण वाली मिट्टी को उपयोग में लाने से पहले इसका गुणवत्ता (एक निश्चित तापमान (66-77 डिग्री सेल्सियस) पर 7-8 घंटा गरम करना और फिर ठंडा करना), फोर्मलडीहाइड (2%) और बेभिसटिन (75 पीपीएम) को मिश्रित करना या स्टीम स्टेरिलाइजड किया जाना चाहिए। इस सामग्री को आवरण के लिए उपयोग करने से पहले कम से कम 15 दिन पहले सारी प्रक्रिया कर लेनी चाहिए। आवरण के बाद कमरे का तापमान 23-28 डिग्री सेल्सियस और सापेक्ष आर्द्रता 85-90% तक 8-10 दिनों तक बनाए रखा जाता है। इस चरण में प्रजनन की वृद्धि के लिए निम्न CO2 सघनता जरूरी है।

(vi) फ्रुइटिंग (फल का निकलना आरंभ होना)

अनुकूलित पर्यावरणीय स्थितियों अर्थात तापमान शुरू में 23 ± 2 डिग्री सेल्सियस तक एक सप्ताह और फिर 16 ± 2 डिग्री सेल्सियस, नमी बनाए रखना (आवरण परत को प्रति दिन 2-3 दिन के बाद हल्के पानी का छिड़काव करना), आर्द्रता (85% से ऊपर), उचित हवा का स्त्रोत और कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा (0.08-0.15 %) होना चाहिए। प्रांरभ में फलों का आकार पिन के रूप में प्रकट होते हैं और धीरे-धीरे यह बढ़ कर बटन के आकार में विकसित हो जाते हैं।

(vii) कटाई और पैदावार

जब मशरूम बटन के आकार का हो जाता है तब ऐसे प्रयोग में लाने के लिए काट लिया जाता है। मशरूम के बटन का ऊपरी हिस्सा का माप 2.5 से 4 सेंटीमीटर होना चाहिए। पहला प्रयोग में लाने लायक मशरूम लगभग आवरण के तीन सप्ताह के बाद कटाई करने लायक हो जाता है। आवरण मिट्टी को बिना खिसकाए मशरूम को हल्का घुमाकर कटाई कर ली जाती है। एक बार फसल कटाई पूरी हो जाने पर कुछ अंतराल के बाद ताजा अनुकूलित आवरण से स्पान और खाद को ढक दिया जाता है और उसके बाद पानी छिड़काव किया जाता है।

लगभग 10-14 किग्रा ताजा मशरूम प्रति 100 किलो ताजा खाद से दो महीने में प्राप्त किया जा सकता है। अनुकीलित परिस्थितियों में खाद तैयार करने के लिए इस्तेमाल की जाने वाली लघु पद्धति से अधिक पैदावार होती है (15-20 किलो प्रति 100 कि.ग्रा। कंपोस्ट)।

(viii) फसल प्रबंधन के बाद

फसल प्रबंधन के बाद, पैकिंग और भंडारण की विधि निम्नलिखित हैः

(A) अल्पावधि भंडारण

बटन मशरूम अत्यधिक और जल्दी खराब होने योग्य सब्जी हैं, इसलिए इसे मिट्टी पर रख कर काटा जाता है

और इसे 5 ग्राम केएमएस (KMS) के 10 लीटर घोल से मिट्टी और गंदगी को साफ किया जाता है। अतिरिक्त पानी को हटाने के बाद ये छिद्रित पोली बैग में पैक किए जाते हैं जिनके प्रत्येक बैग में 250-500 ग्राम मशरूम होता है। मशरूम का भंडारण 3-4 दिनों की अवधि के लिए पॉलिथीन बैग में 4-5 डिग्री सेल्सियस पर संग्रहीत किया जा सकता है। मशरूम आमतौर पर खुदरा बिक्री के लिए बिना लेबल का, प्रायः उपयोग में लाने वाली पॉलिथीन या पॉलीप्रोपाइलीन में पैक किए जाते हैं। भारत में थोक पैकेजिंग मौजूद नहीं है लेकिन विकसित देशों में संशोधित वातावरण पैकेजिंग (एमएपी) और नियंत्रित वातावरण पैकेजिंग (सीएपी) प्रचलित है।

(B) ज्यादा समय तक सुरक्षित रखे जाने की विधि

सफेद बटन मशरूम आम विधि से सुखाए नहीं जाते हैं जोकि दूसरे ओएस्टर, पैडी और शिटेक मशरूम को सुखा लिया जाता है। कैनिंग विधि एक अंतरराष्ट्रीय लोकप्रिय विधि है इस विधि से सफेद बटन मशरूम संरक्षित करके रख सकते हैं। इसके अलावा, फ्रीज ड्राईंग, आई. क्यू. एफ. तकनीक और पिकलिंग तकनीक से संरक्षित कर सकते हैं।

मड हाउस में मशरूम की खेती के खर्च का हिसाब:

पहली बार लगने वाला खर्च		
क्र.	**वस्तु का नाम**	**लागत (रुपए)**
1	कीचड़ घर (60×20×10-13) की लागत 6 कि. गीला पुआल का 1300 बैग रखने के लिए	30,000
2	वार्षिक रखरखाव लागत	3000
3	स्प्रेयर पंप	2000
4	टब / ड्रम	1200
5	थर्मामीटर	1000
6	रैक बनाने के लिए बांस और रस्सियां	3500
कुल	40700	
परिवर्तनीय लागत व्यय		
1	गेहूं के भूसे (20 क्विंटल @ रु. 300 प्रति क्विंटल)	6000
2	पॉलीथीन बैग (20 किलोग्राम @ रु. 100 प्रति किलोग्राम)	2000
3	स्पॉन की लागत (2 क्विंटल @ 50 प्रति किलोग्राम)	10000
4	श्रम शुल्क 60 दिनों के लिए @ रु. 200, 2 श्रमिक	24000
5	रसायनिक पदार्थ: बेभिसटिन - 1.5 किलोग्राम, फोर्मेल्ड़ेहीदए- 20 लीटर	5000
6	विविध	1000
	कुल आवर्ती व्यय	48000

अपेक्षित उपज, किलोग्राम	1400
बिक्री से आय @ 60/ किलोग्राम × 1400	84000
1 फसल से कुल आय	38500
2 फसल से कुल आय	231000

निष्कर्ष

मशरूम का खेती एक लाभकारी व्यवसाय है जिसमें लागत बहुत कम लगती है। चूंकि इसकी खेती के लिए भूमि की आवश्यकता नहीं है, इसलिए मशरूम की खेती ग्रामीण किसानों और शहर के निवासियों, दोनों के लिए एक व्यवसाय खेती हो सकती है। 2010 से 2017 के दौरान, मशरूम के उत्पादन में 4.3% की वृद्धि हुई है। मशरूम विटामिन बी, सी और डी का एक बहुत अच्छा स्रोत है। मशरूम के अन्य स्वास्थ्य लाभों में उच्च कोलेस्ट्रॉल स्तर, कैंसर और मधुमेह के खतरे को कम करता है। जिस समय हरी सब्जी का उत्पादन नहीं हो पाता है उस समय भी मशरूम को सब्जी के रूप में उपयोग किया जा सकता है। इसके लिए उत्पादन कक्ष कम लागत पर बनाए जा सकते है तथा फसल चक्र भी 40-50 दिनों का होता है। एक किलोग्राम मशरूम की लागत मूल्य लगभग रु 30-35 तक होती है तथा इस सफ़ेद बटन मशरुम की कीमत रु 60- 80 प्रति किलोग्राम पर बाजार में आसानी से बेचा जा सकता है।

हताश न होना सफलता का मूल है और यही परम सुख है। उत्साह मनुष्य को कर्मो में प्रेरित करता है और उत्साह ही कर्म को सफल बनाता है।

- वाल्मीकि

जैविक खेती में कम लागत वाली तकनीक

शिवाधार मिश्र एवं रणबीर सिंह

जैव पदार्थ उपयोग इकाई- सस्य विज्ञान संभाग
भाकृअनुप - भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली- 110 012

आज नहीं तो कल,

जैविक ही है हल

जैविक खेती पद्धति हमारे देश की प्राचीन भारतीय कृषि प्रणाली है। रसायन प्रधान आधुनिक युग में भी यह प्रासंगिक है। जैविक खेती उत्पादन की एक ऐसी पद्धति है जिसमें रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों, शाकनाशकों व वृद्धि नियामकों आदि का उपयोग बिल्कुल नहीं होता है। बल्कि इनके स्थान पर खेती में जैव उर्वरकों, फसल चक्र में दलहनी फसलों का प्रयोग, हरी खाद, फसल अवशेष प्रबंधन, कंपोस्ट, पशुमल खाद एवं बीमारियों, कीट-पतंगों व खरपतवारों का नियंत्रण होता है। जैविक विधियों को अपनाया जाता है। कोविड-19 का संक्रमण आने से विश्वभर में मानव जाति पर इस महामारी का अत्यधिक दुष्प्रभाव पड़ा है। महामारी के प्रकोप से बचने के लिए लोगों में रोग प्रतिरोधक क्षमता में सुधार और उसे संवर्धित बनाने के उपाय शुरु कर दिए हैं। इन उपायों में एक उपाय संतुलित तथा जैविक आहार ही है। रासायनिक उर्वरकों से उत्पादित खाद्यान्न की तुलना में, जैविक खेती से उत्पादित खाद्यान्न अधिक पौष्टिक, रुचिकर व ज्यादा गुणवत्तायुक्त होता है। अतः इसकी मांग लगातार बढ़ रही है। जैविक खेती अपनाकर, हम भूमि के क्षरण एवं दोहन को रोकने में योगदान दे सकते हैं। इससे फसलों की उत्पादन लागत में तो कमी आएगी ही साथ-साथ फसलों का उचित मूल्य भी मिलेगा। भारत में जैविक खेती का हमेशा से महत्व रहा है। जैविक खेती से फसल, मानव, मृदा एवं पर्यावरण स्वास्थ्य में वृद्धि एवं टिकाऊपन आता है। हमारे देश में 8.35 लाख किसान प्रमाणीकृत जैविक खेती कर रहे हैं। किसान, जैविक फसल उत्पादन कर अच्छा लाभ कमा सकते हैं, इसके अतिरिक्त जैविक खेती की जाए तो मृदा स्वास्थ्य, पशु स्वास्थ्य, मानव स्वास्थ्य तथा जैव-विविधता को सुरक्षित रखा जा सकता है। जैविक खेती की सस्य क्रियाएं आधुनिक कृषि क्रियाओं से भिन्न होती हैं। इनका प्रमुख उद्देश्य प्रदूषण रहित वातावरण में प्राकृतिक संसाधनों को नुकसान न पहुंचाते हुए रासायनिक संसाधनों के स्थान पर फार्म पर ही उपलब्ध संसाधनों का उपयोग करते हुए टिकाऊ फसल उत्पादन प्राप्त करना होता है। जैविक खेती प्रबंधन में क्षेत्रीय परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए उपलब्ध जैविक स्रोतों के संतुलित उपयोग पर बल दिया जाता है, इसके लिए जैविक यांत्रिक विधियों का भी उपयोग किया जाता है, क्योंकि कृत्रिम सामग्री का उपयोग जैविक खेती में वर्जित है। इसकी सफलता के लिए फसलोत्पादन एवं पशुपालन का समेकित उपयोग किया जाना अत्यावश्यक है तथा जैविक खेती से फसल की उत्पादकता बनाए रखने के लिए हमें निम्नलिखित बातों पर ध्यान देना आवश्यक होता है, जैसे;

1. खेत का चुनावः यदि किसी खेत में लगातार तीन वर्षों तक पूर्ण रूप से रसायनरहित खेती की जाती है तो वह खेत जैविक खेत कहलाता है। जैविक खेती की सफलता खेत की मृदा के प्रकार एवं उसके उपजाऊपन पर निर्भर करती है। जैविक खेती प्रारंभ करने से पहले तीन वर्षों तक किसी भी प्रकार के रसायन का प्रयोग खेत में नहीं

करना चाहिए। क्योंकि वैज्ञानिक शोधों से पता चला है कि खेतों में तीन वर्षों तक रसायनों के अवशेष मौजूद रहते हैं, ऐसा करने से मृदा के अकार्बनिक रसायन पूरी तरह से समाप्त हो जाते हैं। इसके अंतर्गत फसल एवं खेत के पोषक तत्वों की आवश्यकता पूर्ति के लिए इसमें जैविक उत्पादों का उपयोग किया जाता है।

2. मृदोपचारः जैविक खेती में बुवाई से पूर्व खेत को अच्छी प्रकार से तैयार करना चाहिए। इससे फसल के बीजों का अंकुरण अच्छा होता है एवं खरपतवारों की रोकथाम तथा भूमि में जल प्रबंधन भी अच्छा होता है। दीमक एवं भूमिगत कीटों की रोकथाम हेतु बुवाई के समय 2 क्विंटल प्रति हेक्टेयर नीम/करंज खली अंतिम जुताई के समय खेत में मिलाएं।

3. बीज का चयन एवं बीजोपचारः जैविक खेती हेतु प्रमाणीकरण मानकों के अनुसार जैविक खेती के लिए जैविक तकनीकी द्वारा उत्पादित केवल प्रमाणीकृत जैविक

सारणी 1. जैविक खेती हेतु विभिन्न फसलों में बीजोपचार

क्र.स.	फसल कीट/व्याधि	बीजोपचार
1.	मूंगफली बीज गलन,	तना गलन एवं पौध गलन अरंडी या नीम खली की 1000 कि.ग्रा./है. की दर से खेत में मिलाएं या ट्राइकोडर्मा विरिडी 4 ग्रा./कि.ग्रा. बीजोपचार करें।
2.	कपास, ग्वार, अरहर, बाजरा, मक्का, तिल	मृदा जनित रोग जैसे; जड़ गलन रोग, तना गलन ट्राइकोडर्मा विरिडी या ट्राइकोडर्मा हारजियेनम की 4 ग्रा./कि.ग्रा. की दर से बीजोपचार करें।
3.	मिर्च, बैंगन, लौकी, प्याज, टमाटर, दलहनी सब्जियां	मृदा जनित व बीज जनित रोग के लिए ट्राइकोडर्मा विरिडी या ट्राइकोडर्मा हारजियेनम की 2 ग्रा./100 ग्रा. बीज की दर से बीजोपचार करें।

चित्रः जैविक खेती के विभिन्न घटक

बीज की ही आवश्यकता होती है। जैविक खेती में बीजों को बोने से पूर्व ट्राइकोडर्मा विरडी की 6.0 कि. ग्रा. बीज की दर से उपचारित करने के बाद बीज को एजोटोबैक्टर जीवाणु टीके की 600 ग्राम तथा 600 ग्राम पीएसबी टीके से प्रति हेक्टेयर की दर से बीजोपचार करें। यदि संभव नहीं हो तो ट्राइकोडर्मा विरडी, एजोटोबैक्टर टीके तथा पीएसबी टीके को 2.0 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से लेकर 100 कि.ग्रा. गोबर की खाद में मिलाकर खेत तैयार करते समय बुवाई से पूर्व मिला दें।

4. कर्षण क्रियाएंः जैविक खेती में अनावश्यक गहरी जुताई से बचना, मिट्टी के अपक्षय को कम करना, खरपतवार प्रबंधन की क्षमता बढ़ाना एवं कार्बनिक पदार्थों के समय पर विघटन में सहायता करना शामिल है ताकि पोषक तत्वों के पुनः आवर्तन को बढ़ावा मिल सके। क्योंकि मिट्टी में होने वाली अधिकांश जैविक क्रियाएं, सूक्ष्म जीव तथा जैव पदार्थ इसी सतह में होते हैं। केवल गर्मियों में खेत की गहरी जुताई करने से खरपतवार के बीज, कीटों के लार्वा, अंडे आदि नष्ट हो जाते हैं।

5. बुवाईः जैविक फसलों की बुवाई उपयुक्त समय पर तथा उचित अवस्था में की जानी चाहिए। बीज फसल के उत्पादन में बीज की दर व्यवसायिक फसल की अपेक्षा कम रखी जाती है। पंक्ति से पंक्ति व पौधे से पौधे की दूरी भी कुछ अधिक रखी जाती है। अधिक उत्पादन के लिए जैविक उत्पादों का प्रयोग करें।

6. पोषक तत्व प्रबंधनः जैविक खाद, गोबर की खाद, कंपोस्ट, वर्मीकंपोस्ट इत्यादि बुवाई से 21 दिनों पूर्व 10 से 15 टन खेत में मिला देनी चाहिए। दलहनी फसलों की हरी खाद से प्रति हेक्टेयर 25 से 80 कि. ग्रा. नाइट्रोजन 45 से 60 दिनों में सुगमतापूर्वक उपलब्ध हो जाती है। यदि फसल चक्र में हरी खाद वाली फसलों का समावेश किया जाए तो मृदा को 20 से 25 टन प्रति हेक्टेयर कार्बनिक पदार्थ उपलब्ध हो जाता है जिससे मृदा की संरचना एवं उर्वरता में महत्वपूर्ण सुधार होता है। अन्य जैविक सरोंप्य (बायो इनोकुलेन्ट) के प्रयोग से विभिन्न फसल चक्रों में 20 से 40 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर नाइट्रोजन एवं 10 से 20 किग्रा. प्रति हेक्टेयर फॉस्फोरस की बचत संभव हो जाती है। फसलों को सर्वाधिक नाइट्रोजन पोषक तत्व की अधिक आवश्यकता होती है क्योंकि नाइट्रोजन को भूमि में एकत्रित करके अधिक समय तक नहीं रखा जा सकता है। इसलिए जैविक खेती में नाइट्रोजन की आपूर्ति हेतु निम्न उपाय कारगर सिद्ध होते हैं, जैसे;

- एक वर्षीय फसल चक्र में कम से कम एक दाल वाली फसल को अवश्य शामिल करना चाहिए क्योंकि दाल की फसल की जड़ों में राइजोबियम जीवाणु की गांठें होती हैं, वे वायुमंडलीय नाइट्रोजन को मृदा में स्थिर करती हैं जो यूरिया का काम करती हैं।
- फसलों के अवशेषों में लगभग आधा प्रतिशत नाइट्रोजन होता है, इसलिए इनको कंपोस्ट बनाकर उपयोग करना चाहिए।
- गोबर व पेड़-पौधों के अवशेषों से वर्मी कंपोस्ट बनाकर खेतों में प्रयोग करना चाहिए क्योंकि इसमें पोषक तत्वों की मात्रा सामान्य कंपोस्ट की तुलना में अधिक होती है।
- दलहनी फसलों के बीजों को राइजोबियम जीवाणु खाद से उपचारित करके बुवाई करनी चाहिए।
- सनई, ढैंचा, ग्वार व लोबिया आदि फसलों को हरी खाद के रूप में प्रयोग करके मृदा में नाइट्रोजन बढ़ाई जा सकती है।
- नीम, अरंडी व करंज की खलियों का प्रयोग करके भी मृदा में नाइट्रोजन पूर्ति की जा सकती है। इसके लिए खेत में बुवाई के एक महीने पहले 10 से 12 टन खली प्रति हेक्टेयर दर से खेत में मिला देनी चाहिए।
- मुर्गी की बीट, भेड़, बकरियों की मेंगनी, हड्डी की खाद आदि के प्रयोग से भूमि में पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ जाती है।
- पशुओं के पेशाब में गोबर से अधिक नाइट्रोजन होती है। इसलिए पशुओं के बैठने के स्थान पर राक फॉस्फेट की कुछ मात्रा डाल देनी चाहिए। इस पेशाब में मिले फॉस्फेट को सुपर कंपोस्ट बनाने में प्रयोग कर सकते हैं। इससे कंपोस्ट में नाइट्रोजन की मात्रा में अधिक वृद्धि होती है।

7. फसल सुरक्षाः जैविक खेती में कीट प्रबंधन के लिए ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई करें व बुवाई के पूर्व नीम की खली 2.0 क्विंटल/हेक्टेयर की दर से डालें। ट्राकोडर्मा 6 ग्राम/कि.ग्रा. बीज की दर से बीजोपचार करें। इसी प्रकार जैविक बीज उत्पादन में रोग प्रबंधन के लिए नीम बीज अर्क, ट्राइकोग्रामा, अंड परजीवी आदि का छिड़काव करें। मिट्टी चढ़ाने के समय पुरानी पत्तियों को जलाएं और मृत एवं रोग से ग्रसित पत्तियों को हटा दें।

8. जैविक विधि से खरपतवार प्रबंधनः खरपतवार, मृदा से नमी, सौर ऊर्जा तथा उपलब्ध पोषक तत्वों का उपयोग कर लेते हैं। जैविक खेती में खरपतवार नियंत्रण हेतु भौतिक, कल्चर, सस्य एवं जैविक विधियां सम्मिलित हैं। जैविक विधि से खरपतवारों की रोकथाम के लिए सर्वप्रथम प्रमाणित बीजों की बुवाई करें। खेत में अच्छी प्रकार से सड़ी गोबर की खाद या कंपोस्ट ही डालनी चाहिए। खड़ी फसल में खरपतवारों द्वारा नुकसान, शुरु के 20-30 दिनों में अधिक होता है, इसलिए फसल उगते ही निराई-गुड़ाई कर देनी चाहिए। जैविक खेती के अंतर्गत गर्मी के मौसम में खेतों की जुताई करके खेत खुला छोड़ देने से खरपतवारों के बीजों तथा रोगाणुओं की संख्या में कमी आती है। वर्मीकंपोस्ट का प्रयोग सर्वोत्तम रहता है, क्योंकि इसमें खरपतवार के बीज पूर्ण रूप से नष्ट हो जाते हैं। साथ ही गोबर की खाद या कंपोस्ट खाद की तुलना में केंचुआ खाद फसल को अधिक पोषण प्रदान करती है। जैविक खेती में फसल चक्र अपनाकर, आच्छादन द्वारा, हरी खाद के प्रयोग से, केंचुए की खाद या कंपोस्ट खाद द्वारा तथा पशुओं द्वारा चराकर प्रभावी खरपतवार नियंत्रण किया जाता है। खरपतवारों को मिट्टी में पलटने से मृदा संरक्षण एवं जैविक पदार्थों से संचय में सहायता मिलती है। फसल चक्र में परिवर्तन से खरपतवारों में कमी संभव है। उत्तर भारत में प्रचलित धान-गेहूं फसल चक्र में गेहूं का प्रमुख खरपतवार मंडूसी है। यदि धान-गेहूं फसल चक्र के स्थान पर मक्का-गेहूं अथवा गन्ना-गेहूं चक्र को अपनाया जाए तो खरपतवारों की संख्या में कमी आ सकती है। यदि गेहूं के साथ सरसों या मक्का के साथ सोयाबीन की अंतवर्तीय फसल प्रणाली अपनायी जाए तो खरपतवारों का नियंत्रण कर सकते हैं। इनके अतिरिक्त फसलोत्पादन में पलवार (फसल अवशेषों जैसे सूखी पत्तियां, सूखी घास, भूसा व पुआल एवं प्लास्टिक की चादर इत्यादि) का उपयोग करें तो, खेत की मृदा सतह तक सूर्य का प्रकाश नहीं पहुंच पाता है, जिससे खरपतवार कम उगते है। साथ ही साथ वाष्पोत्सर्जन द्वारा जल की हानि से बचाव होता है, मृदा की ऊपरी परत में सूक्ष्मजीवों की संख्या बढ़ती है और मृदा में पोषक तत्वों व कार्बनिक पदार्थों की मात्रा बढ़ती है। यदि खेत में पोषक तत्वों तथा नमी की बहुतायत हो, तो खरपतवार का प्रकोप तेजी से होता है। ऐसी स्थिति में पोषक तत्वों को कार्बनिक खाद के रूप में दिया जाए तथा ड्रिप विधि से सिंचाई करें तो खरपतवारों की संख्या कम हो सकती है। वैज्ञानिकों ने कुछ ऐसे कीटों की खोज की है, जिनके आक्रमण से खरपतवारों को नष्ट कर सकते हैं, जैसे; मैक्सीकन बीटल एवं जाइग्रोग्रामा बायोक्लोराटा कीट, गाजर घास को चुनकर खाते हैं। स्युडोमोनास, एग्रोबैक्टीरियम, जेनथोमोनास कम्पैस्ट्रीस जैसे जीवाणु और कुछ फफूंद प्रजातियां जैसे; सरकोस्पोरा, आल्टरनेरिया कोलेटोट्राइकम तथा फ्युजेरियम भी खरपतवार नियंत्रण में प्रभावी हैं।

8. हरी खाद का प्रयोगः खेत में हरी खाद का प्रयोग अपरिपक्व हरे पौधों को पुष्पन अवस्था से पहले भूमि में दबाकर किया जाता है। इन्हें इनकी हरी पत्तियों के लिए उगाया जाता है। हरी खाद के प्रयोग से फसल पोषण तत्वों का चक्रीयकरण तथा मृदा की उर्वरा-शक्ति भी बढ़ाती है। मृदा की संरचना तथा बनावट में सुधार होता है, मृदा की जल अवशोषण क्षमता बढ़ती है, खरपतवारों की वृद्धि नहीं होती है तथा मृदा कटाव नहीं होता है।

9. जैविक उर्वरक का प्रयोगः जैव उर्वरक सूक्ष्म जीवाणुयुक्त उर्वरक होता है जो वायुमंडल में नाइट्रोजन के यौगिकीकरण द्वारा फॉस्फोरस को घुलनशील बनाकर कार्बनिक पदार्थों का तीव्रगति से विघटन करता है तथा सूक्ष्म तत्वों जैसे जिंक, तांबा आदि का अवशोषण सुगम बनाते हैं। ये सूक्ष्मजीव फसल वृद्धि नियामक हार्मोन्स, विटामिन तथा आवश्यक अमीनों अम्लों का भी निर्माण करते हैं। जैव उर्वरक के प्रयोग से मृदा का स्वास्थ्य सुधरता है, फसल की तीव्र बढ़वार होती है तथा उत्पादन में वृद्धि होती है।

10. मृदा सौरीकरणः मई-जून में खाली पड़े खेत को सिंचाई के उपरांत पालीथीन से ढ़क दिया जाता है। मौसम

की गर्मी के कारण नमी से भाप बनती है, जिससे मृदा की सतह का तापमान बढ़ जाता है और अधिकांश खरपतवारों के बीज नष्ट हो जाते हैं। सौर ऊर्जा की गर्मी के असर से खेतों में पाए जाने वाले 90 प्रतिशत से अधिक खरपतवारों के बीज या तो बेअसर हो जाते हैं या मर जाते हैं।

11. जैविक विधियों से कीट एवं बीमारियों का प्रबंधनः इसके अंतर्गत सस्य क्रियाएं, फसल चक्र, कीट बीमारी निरोधक प्रजातियाँ एवं जैव एजेन्ट के रूप में वानस्पतिक अन्य उत्पाद जैसे कि नीम की पत्तियों का रस, नीम का तेल, नीम की खली एवं सूक्ष्म जीवों के प्रयोग, ट्राइकोडर्मा एवं ट्राइकोग्रामा विभिन्न कीटों के नियंत्रण हेतु एवं हानिकारक कीटों को खाने वाले लाभदायक मित्र कीट एवं मकड़ियों को प्रोत्साहित करके जैविक विधि से रोकथाम कर सकते हैं। चेंपा, हरा तेला, थ्रिप्स, लाल मकड़ी आदि कीटों का नियंत्रण लेडी बर्ड बीटल, क्राइसोपा व मकड़ी द्वारा किया जा सकता है। जैविक विधियों से बीमारियों से बचने के लिए निम्न उपायों का प्रयोग करना चाहिएः

- गर्मियों में खेतों की गहरी जुताई करनी चाहिए, इससे भूमि में छिपे जीवाणु मर जाते हैं।
- प्रति वर्ष एक ही फसल चक्र नहीं अपनाना चाहिए।
- रोगरोधी उन्नत किस्मों के बीजों की ही बुवाई करनी चाहिए।
- बीज को धूप में सुखाने से बीज में उपस्थित जीवाणु मर जाते हैं।
- बीज को ट्राइकोडर्मा फफूंद से उपचारित करने से मृदा व बीज जनित बीमारियों से छुटकारा मिल जाता है।
- फसल से बीमार व रोगग्रस्त पौधों को निकालते रहना चाहिए।
- सफेद पारदर्शी व पतले 100 गेज मोटी पालीथीन से 4 से 6 सप्ताह के लिए ढक देने से सौर ऊर्जा द्वारा मृदा उपचारित होने से मृदा जनित बीमारियां कम उत्पन्न होती हैं।

12. दक्ष जल प्रबंधनः इसे वर्षा जल एवं सिंचाई जल प्रबंधन में विभाजित किया जा सकता है। वर्षा जल प्रबंधन में प्रमुख रूप से वर्षा जल संचय पूरक सिंचाई एवं वाष्पोत्सर्जन की दर को कम करना होता है। जल प्रबंधन में सही सिंचाई नियमन (शेड्युल) द्वारा जल की उतनी ही मात्रा का प्रयोग किया जाता है, जितनी आवश्यक होती है।

13. फसल चक्रः फसल चक्र में किसी एक फसल को प्रतिवर्ष न लगाकर 2 से 3 वर्ष के अंतराल पर उगाने से मृदा की उर्वरता बनी रहती है। फसल चक्र अपनाने से किसी एक फसल विशेष द्वारा अवशोषित पोषक तत्वों को मृदा में पुनः संचय होने का समय मिलता है, क्योंकि दूसरी फसल मृदा से कई भिन्न पोषक तत्वों का अवशोषण करती है अर्थात फसल चक्र द्वारा मृदा की संरचना एवं उर्वरता के साथ-साथ कीट एवं बीमारियों का नियंत्रण काफी हद तक संभव है। फसल चक्र में विभिन्न प्रकार की फसलों का समावेश करके खरपतवार कीट एवं बीमारियों से फसल की सुरक्षा किया जाना भी संभव है जैसे; खरवतवारों के नियंत्रण हेतु खरीफ में ढैंचा/सनई की हरी खाद की फसल लेने पर खरीफ के खरपतवारों को एवं रबी में चारे वाली फसलों जैसे; बरसीम, रिजका, जई, तिलहन फसलों में सरसों आदि को फसल चक्र में लेने पर गेहूंसा एवं जंगली जई आदि खरपतवारों को अच्छी प्रकार से नियंत्रित किया जा सकता है। सूत्रकृमियों (निमेटोड्स) की रोकथाम के लिए खेत में मुख्य सब्जी वाली फसल के साथ गेंदा की फसल लेने से अच्छा नियंत्रण होता है। धान-गेहूं फसल चक्र के बीच में दलहनी फसलें उगाने से मृदा में नाइट्रोजन की मात्रा बनी रहती है।

14. बीज संसाधनः बीज फसल को उचित नमी की मात्रा में संसाधित करना सुरक्षित होता है, इसलिए इसे धूप या कृत्रिम सुखाई यंत्र द्वारा सुखाया जाता है। उदाहरण के लिए खाद्यान्न फसलों में 12, सोयाबीन व कपास में 10, दालों में 9, तिलहनों में 8 प्रतिशत से अधिक आर्द्रता नहीं होनी चाहिए। बीजों को कम तापमान 10 सेल्सियस और नमी 10 से 12 प्रतिशत मात्रा की दशाओं में भंडारित करना सर्वधा उचित है। बीज भंडारण के दौरान बोरों को नीम के पानी से धोकर धूप में सुखाने के बाद भंडारित किया जाना चाहिए।

सारांश: आधुनिक समय में निरंतर बढ़ती हुई जनसंख्या, पर्यावरण प्रदूषण, भूमि की उर्वरा शक्ति का संरक्षण एवं मानव स्वास्थ्य के लिए जैविक खेती की राह अत्यन्त लाभदायक है। मानव जीवन के सर्वांगीण विकास के लिए भी नितान्त आवश्यक है कि प्राकृतिक संसाधन प्रदूषित न हों, वातावरण शुद्ध रहे एवं पौष्टिक आहार मिलता रहे, इसके लिए हमें जैविक खेती की कृषि पद्धतियों को अपनाना होगा जोकि हमारे नैसर्गिक संसाधनो एवं मानवीय पर्यावरण को प्रदूषित किए बिना समस्त जनमानस को जहर मुक्त खाद्य सामग्री उपलब्ध करा सकेंगे। कृषि के आर्थिक, सामाजिक, स्वास्थ्य और पर्यावरणीय लाभों को देखते हुए भारत सरकार भी जैविक खेती को अपनाने के लिए प्रचार-प्रसार तथा जैविक खेती को प्रोत्साहित करने के लिए अनेक योजनाएं और कार्यक्रम चला रही है।

अध्यापक राष्ट्र की संस्कृति के चतुर माली होते हैं। वे संस्कारों की जड़ों में खाद देते हैं और अपने श्रम से उन्हें सींच-सींच कर महाप्राण शक्तियां बनाते हैं।

- महर्षि अरविंद

मुठ्ठी भर संकल्पवान लोग जिनकी अपने लक्ष्य में दृढ़ आस्था है, इतिहास की धारा को बदल सकते हैं।

- महात्मा गांधी

गुणवत्ता युक्त बीजों का रखरखाव एवं भंडारण तकनीकी

अशोक जायसवाल, ज्ञानेन्द्र सिंह, चंदू सिंह एवं संजीव शर्मा

बीज उत्पादन इकाई
भा.कृ.अनु.प.- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली -110 012

बीज उत्पादन हेतु उगाई गई फसल को काटने के बाद उसका रखरखाव एवं भंडारण अति महत्वपूर्ण कार्य है। प्रायः यह देखा गया है कि उचित रखरखाव एवं भंडारण के अभाव में करोड़ो रूपये के राजस्व की हानि हमारे देश में होती है। विकासशील देश होने के कारण हमारे यहां भंडारण की सुविधाओं का अभाव है तथा जो सुविधाएं हैं वे अपर्याप्त हैं तथा अधिक खर्चीली होने के कारण आम किसान उनका उपयोग नहीं कर सकता है। देश में बढ़ती जनसंख्या, प्राकृतिक आपदाएं एवं मौसम की अनिश्चितता तथा अच्छे बीजों की बढ़ती मांग के कारण अगली फसल हेतु बीज की बुवाई करने के लिए बीज की उपलब्धता को सुनिश्चित करना बहुत आवश्यक है। भारत में केवल भंडारण में 9.33 प्रतिशत की हानि होती है जिसमें कीटों, चूहों, गिलहरी, पक्षियों तथा नमी के कारण बीज के संसाधन एवं विपणन के दौरान क्रमशः 2.55, 2.5, 0.85, 0.68 तथा 2.75 प्रतिशत की हानि देखी गई है। सही समय पर फसल की कटाई, संसाधन तथा भंडारण की उचित व्यवस्था के फलस्वरूप बीजों को काफी समय तक सुरक्षित रखा जा सकता है।

गुणवत्ता युक्त बीज में निम्न तीन अवस्थाओं पर सावधानी बरतने से बीज की शुद्धता बनाई रखी जा सकती है-

- खेत में उत्पादन के समय शुद्धता बनाए रखना।
- खलियान में शुद्धता बनाए रखना।
- बीज प्रसंस्करण एवं भंडारण में शुद्धता बनाए रखना।

बीजों की गुणवत्ता बनाए रखने के लिए निम्नलिखित सावधानियां रखनी चाहिएः

- बीज की बुवाई के लिए समतल, जननिकास की व्यवस्था वाली, खरपतवार रहित, खेत में पुराने बीजों से रहित भूमि होनी चाहिए तथा जहां तक संभव एवं आवश्यक हो फसल चक्र का ध्यान रखा जाना चाहिए। जिन फसलों के बीज अगली फसल की बुवाई तक जिंदा रहते हैं जैसे सरसों आदि के लिए फसल चक्र अति आवश्यक हो जाता है। अन्यथा पुराने खेत में पड़े बीज भी अंकुरित हो जाते हैं जिससे बीज में मिश्रण की सम्भावना बढ़ जाती है।
- बीज की बुवाई हमेशा पलेवा करके करनी चाहिए। इससे बीजों का अंकुरण एक समय पर होने से फसल की कटाई में सुविधा रहती है तथा फसल में एकरूपता बनी रहती है।
- बुवाई के लिए उन्नत प्रजाति का शुद्ध बीज प्रयोग करना चाहिए।
- बीज की निर्धारित मात्रा बुवाई के लिए प्रयोग करनी चाहिए।
- बीज उत्पादन हेतु प्रयुक्त प्रजाति उस क्षेत्र के लिए अनुमोदित होनी चाहिए।
- बुवाई से पूर्व बीजों को उपचारित करना चाहिए जिससे उसका अंकुरण अच्छा हो तथा कीट, फंफूदी आदि से बचाव हो सके। उपचारक के लिए थायरम, कैप्टाफ, बाविस्टन फिर कीटनाशक से तथा बाद में जैविक उपचार जैसे-राइजोबियम आदि द्वारा उपचारित करके बीज की बुवाई करनी चाहिए।
- शुद्ध बीज पैदा करने के लिए निर्धारित पृथकता दूरी आदि मानकों का ध्यान रखना चाहिए जो सारणी-2 में दर्शाए गए हैं।
- उर्वरकों की निर्धारित मात्रा का उचित अवस्था पर प्रयोग करना चाहिए।

- उचित अवस्थाओं जैसे- बढ़वार की अवस्था, फूल आने की अवस्था तथा बीज पकने की अवस्था पर, खेत में घूमकर अन्य प्रजातियों के पौधों को निकालते रहना चाहिए।
- बीज फसल को कीट तथा बीमारियों से बचाने के लिए कृषि रसायनों का उचित समय पर प्रयोग करना चाहिए।
- प्रत्येक प्रजाति की कटाई से पूर्व कंबाइन आदि मशीनों की अच्छी प्रकार से सफाई करनी चाहिए।
- खलियान को पूर्ण रूप से खरपतवार तथा अन्य बीजों से रहित रखना चाहिए।
- खलियान का स्थान ऊंचा, खुला हुआ तथा प्रकाश युक्त होना चाहिए।
- बीजों का श्रेणीकरण करते समय भी प्रत्येक प्रजाति से पूर्व थ्रेशिंग मशीन तथा थ्रेशिंग फ्लोर की अच्छी सफाई करनी चाहिए।
- श्रेणीकरण से पूर्व बीज को दरार रहित फर्श पर सुखाना तथा पंखे से साफ करना चाहिए। सारणी 1 में श्रेणीकरण के लिए प्रमुख फसलों के जालियों के आकार दर्शाए गए हैं।
- श्रेणीकरण करते समय प्रत्येक प्रजाति के लिए निर्धारित आकार की जालियों का प्रयोग करना चाहिए।
- बीज के लिए हमेशा नई बोरियों का प्रयोग करना चाहिए।
- थ्रेशिंग के बाद ग्रेड़िंग में देरी नहीं करनी चाहिए अन्यथा कटे हुए दानों में कीटों का प्रकोप तेजी से होता है, जिसके कारण बीज खराब हो जाता है।

बीज में कीड़े लगने के कारण

- पुरानी बोरियों का इस्तेमाल करना।
- थ्रेशिंग मशीन में पुराने बीज उपस्थित होना।
- थ्रेशिंग मशीन में बीज का टूटना।
- भंडार गृह का अच्छी तरह से साफ न होना।
- भंडारण के समय बीज में नमी की मात्रा अधिक होना।

प्रसंस्करण एवं भंडारण के समय निम्न बातों पर विशेष ध्यान देना चाहिए।

- थ्रेशिंग के बाद पंखे द्वारा बीज को अच्छी प्रकार से साफ करके धूप में सुखाकर ग्रेडिंग करना चाहिए। ग्रेडिंग करते समय फसल की प्रजाति विशेष के अनुरूप जालियों का प्रयोग करना चाहिए। दूसरी प्रजाति की ग्रेडिंग शुरू करने से पूर्व ग्रेडिंग मशीन की सफाई अच्छे प्रकार से करनी चाहिए। बीज संशोधनशाला में ग्रेडिंग से पूर्व मैलाथियान 50 ई.सी. एक लीटर दवा 25 लीटर पानी अथवा डेल्टामेथ्रिन 30 ई.सी. एक लीटर दवा 100 लीटर पानी में घोलकर फर्श तथा दीवारों आदि पर अच्छी तरह से छिड़काव करना चाहिए। ग्रेडिंग करने से बीज की भंडारण क्षमता में सुधार होता है क्योंकि ग्रेडिंग के दौरान छोटे कटे हुए, हल्के दाने एवं खरपतवार आदि के बीज अलग हो जाते हैं। जिन पर कीटों का प्रकोप अपेक्षाकृत अधिक व शीघ्रता से होता है अगर ग्रेडिंग में किसी कारणवश देरी हो तो बीज के बोरों को किसी लकड़ी या प्लास्टिक के पैलेट पर रखकर प्लास्टिक की तिरपाल से चारों ओर से अच्छी प्रकार से ढककर एल्यूमिनियम फास्फाइड 3 ग्राम की 2-3 गोलियां प्रति टन बीज के हिसाब से धुमण करना चाहिए। यह बात अच्छी तरह सुनिश्चित कर लें कि गैस बाहर न निकले। धुमण करते समय इस बात का भी ध्यान रखें कि बीज में नमी का प्रतिशत 12 से अधिक न हो अन्यथा बीज का अंकुरण प्रभावित हो सकता है।
- बीज को ग्रेडिंग करने के बाद भंडार गृह में रखना चाहिए। भंडार गृह की भी बीज संशोधनशाला की तरह सफाई एवं कीटनाशकों का छिड़काव करना चाहिए। भंडार गृह की खिड़कियां तथा दरवाजे हवा से आवागमन रहित होने चाहिए। भंडार गृह

में कमरे के आकार के अनुसार एक्जास्ट फैन होने चाहिए। एक्जास्ट फैन का प्रयोग तभी करना चाहिए जब बीज गोदाम के बाहर का तापक्रम व आर्द्रता अंदर से कम हो।

- बीज को ग्रेडिंग करने के बाद भंडार गृह में रखने से पूर्व मैलाथियान 5 प्रतिशत पाउडर 1/2 ग्राम प्रति किग्रा बीज की दर से उपचारित करने से कीटों का प्रकोप नहीं होता है। इस बात का ध्यान रहे कि ऐसा बीज खाने के उपयोग में न लाया जाए।
- ग्रेडिंग के बाद बीज के हमेशा नई बोरियों में ही भरना चाहिए। यदि पुरानी बोरियों का प्रयोग करना हो तो उन्हें अच्छी प्रकार से साफ करके मैलाथियान या डेल्टामेथ्रिन 5 मिली. प्रति लीटर पानी के घोल में डुबोकर तेज धूप में अच्छी प्रकार सुखाने के बाद प्रयोग करना चाहिए।
- भंडार गृह में बीज को रखते समय इस बात का भी ध्यान रखे कि कटग्रेन तथा बिना ग्रेडिंग किया बीज साथ में न रहे तथा एक फसल का बीज ही एक साथ रखना चाहिए क्योंकि प्रत्येक फसल के बीजों की भंडारण क्षमता अलग-अलग होती है। तिलहन वाली फसलों में वसा अधिक होने के कारण इनकी भंडारण क्षमता सबसे अधिक होती है तथा दलहन वाली फसलों में प्रोटीन की मात्रा अधिक होने के कारण इन पर कीटों का अधिक आक्रमण होता है तथा इनकी भंडारण क्षमता तिलहन से कम होती है। गेहूं, जौ, मक्का, बाजरा, ज्वार आदि बीजों में कार्बोहाड्रेट अधिक होने के कारण इनकी भंडारण क्षमता तिलहन से कम तथा दलहन से अधिक होती है। अतः कुशल प्रबंधन के लिए अनाज, दलहन, तिलहन तथा सब्जियों के लिए अलग-अलग भंडार गृह होने चाहिए।
- भंडार गृह में बीज की बोरियों को लकड़ी अथवा प्लास्टिक के पैलेट पर रखना चाहिए। पैलेट का निर्माण इस प्रकार का हो ताकि वह जमीन से 9 इंच ऊंची रहें। दीवारों से 1.5 फुट की दूरी पर ही बीज की बोरियों को रखना चाहिए ताकि आने जाने में सुविधा रहे तथा बीज में दीवार से नमी आदि का प्रकोप न हो एवं धुमण करने में सुविधा रहे।
- भंडार गृह में हर 15 दिन के अंतर पर बीज का निरीक्षण करते रहें। निरीक्षण के दौरान साफ सफाई का भी ध्यान रखें तथा आवश्यकतानुसार एल्यूमीनियम फॉस्फाइड का धुमण करना चाहिए तथा डेल्टामेथ्रिन या न्यूवान का छिड़काव भी फर्श, दीवारों तथा बोरियों पर अवश्य करते रहना चाहिए।
- बिक्री से पूर्व बीजों का अंकुरण एवं भौतिक शुद्धता आदि का परीक्षण बीज परीक्षण प्रयोग शाला में करवाना चाहिए। सामान्यतः अनाज, दलहन, तिलहन वाली फसलों के बीजों को प्लास्टिक, जूट अथवा कपड़े की आवश्यकतानुसार सही आकार की थैलियों में पैक करना चाहिए। पेकिंग से पूर्व बीज को थायरम या कैप्टाफ 2 ग्राम प्रति किग्रा बीज की दर से उपचारित करना चाहिए। सब्जियों एवं फूलों के बीजों की पैकिंग के लिए एल्यूमीनियम फोइल पाउच, पोलीथीन बैग, पेपर बैग एवं कार्ड बोर्ड बॉक्स आदि का प्रयोग कर सकते हैं। बैग के ऊपर बीज उत्पादक का नाम, फसल का नाम, प्रजाति का नाम, बीज का प्रकार, थोक संख्या, अंकुरण प्रतिशत, आनुवंशिक शुद्धता प्रतिशत, भौतिक शुद्धता प्रतिशत, बीज का शुद्ध भार, परीक्षण तिथि एवं वैधता की तिथि आदि लिखा होना चाहिए।

पूसा बीज कब और कैसे खरीदें

पूसा बीज किसी भी कार्य दिवस पर (दूसरे शनिवार, प्रत्येक रविवार तथा राजपत्रित अवकाश को छोड़कर) 10 बजे से 4 बजे के बीच बुवाई के समय से 1-2 महीने पूर्व खरीदे जा सकते हैं। बीज नगद या डिमांड ड्राफ्ट के द्वारा "पहले आओ पहले पाओ" की नीति के आधार पर एटिक तथा बीज उत्पादन इकाई, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली फोन 011-25842686 एवं अध्यक्ष भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान क्षेत्रीय केंद्र कुन्जपुरा रोड़ करनाल (हरियाणा) से प्राप्त किए जा सकते हैं ।

सारणी-1 बीजों के श्रेणीकरण के लिए प्रमुख फसलों की जालियों के आकार एवं प्रकार

क्रम संख्या	फसल का नाम	ऊपर वाली जाली का आकार एवं प्रकार	नीचे वाली जाली का आकार एवं प्रकार
1.	गेहूं	5.5-6.0 गोल	1.8 - 2.3 लंबा
2.	धान	2.8 गोल,2.9 लंबा	1.85 - 2.15 लंबा
3.	ज्वार	4.75 गोल	2.15 - 3.5 लंबा
4.	बाजरा	3.25 गोल	1.3 लंबा, 1.3-1.4 गोल
5.	मक्का	10.5 -11.0 गोल	6.4 - 7.0 गोल
6.	चना	8.8 - 9.0 गोल	5.0 - 5.6 गोल
7.	मूंग	5.5 गोल	2.8 - 3.2 लंबा
8.	लोबिया	7.0 गोल	3.5 लंबा, 4.0 गोल
9.	मटर	8.8 गोल	4.2 गोल
10.	अरहर	7.5 गोल	3.5 लंबा, 4.0-4.75 गोल
11.	मसूर	5.0 गोल,5.5 लंबा	1.85- 3.2 लंबा, 4.0 गोल
12.	सरसों	2.5-3.25 गोल	1.4 गोल, 2.5 लंबा

सारणी-2 उन्नत बीज के मानक

फसल का नाम	बीज का प्रकार	पृथक्करण दूरी (मी.)	निरीक्षण की संख्या	अवांछनीय पौधों की संख्या (%)	भौतिक शुद्धता (%)	अंकुरण (%)	अन्य पदार्थ (%)	अन्य फसलों के बीज (अधिकतम) प्रति कि.	सामान्य पैंकिग में नमी (%)	पोलीथीन में नमी (%)
धान	आधार	3	2	0.50	98	85	2	10	13	8
	प्रमाणित	3	2	0.20	98	80	2	20	13	8
गेहूं	आधार	3	2	0.05	97	85	3	10	8	5
	प्रमाणित	3	2	0.20	97	85	3	20	8	5
मक्का	आधार	400	2	1	98	85	2	-	9	8
	प्रमाणित	200	2	1	98	85	2	5	9	8
बाजरा	आधार	400	3	0.50	97	75	3	10	12	8
	प्रमाणित	200	3	0.10	97	75	2	20	12	8
सरसों	आधार	200	3	0.10	98	70	2	5	6	5
	प्रमाणित	100	3	0.50	98	70	2	10	6	5

सोयाबीन	आधार	3	2	0.10	98	70	2	0	12	7
	प्रमाणित	3	2	0.50	98	70	2	10	12	7
अरहर	आधार	200	2	0.10	98	75	2	5	9	8
	प्रमाणित	100	2	0.20	98	75	2	10	9	8
मूंग	आधार	10	2	0.10	98	75	2	5	9	8
	प्रमाणित	5	2	0.20	98	75	2	10	9	8
चना	आधार	10	2	0.10	98	85	2	10	12	8
	प्रमाणित	5	2	0.20	98	85	2	20	12	8
मसूर	आधार	10	2	0.10	98	75	2	0	9	8
	प्रमाणित	5	2	0.20	98	75	2	0	9	8

डेल्टामेथ्रिन या न्यूवान का छिड़काव फर्श, दीवारों तथा बैग पर

भंडार गृह में बीज की बैग को प्लास्टिक के पैलेट पर रखते हुए

संरक्षित खेती में सूत्रकृमियों का प्रबंधन

राशिद परवेज़

सूत्रकृमि संभाग
भाकृअनुप - भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110 012

परिचय

सूत्रकृमि, छोटे, गोल शरीर वाले, खंड रहित अकशेरुकी कृमि हैं, जो जीव वर्ग की फाइलम निमेटोडा से संबंधित हैं। सूत्रकृमियों का शरीर पार्श्व रूप में दो भागों में विभाजित होता है। ज्यादातर पादप परजीवी सूत्रकृमि के आकार में अंतर पाया जाता है किंतु आम तौर पर यह 400 माइक्रोन से 1.55 एमएम के बीच लंबे तथा 50 माइक्रोन से कम चौड़े होते हैं। अधिकतर सूत्रकृमि रंग विहीन होते हैं। कुछ सूत्रकृमि कभी-कभी श्वेत अथवा पीले दिखाई देते हैं किंतु यह रंग उनकी आंत्र में उपस्थित खाद्य पदार्थ के कारण होता है। यह पौधों की जड़ों को बाहर तथा अंदर दोनों प्रकार से हानि पहुंचाते हैं। इनकी उपस्थिति एक निश्चित संख्या से अधिक होने पर पौधों को पानी तथा अन्य पोषक तत्वों को प्राप्त करने में बाधा उत्पन्न होती है।

भारत में, पादप परजीवी सूत्रकृमि के कारण लाखों रुपए की अनुमानित हानि होती है। संरक्षित खेती में सूत्रकृमियों के कारण प्रमुख फसलों में उपज हानि अंकित की गई है। मृदा, फसल और फसल पारिस्थितिकी तंत्र में सूत्रकृमि संक्रमण का तेजी से प्रसार, फसल सुरक्षा विशेषज्ञों और नीति निर्माताओं के लिए एक प्रमुख चिंता का विषय है। उच्च गुणवत्ता, निर्यातोन्मुख फसल उत्पादों की मांग और वर्ष भर विशेष रूप से ऑफ सीजन में प्रमुख फसल उत्पादन की उपलब्धता की आवश्यकता ने उत्पादकों को अस्सी के दशक में संरक्षित खेती के तहत चुनिंदा फसलों की खेती करने के लिए मजबूर किया। परिणामस्वरूप, लोगों ने भारत के सभी राज्यों में संरक्षित परिस्थितियों में विभिन्न फसलों की खेती शुरू कर दी। परंतु जल्द ही संरक्षित खेती में सूत्रकृमियों की समस्या गंभीर हो गई और उच्च तापमान, आर्द्रता की अनुकूल परिस्थितियों और पॉली हाउसों में उर्वरकों और पौधों के विकास प्रमोटरों के उपयोग के कारण फसल को बुहत ज्यादा हानि होने लगी जो किसान के लिए बहुत बड़ी समस्या थी।

सामान्य लक्षण

शिमला मिर्च, टमाटर, मिर्च, भिंडी, खीरा, खरबूजा, तरबूज, कार्नेशन्स, गुलाब, जरबेरा और एन्थ्यूरियम जैसी फसलें संरक्षित खेती के तहत उगाई जा रही हैं। पूरे भारत में उगाई जाने वाली ये फसलें *मेलोडोगाइन इनकॉग्निटा, एम. जावनिका* (जड़गांठ सूत्रकृमि) और *रोटाइलेंकुलस रेनिफोर्मिस* (रेनिफॉर्म सूत्रकृमि) जैसे सूत्रकृमि गंभीर रूप से हानि पहुंचाते हैं। संरक्षित परिस्थितियों में इन सभी फसलों पर सूत्रकृमि की समस्याओं का प्रभाव पड़ता है जिससे चुनिंदा फसलों में भारी फसल नुकसान (80% तक) अंकित किया गया है। सूत्रकृमि संक्रमण से फफूंद जनित रोगों की गंभीरता भी बढ़ जाती है जिससे फसल पूरी तरह से नष्ट हो जाती है।

सूत्रकृमि संक्रमण होने के बाद पौधों की वृद्धि कम होती है इससे पादप प्रतिकूल स्थितियों के प्रति संकटग्रस्त होते हैं। पौधों में बौनापन आ जाता है। पतियों का गिरना या कभी-कभी संपूर्ण पौधे का खराब होना जमीन के ऊपर दिखाई देने वाला एक महत्वपूर्ण लक्षण है। सूत्रकृमि के भक्षण के कारण पादप जड़ों के कोर्टिकल ऊतक असामान्य रूप से अत्यधिक विशाल हो कर जड़ों में गाठें बनाते हैं। जड़-गांठ सूत्रकृमि आम तौर पर जड़ों में इस प्रकार के लक्षण के कारण के रूप में जाना जाता है।

संरक्षित खेती में सूत्रकृमियों की प्रसार दर, खुले खेत की खेती की तुलना में 10 से 30 गुना तक अधिक होता है। संरक्षित खेती में सूत्रकृमियों की जनसंख्या का विस्तार बहुत तेजी से होता है और सूत्रकृमियों की संख्या कुछ

महीनों के भीतर 5-6 गुना तक पहुंच जाती है, जिससे संरक्षित खेती हानि का सौदा बन गई है। अभी तक किसानों को सूत्रकृमियों द्वारा उत्पन्न समस्याओं के उचित समाधान के बिना संरक्षित खेती के तहत फसलों में नुकसान उठाना पड़ रहा है।

खेत में हानिकारक सूत्रकृमि की मौजूदगी का पता लगाने के लिए संक्रमित पॉलीहाउस से मृदा और जड़ नमूनों को एकत्रित कर प्रयोगशाला में विश्लेषण करते हुए सूत्रकृमि की पहचान करना शामिल है। आम आदमी के लिए खेत में सूत्रकृमि का पता लगाना काफी मुश्किल है। चूंकि खेत में अनेक पादप रोगजनक तथा पोषण की कमी के लक्षण पौधों पर उसी तरह उभरते हैं जिस प्रकार सूत्रकृमि के प्रकोप के लक्षण प्रकट होते है, अतः यह सलाह दी जाती है कि पॉलीहाउस में ऐसे लक्षण पाए जाने पर सूत्रकृमि रोग के निदान का प्रयास भी करें।

प्रबंधन

सूत्रकृमियों की समस्या को निम्नलिखित नियंत्रण विधियों द्वारा प्रबंध किया जा सकता है। इन नियंत्रण विधियों को रोगों की प्रारंभिक अवस्था में अपनाने से पौधों को सूत्रकृमियों द्वारा अत्यधिक हानि से बचाया जा सकता है।

जैविक नियंत्रण

किसानों द्वारा अपनाई गई प्रबंधन तकनीकियों में रासायनिक कीटनाशक का निरंतर उपयोग शामिल है, जो अक्सर अनुशंसित दरों से अधिक होता है जिसके परिणामस्वरूप प्रतिरोधता का निर्माण होता है। इसके अलावा, खतरनाक रसायनों के कारण जैव-आवर्धन और पर्यावरण की गिरावट ने कई खेती वाले पारिस्थितिकी तंत्रों को अस्थिर और गैर-लाभकारी बना दिया है। अत: *पेसिलोमाइसेस लिलासिनस* (*परप्यूसीलियम*), *पोकोनिया क्लैमाइडोस्पोरिया, ट्राइकोडर्मा हर्ज़ियनम, टी. विरीडी* और *स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस* जैसे जैव कारकों का उपयोग करके सूत्रकृमियों की समस्या को कम करके बढ़ी हुई पैदावार प्राप्त कर सकते हैं। भूमि की अच्छी तरह जुताई कर देनी चाहिए और मिट्टी को अच्छी तरह से जोतना चाहिए। पॉलीहाउस में क्यारी तैयार करने से पहले, मिट्टी में जैव कीटनाशकों से समृद्ध गोबर की खाद डालें। इन कार्बनिक पदार्थों के उचित अपघटन के लिए क्यारियों को 7-10 दिनों तक पानी दें।

प्रतिरोधक प्रजातियां

सूत्रकृमि नियंत्रण में प्रतिरोधी प्रजातियों का उपयोग सबसे अधिक प्रासंगिक होता है। इन सूत्रकृमियों के कारण होने वाली हानि को कम करने में यह विधि प्रभावशाली, किफायती तथा पर्यावरणीय दृष्टि से सुरक्षित है। महंगे रासायनिक उपयोगों का तथा अनेक यांत्रिक संचालनों से संबंधित उत्पादन लागत को बढ़ाए बगैर उत्पादक प्रतिरोधी प्रतिरोधी प्रजातियों के उपयोग से सूत्रकृमि रोगों को नियंत्रित किया जा सकता है। पोषक पादप में प्रतिरोधिता पोषक पादप की किस्मों के बीच शरीर क्रिया विज्ञान के अंतरालों पर निर्भर करती है, जो सूत्रकृमि की पोषक जरूरतों की पूर्ति को रोक देती है या परजीवी द्वारा निर्मुक्त उत्तेजक पदार्थों को निष्क्रिय कर देते है। जड़-गांठ सूत्रकृमि के प्रति अनेक फसलों जैसे टमाटर, सेम, सामान्य सेम सोयाबीन, शकरकंदी, तंबाकू, कपास, अंजीर, गुलाब, मक्का अंकुर और अन्य फसलों की प्रजातियों में प्रतिरोधिता पाई गई हैं।

फसल परिचक्रण

सूत्रकृमि की संख्या कम करने के लिए फसल परिचक्रण एक प्रभावशाली और व्यापक रूप से उपयोग की जा रही भूमि प्रबंधन विधि है। फसल परिचक्रण का उद्देश्य सूत्रकृमि की न्यूनतम संख्या को वृद्धि के उस स्तर तक रोकना है जिससे अधिक संख्या पर नुकसान होता है या सूत्रकृमि की उच्च संख्या को उस न्यूनतम स्तर तक रखना है जिसमें फसल को संतोषजनक ढंग से उगाया जा सकता है। सूत्रकृमि नियंत्रण की मात्रा परिचक्रण में उगाई गई फसलों की प्रतिरोधिता के स्तर तथा संवेदनशील फसलों के बीच गैर पोषक पादपों या प्रतिरोधी फसलों के रोपण के वर्षों की संख्या पर निर्भर करती है। फसल परिचक्रण से फसलों के कम मूल्य के कारण उत्पादकों को आर्थिक परेशानी का सामना करना पड़ सकता है और एक प्रजाति की प्रतिरोधिता वाली एक

फसल किस्म से अन्य सूत्रकृमि प्रजातियों का काफी नुकसान हो सकता है।

सौरीकरण

पॉलीहाउस में सौरीकरण करके भी सूत्रकृमि रोगों के नियंत्रण किया जा सकता है, इस विधि के अंतर्गत मई एवं जून के महीने में 10-15 दिनों के अंतराल पर 2-3 बार जुताई करके हल्की सिचाईं करनी चाहिए, तत्पश्चात मिट्टी को 25 माईक्रोन की पोलीथीन से 30 दिनों के लिए ढक देते हैं। पोलीथीन को अच्छी तरह से बिछा कर उसको मिट्टी के डेले या किसी भारी चीज से दबा देना चाहिए ताकि उसमें हवा का आदान प्रदान न हो सके।

आभार

लेखक, निदेशक, उपनिदेशक (अनुसंधान) एवं अध्यक्ष, सूत्रकृमि संभाग, भाकृअनुप - भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली का उनके सहयोग एवं मार्ग दर्शन के लिए आभार व्यक्त करता है।

पॉलीहाउस मे खेती

सूत्रकृमि संक्रमित पौधे

स्वस्थ जड़

जड़-गांठ सूत्रकृमि संक्रमित जड़

स्वस्थानी कीटनाशक विश्लेषण के लिए पौधों के योग्य बायोसेंसर

मोनिका कुंडू, शिप्रा, अनंता वशिष्ठ, अच्छेलाल यादव एवं प्रमीला कृष्णन

कृषि भौतिकी विभाग

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110 012

नैनोमैटेरियल्स का प्रयोग व्यापक रूप से विभिन्न क्षेत्रों में दुनिया भर में लोकप्रिय है। कोई भी वैज्ञानिक और औद्योगिक क्षेत्र नैनो तकनीकी के विकास से अछूता नहीं रहा है। कृषि-खाद्य व्यवसाय में विशेषकर पैकेजिंग और संरक्षण में, उनके छोटे आकार और अद्वितीय भौतिक रासायनिक विशेषताओं के कारण नैनोमेटिरीयल्स के बहुत सारे फायदे हैं। नैनोमैटेरियल्स में सतह से आयतन अनुपात अधिक होने के कारण गुणवत्ता में वृद्धि होती हैं। जल गुणवत्ता प्रबंधन और कृषि में उद्योग की जरूरतों और आवश्यकताओं के आधार पर, कई आकार और प्रकार के नैनोमैटेरियल का उपयोग किया जा सकता है। नैनोस्केल कैरियर्स, नैनो-बारकोड टेक्नोलॉजी, जाइलम वैसल, प्रतिरोधी कीटनाशकों के बायोरैमेडिएशन, कृषि अपशिष्ट एवं जल उपचार, भारी धातु हटाने, नैनो-लिग्नोसेल्यूलोसिक सामग्री, फोटोकैटलिसिस, कीटाणु-नाशक, बैक्टीरिया और नैनो बायो-सेंसर के लिए क्वांटम डॉट्स, नैनो-लिग्नोडायनामिक धातु कण, अलवणीकरण और वायरलेस नैनो-सेंसर इत्यादि नैनो प्रौद्योगिकी अनुप्रयोगों के कुछ उदाहरण हैं। कृषि में बड़ी मात्रा में मीठे पानी की आवश्यकता होती है। उर्वरकों, कीटनाशकों और अन्य कृषि रसायनों के अत्यधिक उपयोग के माध्यम से भूजल प्रदूषित होता है। नैनोटेक्नोलॉजी के माध्यम से हम फसल वृद्धि, मिट्टी की उर्वरता, नमी स्तर, तापमान, फसल पोषक तत्व की स्थिति, कीड़े, पौधों की बीमारियों और खरपतवार जैसे क्षेत्रों में निगरानी कर सकते हैं। वास्तविक समय में खेतों की निगरानी के कार्य को खेती वाले क्षेत्रों में वायरलेस नैनो-सेंसर का नेटवर्क स्थापित करके पूरा किया जा सकता है। यह रोपण और कटाई के समय जैसे कृषि संबंधी आवश्यक डेटा प्रदान करेगा। नैनो प्रौद्योगिकियां विशिष्ट समय और स्तरों पर पानी, उर्वरक, कीटनाशक, शाकनाशी और अन्य उपचार प्रदान करने के लिए उपयोगी हैं। इसके अलावा नैनो प्रौद्योगिकियों का प्रयोग, शैल्फ जीवन बढ़ाने, सुरक्षा, भोजन की गुणवत्ता जांचने, दूषित या बर्बाद भोजन, पीने के पानी और सिंचाई के पानी के लिए नैनो बायोसेंसर के अनुप्रयोगों के द्वारा किया जा सकता है। संसाधन लागत को कम करने और उत्पादन को अधिकतम करने के लिए इन प्रक्रियाओं की विशिष्ट पादपरोग, पादप कार्यिकी और पर्यावरण चर के संयोजन के साथ निगरानी की जानी चाहिए। नैनो-बायो सेंसर कृषि क्षेत्र में नैनो प्रौद्योगिकी का क्रांतिकारी हस्तक्षेप है। नैनो-बायोसेंसर खाद्य और कृषि के अलावा अन्य कार्यक्षेत्रों में भी एक प्रमुख विषय है और उनके महत्व के कारण हाल ही में कई सेंसर विकसित किए गए हैं। कृषि उत्पादन में, पौधों के सेंसर एक आशाजनक तकनीक है जो पौधे की शारीरिक स्थिति पर वास्तविक समय की जानकारी एकत्र कर सकती है न केवल पौधे के योग्य सेंसर में यह सुविधा होती है, बल्कि इसकी महान यांत्रिक संगतता इसे नरम पौधों की सतहों से भी आसानी से जोड़ने की अनुमति देती है। वास्तविक समय पर आंकड़े लेने के लिए पौधों के योग्य सेंसर का उपयोग लक्षणों के प्रकट होने से पहले संसाधन निवेश को ठीक करने की अनुमति देता है, जो कृषि स्थिरता के लिए महत्वपूर्ण है। पौधे की वृद्धि, सापेक्ष आर्द्रता, और पौधों की बीमारियों का अध्ययन तक पौधों के योग्य सेंसर के साथ किया जाता है। इन संकेतकों से पौधों के स्वास्थ्य और विशेष आवश्यकताओं का वास्तविक समय में मूल्यांकन कर आंकड़े प्रदान कर सकता है। इसके अलावा, सटीक कृषि की प्रगति के लिए कृषि रसायनों का मूल्यांकन और संवेदन महत्वपूर्ण है। हालांकि, फसल उत्पादकता को बढ़ावा देने के लिए, कीटनाशकों के दुरुपयोग और गलत उपयोग की घटनाएं अक्सर घटित होती हैं, जिसके परिणामस्वरूप संभावित रूप से फसल उत्पादों में कीटनाशक अवशेष होते हैं और मनुष्यों के लिए गंभीर स्वास्थ्य जोखिम पैदा करते हैं।

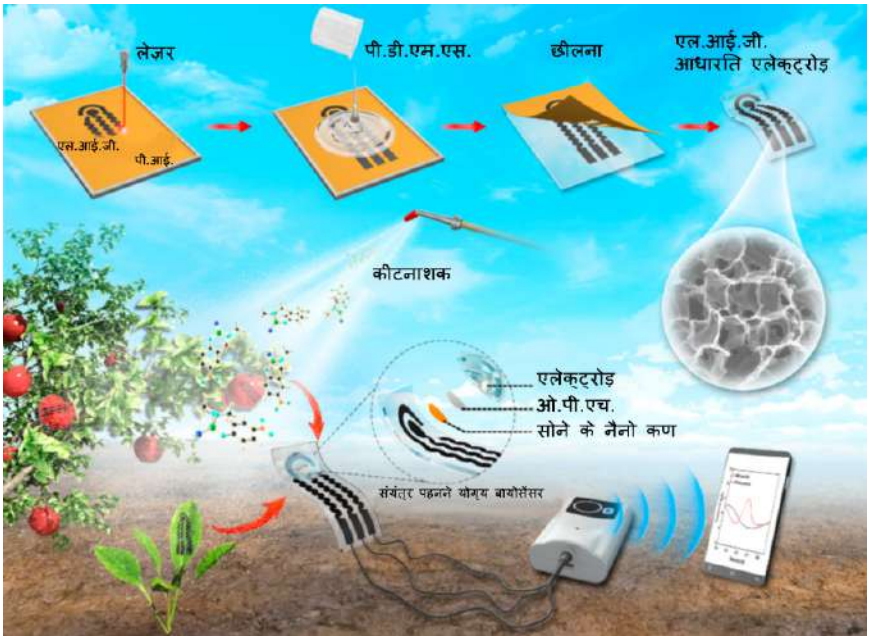

चित्र 1. स्वस्थानी कीटनाशक विश्लेषण के लिए पौधों के योग्य बायोसेंसर का विकास (स्रोत: फेंग्नियन झाओ। एट अल 2020)

इस तथ्य के बावजूद कि कीटनाशक का पता लगाने के लिए विभिन्न विश्लेषणात्मक तरीके मौजूद हैं, वास्तविक समय के नमूना विश्लेषण में अभी भी व्यापक नमूना पूर्व-उपचार की आवश्यकता है, जो त्वरित और गैर-विनाशकारी विश्लेषण की आवश्यकता से मेल नहीं खा सकता है। इसके अलावा पारंपरिक तरीके श्रमसाध्य एवं पक्षपाती हैं, महंगे परिष्कृत उपकरणों की आवश्यकता होती है। पौधों के पहनने योग्य बायोसेंसर एक उपकरण हैं जो विभिन्न प्रकार के कीटनाशकों के यथावत विश्लेषण के लिए फसल की सतहों पर लगाए जाते हैं। ये तेजी से, लागत प्रभावी, लघुकृत और खेतों में अनुप्रयोगों के लिए

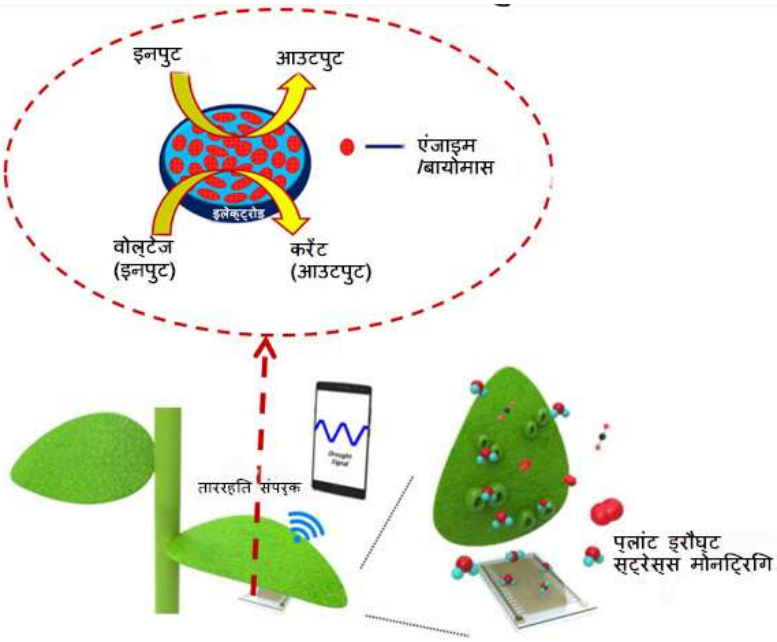

चित्र 2. कृषि में खेतों मे फायदे के लिए पौधे के योग्य सेंसर (स्रोत: राजाराम एट अल, 2021)

काफी उपयुक्त हैं। पौधे के योग्य बायोसेंसर गैर-विनाशकारी और त्वरित पहचान की आवश्यकता को संबोधित करता है। इसके लिए स्क्रीन प्रिंटेड इलेक्ट्रोड का इस्तेमाल किया जाता है। लक्ष्य विश्लेषण के अनुसार बायोमोलेक्यूल का चयन किया जाता है और फिर इसे इलेक्ट्रोड सतह पर स्थिर किया जाता है। डेटा को स्मार्टफोन डिवाइस पर वायरलेस तरीके से प्रेषित किया जा सकता है, जिससे कृषि उत्पादों की सतह पर कीटनाशक के वास्तविक समय और अपने स्थान पर इलेक्ट्रोकेमिकल विश्लेषण की अनुमति मिलती है।

नतीजन, एक स्मार्ट पौधों के योग्य बायोसेंसर फसलों पर स्वस्थानी कीटनाशक अवशेषों की निगरानी के लिए एक गेम-चेंजर हो सकता है, जिससे भविष्य में सटीक कृषि के विकास को प्रोत्साहित किया जा सकता है। ऐसे पौधे योग्य बायोसेंसर, कृषि उत्पादों की सतह से जुड़े हो सकते हैं, जैसे कि फलों या सब्जियों या पौधों की पत्तियों की सतह से यह लक्ष्य विश्लेषण के विद्युत रासायनिक पहचान के माध्यम से कीटनाशकों के वास्तविक समय और स्वस्थानी विश्लेषण की अनुमति देता है। प्लांट-वियरेबल बायोसेंसर सटीक कृषि की सहायता के लिए विभिन्न मापदंडों के तेजी से, खेतों में विश्लेषण की अनुमति देते हैं। ऐसे सेंसर कीटनाशक अवशेषों और अन्य कृषि रसायनों के वास्तविक समय के आंकड़ों को एकत्र करने के लिए नई तकनीक के रूप में अत्यधिक उपयोगी हैं। तापमान और आर्द्रता जैसे परिवेशी कारकों का प्रभाव इस क्षेत्र में भविष्य के विकास के लिए शोध योग्य क्षेत्र हो सकते हैं। प्लांट वियरेबल बायोसेंसर के भविष्य के अनुप्रयोगों में पोषक तत्वों का पता लगाना, रोगजनकों का प्रभाव, पौधे वाष्पोत्सर्जन की वास्तविक समय की निगरानी, पौधों में तापमान व उर्वरता के कारण तनाव आदि शामिल हैं।

फूल चुन कर एकत्र करने के लिए मत ठहरो। आगे बढ़े चलो, तुम्हारे पथ में फूल निरंतर खिलते रहेंगे।

- रवींद्रनाथ ठाकुर

पादप प्रोटीन आइसोलेट्स- प्रोटीन कुपोषण से निपटने का एक माध्यम

नविता बंसल[1], विनुथा टी[1], दुर्गा लक्ष्मी वाई[1], दिनेश कुमार आर[1], रामाप्रशांत जी[2], सुनेहा गोस्वामी[1], रंजीत कुमार रंजन[1] एवं अरुणा त्यागी[1]

[1]जैव रसायन संभाग, [2]आनुवंशिकी संभाग
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110 012

प्रोटीन कुपोषण एक प्रमुख अस्वस्थता की स्थिति है जिससे लगभग हर कोई ग्रस्त है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुरूप, "प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण (पीईएम)" एक असंतुलन है जो तब होता है जब शरीर की प्रोटीन और ऊर्जा की आपूर्ति की मांग, उत्कृष्ट वृद्धि सुनिश्चित करने के लिए अधिक होती है। यह सिंड्रोम भारत में मुख्य बीमारी का लगभग 22% है, क्योंकि यह हमारे देश के सामाजिक-आर्थिक विकास को अनुचित रूप से प्रभावित करता है, जिसमें सकल घरेलू उत्पाद का 1.4% वयस्क उत्पादकता नुकसान होता है। कुपोषण के कारण 1.9 बिलियन वयस्क अधिक वजन वाले और 462 मिलियन कम वजन के पाए गए। इसके अलावा, 5 साल से कम उम्र के 45% बच्चों की मौत इसी के कारण होती है। हमारे देश में प्रोटीन कुपोषण अधिक से अधिक प्रचलित होता जा रहा है क्योंकि पशु प्रोटीन स्रोत महंगे और पहुंच से बाहर पाए जाते हैं। प्रोटीन सेवन में कमी के परिणामस्वरूप प्रोटीन-ऊर्जा कुपोषण (पीईएम), कई बीमारियों और रोगों से जुड़ा हुआ है। इसलिए, प्रोटीन का सेवन हमारे जीवन का अधिक महत्वपूर्ण हिस्सा माना जाता है। हमारे पास कई प्रोटीन स्रोत उपलब्ध हैं जैसे पादप प्रोटीन, पशु प्रोटीन, माइक्रोबियल प्रोटीन, एकल कोशिका प्रोटीन। उनमें से, पादप और पशु प्रोटीन स्रोत ज्यादातर लोगों द्वारा पसंद किए जाते हैं। इससे जुड़े कई लाभों के कारण, उपभोक्ताओं के लिए प्लांट प्रोटीन बाजार उच्च गति से अपना आकार फैला रहा है। इसके मुख्य उपभोक्ताओं में शाकाहारी, स्वास्थ्य के प्रति जागरूक उपभोक्ता, प्रोटीन की कमी वाले उपभोक्ता, नैतिक उपभोक्ता और मध्यम वर्ग के उपभोक्ता हैं जो उच्च गुणवत्ता वाले शाकाहारी आहार की ओर बढ़ रहे हैं। इसलिए खाद्य वैज्ञानिकों और सरकारी संगठनों के लिए यह महत्वपूर्ण है कि वे हमारे आहार में आरडीए (प्रति किलोग्राम शरीर के वजन के 0.8 ग्राम प्रोटीन) की पूर्ति करने और प्राप्त करने के लिए पादप प्रोटीन प्रदान करने के सबसे प्रभावी, सरल और पोषण संबंधी तरीके पर शोध करें एवं उसकी रुपरेखा तैयार करें।

प्रोटीन का महत्व:

हमारे शरीर में यह एक बहुमुखी अणु है क्योंकि यह हमारे शरीर में कई अलग-अलग कार्यों या गतिविधियों में भाग लेने के लिए खुद को अनुकूलित करता है। उदाहरण के लिए, एंजाइम के रूप में जो अनिवार्य रूप से प्रोटीन हैं- एमाइलेज- खाद्य पदार्थों को बाधित करने के लिए पाचक एंजाइम; पाचनशक्ति बढ़ाने के लिए ट्रिप्सिन, काइमोट्रिप्सिन - प्रोटीएज; जैविक प्रणाली में एंटीबॉडी - इम्युनोग्लोबुलिन; मांसपेशियों में प्रोटीन- मायोसिन, एक्टिन, मायोग्लोबिन, फेरिटिन; संरचनात्मक प्रोटीन- कोलेजन, इलास्टिन, केराटिन, साइटोस्केलेटन; सिग्नलिंग प्रोटीन- कलमोडुलिन, साइटोकाइन्स; रक्त में प्रोटीन- हीमोग्लोबिन।

प्रोटीन आइसोलेट्स क्या है?

प्रोटीन आइसोलेट (पीआई) प्रोटीन का व्युत्पन्न हो सकता है जो इसके प्रसंस्करण विधियों से भिन्न होता है। इसमें 90% प्रोटीन होता है एवं कार्बोहाइड्रेट और वसा की मात्रा कम होने के कारण यह शरीर द्वारा आसानी से अवशोषित हो जाता है। प्रोटीन आइसोलेट्स उन लोगों के लिए अत्यंत लाभकारी है जो आहार के प्रति जागरूक हैं और कम कार्बोहाइड्रेट आहार पसंद करते हैं। इसलिए, प्रोटीन आइसोलेट्स की भूमिका मधुमेह और अन्य हृदय-संवहनी रोगों को कम करने में पाई गई है।

प्रोटीन आइसोलेट्स के निष्कर्षण की विधियां:

पौधों से प्रोटीन आइसोलेट्स का उत्पादन करने के लिए विभिन्न तकनीके हैं जैसे क्षार निष्कर्षण, आइसो-

इलेक्ट्रिक पृथक्करण, अल्ट्राफिल्ट्रेशन, वायु वर्गीकरण, पिन मिलिंग और वैट निष्कर्षण। क्षार निष्कर्षण के बाद आइसो-इलेक्ट्रिक पृथक्करण को उच्च उपज निष्कर्षण में आसानी के कारण ज्यादातर पसंद किया जाता है। इसकी विधि इस सिद्धांत पर आधारित है कि अधिकांश प्रोटीन उनके आइसो-इलेक्ट्रिक पीएच में अवक्षेपित होते हैं और हम उन प्रोटीनों को आसानी से निकाल सकते हैं।

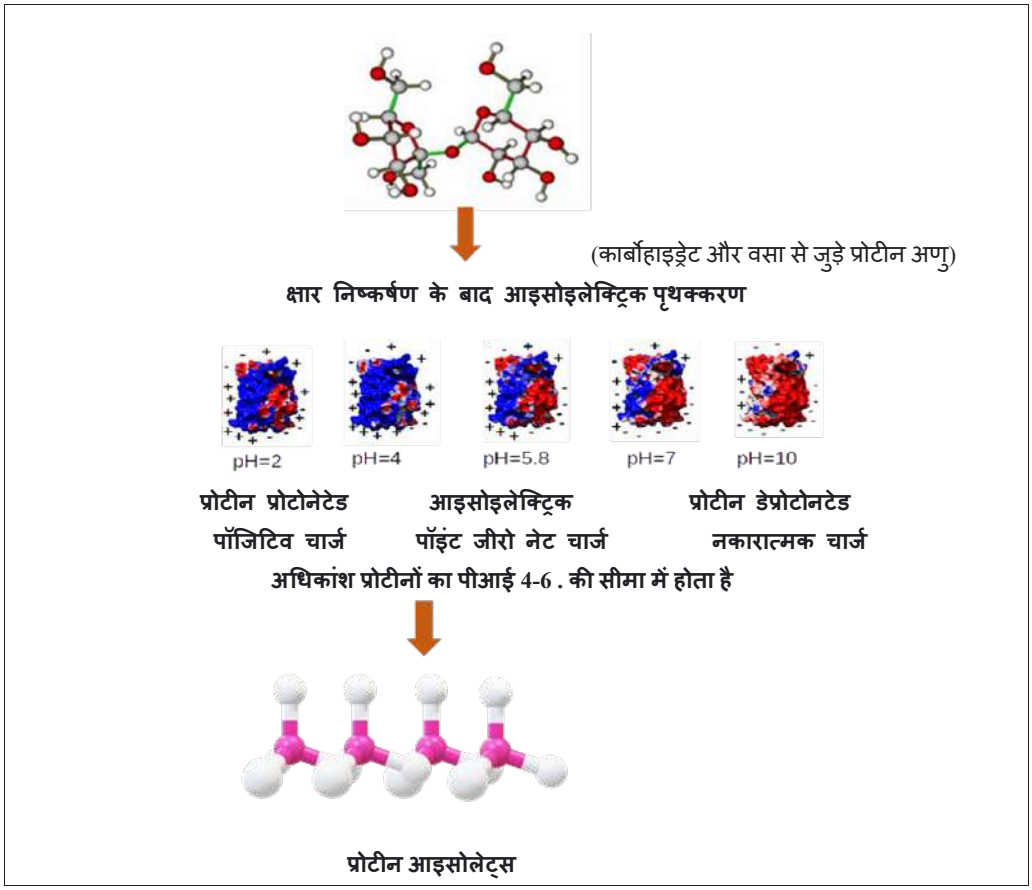

चित्र 1: आइसो-इलेक्ट्रिक पृथक्करण की पद्धति

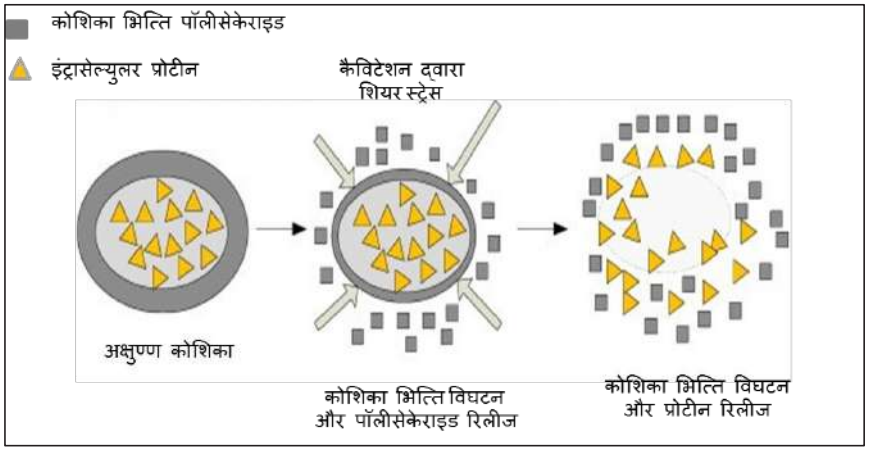

चित्र 2: अल्ट्रा-सोनिकेशन के माध्यम से प्रोटीन अलगाव

प्रोटीन आइसोलेट्स- प्रोटीन उपज बढ़ाने का एक माध्यम

प्रोटीन आइसोलेट्स में प्रोटीन की गुणवत्ता और भौतिक-रासायनिक गुणों में वृद्धि के संबंध में कई शोध अध्ययनों को मिटा दिया गया था। छोले, सोयाबीन, मूंगफली, भांग के बीज, आदि के प्रोटीन आइसोलेट्स, जो क्षार निष्कर्षण, अल्ट्रासोनिकेशन और आइसो-इलेक्ट्रिक पृथक्करण द्वारा प्राप्त किए जाते हैं, से जुड़ी जानकारी अभिलिखित है। मेसकाइट बीन में आइसोइलेक्ट्रिक अवक्षेपण विधि को उपयोग में लाया गया जिसके परिणामस्वरूप प्रोटीन आइसोलेट (30.46%) के साथ उच्च प्रोटीन मात्रा (81.34%) में वृद्धि हुई। चने प्रोटीन आइसोलेट से समृद्ध ग्लूटेन मुक्त नूडल्स का गुणवत्ता लक्षण वर्णन किया गया जिसके परिणाम स्वरुप प्रोटीन सामग्री (7.52 से 19.3%), (अहमद एट अल, 2020) में वृद्धि के साथ दिखाई दिए। क्षारीय निष्कर्षण में, पीएच मान (9 से 12 तक) में वृद्धि से प्रोटीन की उपज में वृद्धि हुई, क्योंकि पीएच 12 प्रोटीन निष्कर्षण में सहयोग करता है, जोकि 36% (w/w) तक उपज देता है। एक ही पीएच पर की गई अल्ट्रासोनिकेशन प्रक्रिया, 84% की अधिकतम प्रोटीन निष्कर्षण उपज देता है। (ओगेमडी एफ। एज़े एटल।, 2021)। मूंगफली प्रोटीन आइसोलेट्स को क्षारीय निष्कर्षण के साथ अल्ट्रासाउंड या माइक्रोवेव का उपयोग करके उत्पादित किया गया था। एक नियंत्रण उपचार की तुलना में, माइक्रोवेव या अल्ट्रासाउंड के उपयोग ने प्रोटीन निष्कर्षण उपज में क्रमशः लगभग 77% और 100% की वृद्धि की।

इसके अलावा, प्रोटीन आइसोलेट्स में कई अध्ययन किए गए थे, जिसके परिणामस्वरूप नियंत्रित प्रोटीन की तुलना में अधिक प्रोटीन की पैदावार हुई।

इसके अतिरिक्त कई गुणवत्ता मानकों जैसे इमल्सीफाईंग गुण, फोम उत्पादन गुण, जल अवशोषण गुण, तेल सोखने वाले गुण का अनुमान लगाया गया था। उन परिणामों ने सभी भौतिक-रासायनिक गुणों में भी सुधार दिखाया जो खाद्य निर्माण और दीर्घकालिक भंडारण में मदद करता है। इसलिए, जीवन जीने के पोषण के तरीके को बढ़ावा देने में इसके महत्व को समझते हुए प्रोटीन आइसोलेट्स में और अधिक अध्ययन किया जाना चाहिए।

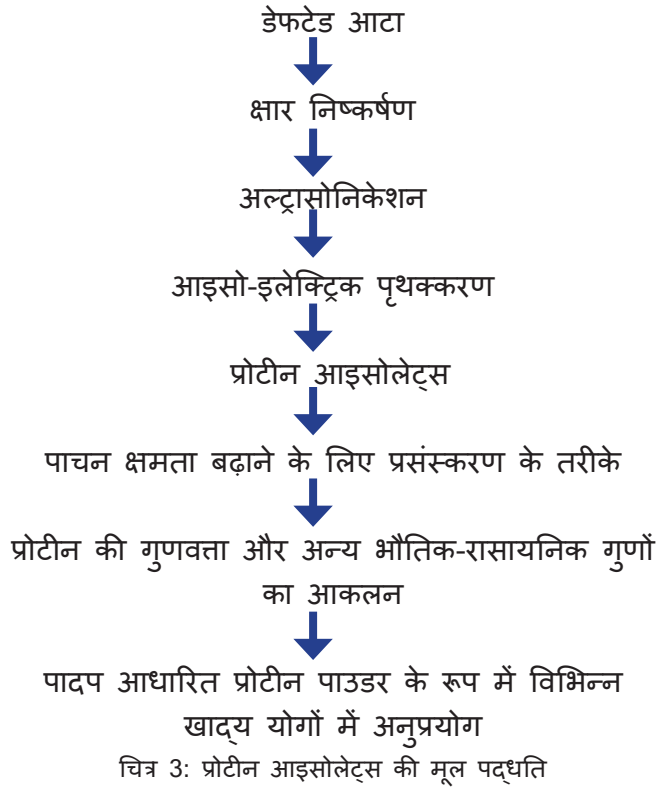

चित्र 3: प्रोटीन आइसोलेट्स की मूल पद्धति

सही स्थान पर बोया गया सुकर्म का बीज ही महान फल देता है।

- कथा सरित्सागर

विविधा....

हरी खाद से फसलों की तबीयत हरी

संजय कुमार गुप्ता एवं मंजीत सिंह नैन

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

देश की जनसंख्या जैसे-जैसे तेजी से बढ़ी उसी अनुसार कृषि का विस्तार किया गया, इसी के साथ कृषि क्षेत्र में मशीनीकरण, रासायनिक उर्वरकों और खरपतवार नाशक, को कीटनाशकों एवं फफूंदनाशकों का अंधाधुंध प्रयोग किया गया। सघन कृषि पद्धति तथा असंतुलित रासायनिक उर्वरकों के उपयोग से दिनों दिन मृदा की उपजाऊ क्षमता नष्ट होती जा रही है, जिसे गोबर की खाद/कंपोस्ट खाद/हरी खाद के द्वारा ही रोका जा सकता है। आज के वर्तमान परिवेश में साधारणतया यही देखने को मिल रहा है कि पशुपालन कम हो गया है। खेती का कार्य मशीनों के द्वारा किया जा रहा है। ऐसी परिस्थिति में हरी खाद का प्रयोग करके मृदा संरचना को संरक्षित रखा जा सकता है। हरी खाद का अर्थ उन पत्तीदार फसलों या दलहनी और गैर दलहनी फसलों को उनके वानस्पतिक वृद्धि काल में उपयुक्त समय पर मृदा उत्पादकता एवं उर्वरता बढ़ाने के लिए फल-फूल आने से पहले जोतकर मिट्टी में दबा दिया जाता है यह फसलें सूक्ष्म जीवों द्वारा विच्छोदित होकर हयूमस तथा पौधों के पोषक तत्वों की मात्रा में वृद्धि करती है और सस्य प्रणाली में ऐसी फसलों का उपयोग में आना हरी खाद देना कहलाता है। कृषि में शिबीय या फलीदार फसलें अपना विशेष महत्व रखती हैं। दलहनी फसलों में सर्वाधिक मात्रा में प्रोटीन पाया जाता है जो मानव जीवन के लिए महत्वपूर्ण है तथा दूसरी तरफ उनकी जड़ ग्रंथियों में वायुमंडल में नाइट्रोजन अवशोषित कर मृदा में स्थापित करने की अद्भुत क्षमता पाई जाती है। इसी कारण से दलहनी फसलों में अलग से न्यूनतम मात्रा में नाइट्रोजन का प्रयोग किया जाता है। हरी खाद का प्रयोग करके मृदा में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा को बढ़ाया जा सकता है। हल्की तथा भारी दोनों प्रकार की मृदाओं में कार्बनिक पदार्थ की वृद्धि होने से उपज में वृद्धि के साथ-साथ मृदा जल धारण क्षमता में भी बढ़ोत्तरी होती है। मृदा वायु संचार तथा जल संचार में सुधार होता है, मृदा के दूषित होने की समस्या भी दूर हो जाती है रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग को कम किया जा सकता है। हरी खाद के द्वारा मृदा की उर्वरा शक्ति को बढ़ाने के साथ उत्पादन लागत को कम किया जा सकता है तथा इसके साथ ही यह आगे बोई जाने वाली फसलों के लिए भी लाभदायक रहती है एवं सघन फसल के कारण खरपतवारों पर भी नियंत्रण रहता है साथ ही साथ अम्लीय एवं क्षारीय दोनों प्रकार की मृदाओं के पी. एच. मान में सुधार होता है।

हरी खाद के लिए मुख्य फसलें

हरी खाद के लिए दलहनी या फलीदार तथा अदलहनी या बिना फलीदार फसलें उपयोग की जाती है इसके लिए प्रमुख रूप से सनई, ढेंचा, उड़द, मूंग, लोबिया तथा ग्वार का प्रयोग किया जाता है तथा अदलहनी फसल ज्वार, मक्का, बाजरा एवं सूर्यमुखी की फसलें मृदा में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा उपलब्ध करा सकती है। ये फसलें शीघ्र बढ़ने वाली, खूब पत्तियों वाली व शाखादार हो तथा फसलों के वानस्पतिक भाग मुलायम हो ताकि ये आसानी से सड़ने योग्य हों। दलहनी फसलों की बुवाई के समय 20-25 किग्रा. नाइट्रोजन तथा अदलहनी फसलों के लिए 40-60 किग्रा. नाइट्रोजन प्रति हेक्टेयर प्रयोग लाभकारी रहता है। फॉस्फोरस तथा पोटाश का प्रयोग आवश्यकतानुसार मृदा में उनकी उपलब्धता के अनुसार बुवाई के समय उपयोग करना चाहिए।

फसल	बुवाई का समय	बीज की मात्रा कि.ग्रा.	अनुमानित हरी खाद उपज किग्रा./हे.	अनुमानित उपलब्ध नाइट्रोजन कि.ग्रा./हे.
सनई	अप्रैल से जुलाई	50-60	25-30	75-100
ढंचा	अप्रैल से जुलाई	40-50	25-30	90-100
उर्द	अप्रैल से जुलाई	20-25	10-15	40-50
मूंग	अप्रैल से जुलाई	20-25	10-15	40-50
लोबिया	अप्रैल से जुलाई	45-55	15-20	75-90
ग्वार	अप्रैल से जुलाई	30-40	20-25	60-70
बाजरा	अप्रैल से जुलाई	40-50	20-25	50-60
ज्वार	अप्रैल से जुलाई	40-50	20-25	50-60

हरी खाद देने का ढ़ंग

1. खेत में हरी खाद को उगाकर जोत देना - इस विधि में हरी खाद की फसलों को उसी खेत में उगाया जाता है जिसमें कि खाद देनी होती है, फिर उसे खेत में जोत देते हैं।
2. अपने स्थान से दूर उगाई जाने वाली हरी खाद की फसलें इस विधि में हरी खाद की फसल को अन्य खेतों में उगाते हैं तथा हरी खाद की फसल को एक खेत में काटकर अन्य दूसरे खेत में मिट्टी पलटने वाले हल की सहायता से पत्तियों, तनों आदि को मिट्टी में मिला दिया जाता है। अधिक दिनों की फसल हो जाने के पश्चात उनका रेशा कड़ा हो जाता है जिससे उनके अवधरन की क्रिया सुचारू रूप से नहीं हो जाती इसलिए जब रेशा मुलायम हो उसी अवस्था में फसल की जुताई कर पलटना आवश्यक होता है। वैसे सामान्यतः 40-60 दिन की फसल होने पर मिट्टी पलट हल से अच्छी तरह से जुताई कर फसल को 15-20 सेमी. की गहराई पर मिट्टी में मिलाकर खेत में पानी भर देना चाहिए। जब धान के खेत में नाइट्रोजन की पूर्ति हेतु यूरिया का छिड़काव किया जाता है उस क्रिया में हरी खाद के फसल की अपघटन में सहायता मिलती है तथा फसल की पैदावार के साथ-साथ अगली फसल के लिए पर्याप्त मात्रा में कार्बनिक पदार्थ मृदा में उपलब्ध हो जाता है ओर मृदा संरचना में सुधार होता है तथा सूक्ष्म पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ जाती है तथा आपूर्ति सुलभ हो जाती है।

आज की आधुनिक खेती में यूरिया उर्वरक की मांग वर्ष दर वर्ष बढ़ती जा रही है। जिसके कारण बाजार में पर्याप्त मात्रा में यूरिया उपलब्ध करा पाना बहुत बड़ी चुनौती है। इस परिदृश्य में हरी खाद का उपयोग कर यूरिया उर्वरक बचत करने का वैकल्पिक उपाय है। मृदा उर्वरता एवं उत्पादकता बढ़ाने में हरी खाद का प्रयोग प्राचीन काल से चला आ रहा है। सघन कृषि पद्धति के विकास तथा नगदी फसलों के अंतर्गत क्षेत्रफल बढ़ने के कारण हरी खाद के प्रयोग में निश्चित ही कमी आई है। लेकिन बढ़ते उर्जा संकट, उर्वरकों के मूल्यों में वृद्धि पर्याप्त आपूर्ति न होना तथा गोबर की खाद एवं अन्य कंपोस्ट जैसे कार्बनिक स्त्रोतों की सीमित आपूर्ति से आज हरी खाद एक वैकल्पिक एवं प्रभावकारी उपाय है।

हरी खाद क्या है?:- दलहनी एवं अदलहनी फसलों को उनके वानस्पतिक वृद्धि के उपरांत मृदा की उर्वरता एवं उत्पादकता बढ़ाने के लिए जुताई करके मिट्टी में अपघटन के लिए दबाना ही हरी खाद देना है, ये फसलें अपने जड़ ग्रंथियों में उपस्थित सहजीवी जीवाणु द्वारा वायुमंडल में विद्यमान अपार भंडार से नाइट्रोजन का स्थिरीकरण करने में सहयोग प्रदान करते हैं।

हरी खाद के लाभ:-

1. मृदा सतह में पोषक तत्वों का संरक्षण एवं एकत्रीकरण।
2. मृदा में जीवांश एवं फसलों हेतु आवश्यक नाइट्रोजन।

की उपलब्धता बढ़ाते हैं।

3. खरपतवार नियंत्रण।
4. मृदा की भौतिक दशा सुधार करना।
5. क्षारीय एवं लवणीय भूमियों का सुधार करना।
6. वर्षा जल को भूमि में अधिक मात्रा में अवशोषण करने की क्षमता बढ़ाना।
7. फसलों के उत्पादन में वृद्धि करना।

हरी खाद के आवश्यक गुण:-

1. फसल कम समय में अधिक वृद्धि करती हो।
2. फसल की जड़ें अधिक गहराई तक पहुंचती हो।
3. फसल के वानस्पतिक अंग मुलायम हो।
4. मृदा के जीवांश पदार्थ के स्तर को बनाए रखने के लिए हरी खाद उगाना आवश्यक है।
5. लवणीय भूमि के सुधार के लिए व मृदा क्षरण/कटाव को कम करने हेतु।
6. रासायनिक खादों के उपयोग में निरंतर कमी लाने हेतु।
7. फसल की जल मांग व पोषक तत्वों संबंधी मांग कम हो।
8. कीट पतंगों के आक्रमण को सहन करने वाली हो।
9. भूमि पर प्रभाव अच्छा छोड़ती है।
10. विभिन्न प्रकार की मृदाओं में पैदा हाने में सक्षम हो।

हरी खाद की फसलें:- सनई, ढैंचा, उर्द, लोबिया, बरसीम, मूंग सैंजी, ग्वार इत्यादि।

हरी खाद देने की विधियां:-

1. हरी खाद की स्थानीय विधि (इन सिटू विधी):- इस विधि में हरी खाद की फसल को उसी खेत में लगाया जाता है। जिसमें हरी खाद का उपयोग करना होता है, यह विधि समुचित वर्षा अथवा सुनिश्चित सिंचाई वाले क्षेत्रों में अपनाई जाती है। इस विधि में फूल आने से पूर्व वानस्पतिक वृद्धिकाल (6-8 सप्ताह) में मिट्टी में पाटा या ग्रीन मैन्योर टैम्पलर से पलट दिया जाता है।
2. हरी पत्तियों की हरी खाद:- इस विधि में हरी खाद की फसलों की पत्तियों एवं कोमल शाखाओं को तोड़कर खेत में फैलाकर जुताई द्वारा मृदा में दबाया जाता है। व हल्की सिंचाई कर उसे सड़ा दिया जाता है। यह विधि कम वर्षा वाले क्षेत्रों में उपयोगी होती है।

प्रमुख हरी खाद फसलों की विशेषताएं

क्र.सं	फसल	बीज दर प्रति हे./ कि.ग्रा.	हरे पदार्थ की मात्रा (टन/हे.)	नाइट्रोजन का प्रतिशत	प्राप्त नाइट्रोजन हे./ कि.ग्रा.
1.	ढैंचा	35	20-25	0.42	84-105
2.	सनई	30	20-30	0.43	86-129
3.	मूंग	10-12	8-10	0.48	38-48
4.	उर्द	10-12	10-12	0.41	41-49
5.	लेबिया	50-60	15-18	0.49	74-88
6.	ग्वार	25-30	20-25	0.34	68-85
7.	सैंजी	30-35	7-8	0.49	60-70
8.	बरसीम	30-35	6-8	0.46	55-65

जैविक खेती अपनाएंगे हम स्वर्ग धरा पर लाएंगे

रेनू आर्य एवं सोनम आर्य[1]

कृषि विज्ञान केंद्र, बहराइच

[1]कालेज आफ एप्लाइड एजूकेशन एवं हेल्थ साइन्स, मेरठ

आवश्यकता अविष्कार की जननी है। इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए हमारी सरकार द्वारा देश में खाद्यान्न आवश्यकता की पूर्ति हेतु कृषि शोध पर विशेष ध्यान दिया गया जिसके परिणामस्वरूप आज हम इतनी अधिक जनसंख्या की क्षुदा पूर्ति करने में समर्थ हुए हैं, परंतु इस क्षुदा पूर्ति हेतु हमने कृषि उत्पादन बढ़ाने के लिए रासायनिक खादों, उर्वरकों एवं कीटनाशकों का बहुत बड़े स्तर पर उपयोग किया। इन रासायनिक खादों के प्रयोग से कृषि उत्पादन बढ़ा तो अवश्य, परंतु इसके दुष्परिणाम भी शीघ्र ही सामने आने लगे। जिसकी वजह से हमें इनके विकल्प के रूप में जैविक खादों के रूप में प्रयोग किए जाने वाले उत्पादों की आवश्यकता महसूस हुई। इन जैविक खादों के प्रयोग से पौधों के लिए आवश्यक पोषक तत्व आसानी से उपलब्ध होने के साथ-साथ, मृदा के भौतिक, रासायनिक तथा जैविक गुणों के ह्रास से भी बचा जा सकता है और रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग को कम कर सकते हैं, जो पर्यावरण के लिए भी सुरक्षित है। जैविक उर्वरक से तात्पर्य ऐसे उर्वरक से है जिसका निर्माण मृदा में पाए जाने वाले लाभदायक सूक्ष्म जीवों जैसे जीवाणु, फफूंद, शैवालों द्वारा किया गया हो जो भूमि उर्वरता के साथ-साथ फसलोत्पादन को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाहन कर सके। ये सूक्ष्मजीव वायुमंडलीय नाइट्रोजन पौधों को उपलब्ध कराते हैं तथा भूमि में उपलब्ध अघुलनशील फॉस्फोरस को घुलनशील बनाते हैं और साथ ही खेतों में बचे अवशेषों को सड़ाने में भी सहायक होते हैं। इन सूक्ष्मजीवों द्वारा पहुंचाए जाने वाले लाभ की मात्रा इनकी मृदा में संख्या और क्षमता पर निर्भर करती है, जो मुख्य रूप से मृदा के प्रकार तथा पर्यावरणीय कारकों पर निर्भर करती है। जब इन सूक्ष्म जीवों की संख्या और उनकी क्रियाशीलता मृदा में असामान्य होती है, तो उसे कृत्रिम रूप प्रदान करते हैं, जिन्हें जैव उर्वरक (बायोफर्टीलाइजर) कहते हैं। इन जैव उर्वरकों का प्रयोग भूमि की जैविक क्रियाओं को बढ़ाने तथा पौधों को आवश्यक पोषक तत्वों को उपलब्ध कराने के लिए किया जाता है।

जैव प्रतिरोपकों का वातावरण में उपस्थित सूक्ष्मजीवियों से सीधा संबंध होता है। अतः यदि इन दोनों के मध्य सामंजस्य नहीं होगा तो प्रतिरोपक अपना कार्य कुशलतापूर्वक नहीं कर सकेगा। यही कारण है कि अलग-अलग स्थान पर प्रतिरोपक एक समान कार्य नहीं कर पाते हैं। इसीलिए जैव प्रतिरोपकों का विस्तृत प्रयोग करना होता है।

कृषि मंत्रालय के अंतर्गत एक राष्ट्रीय अभियान जैव प्रतिरोपकों की उपयोगिता हेतु गाजियाबाद में चलाया जा रहा है, जिसके 6 क्षेत्रीय कार्यालय हैं। इस अभियान के मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित हैं:-

1. जैव प्रतिरोपकों के उत्पादन हेतु आर्थिक सहायता उपलब्ध कराना।
2. जैव प्रतिरोपकों की महत्ता के प्रदर्शन प्रयोग आयोजित करना तथा उनका तकनीकी साहित्य उपलब्ध कराना।
3. इन उत्पादों की गुणवत्ता का ध्यान रखना।

यद्यपि जैव प्रतिरोपकों के अनगिनत फायदे हैं फिर भी इनका प्रयोग भारतवर्ष में बहुत कम हो रहा है। इसका एक मुख्य कारण उत्पादकों को इनकी अनुउपब्धता तथा दूसरा कारण कृषकों को इनकी जानकारी प्राप्त न होना है। इन प्रतिरोपकों के प्रशिक्षण कार्यक्रम तथा प्रदर्शन करने पर कृषकों में इसके प्रति उत्साह बढ़ेगा तथा वह इस जैव प्रौद्योगिकी से फायदा उठा कर अधिक से अधिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं।

जैविक खाद- जैविक खादों का तात्पर्य कार्बनिक पदार्थों से है, जिनके सड़ने पर कार्बनिक अम्ल उत्पन्न

होता है। इसमें मुख्यतः फसल के अवशेष, पशुओं का मलमूत्र आदि होता है। इसमें फसलों के लिए सभी आवश्यक पोषक तत्व कम मात्रा में ही सही परंतु उपस्थित होते हैं। इनमें मृदा को सभी पोषक तत्व, जो फसलें अपनी बढ़वार के लिए ग्रहण करती है, पुनः प्राप्त हो जाते हैं। आधुनिक कृषि में खेती की सघन पद्धतियां अपनाई जा रही हैं, जिनसे एक ही खेत में लगातार कई फसलें लेने से मृदा में कार्बनिक पदार्थ की कमी हो जाती है। जिससे मृदा की संरचना और उर्वरा शक्ति पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इसलिए मृदा में कार्बनिक पदार्थ को स्थिर रखने के लिए जैविक खादों का उपयोग अति आवश्यक है। साथ ही साथ जैविक खाद मृदा की संरचना, वायु, तापमान, जलधारण क्षमता, जीवाणु संख्या तथा उनकी अभिक्रियाओं, बेस विनिमय क्षमता और भूमि कटाव को रोकने पर अच्छा प्रभाव डालती हैं।

हमारे देश में काफी समय से जैविक खादों का प्रयोग परंपरागत खेती में होता आया है। इनमें प्रमुख कंपोस्ट खाद है, जो शहरों में कूड़े-करकट, फसल अवशेष और गोबर से तैयार की जाती है। गोबर की खाद में अन्य कंपोस्ट की अपेक्षा नाइट्रोजन तथा फॉस्फोरस अधिक मात्रा में पाए जाते हैं। जैविक खादों में लगभग सभी आवश्यक पोषक तत्वों की मात्रा पाई जाती है।

जैव उर्वरक

अ- राइजोबियम

दलहन वर्गीय फसलों तथा सब्जियां जैसेः- चना, मटर, मूंग, अरहर, मूंगफली, लोबिया, बैगन, टमाटर आदि के जड़ों में जड़ ग्रन्थियां पाई जाती हैं जिसमें राइजोबियम नामक जीवाणु बहुत अधिक संख्या में भरे रहते हैं। यह राइजोबियम नामक जीवाणु के साथ मिलकर वातावरण से नाइट्रोजन का मृदा में स्थिरीकरण तथा यौगिकीकरण करके नाइट्रोजन की उपलब्धता पौधों के लिए बढ़ाती हैं, जिससे पौधों की वृद्धि अच्छी होती है तथा फसल एवं मृदा की उत्पादकता भी बढ़ती हैं। राइजोबियम मृदा में पूरी दक्षता से नाइट्रोजन का स्थिरीकरण करें, इसके लिए यह आवश्यक है कि मृदा में कार्बनिक पदार्थ की पर्याप्त मात्रा उपस्थित हो, मृदा का पी.एच. मान उदासीन हो अर्थात पी. एच. 6.5 से कम न हो यदि हो तो मृदा में चूना मिलाकर पी.एच. को उदासीन कर लेना चाहिए। दिन तथा रात का मृदा तापमान 24-27 डिग्री सेंटीग्रेड होने पर जड़ ग्रंथि के निर्माण एवं नाइट्रोजन स्थिरीकरण के लिए उपयुक्त होता है। गर्मी के महीनों में फसलों की लगातार सिंचाई भी राइजोबियम के लिए लाभकारी है। राइजोबियम उपचारित फसल में 10-20 किग्रा. नाइट्रोजन प्रति हेक्टेयर की दर से बुआई के समय "आधारीय छिड़काव" फसलों की प्रारंभिक बढ़वार के लिए लाभकारी पाया गया है। राइजोबियम के पैकेट पर जिस फसल का नाम लिखा हो उसे उसी फसल के बीजों को उपचारित करने के लिए प्रयोग करना चाहिए।

आधा हेक्टेयर क्षेत्रफल के लिए आवश्यक बीज की मात्रा को उपचारित करने के लिए 200 ग्राम राइजोबियम संवर्धन की आवश्यकता पड़ती है। बीज उपचारित करने के लिए 50 ग्राम गुड़ को आधा लीटर पानी में गर्म करके गाढ़ा घोल बना लेना चाहिए, जिसे बीज पर भली भांति ठंडा करके छिड़काव करने के बाद उस पर राइजोबियम के संवर्धन को छिड़कना चाहिए और छाया में बीज को सुखाने के बाद उसे 8-10 घंटे में बुआई कर देना चाहिए। उपरोक्त प्रकार से बीज पर "राइजोबियम संवर्धन" आसानी से चिपक जाता है। चिपचिपे पदार्थ के रूप में ऐरेबिक की गोंद भी प्रयोग कर सकते हैं।

ब- एजोटोबैक्टर

आदर्श परिस्थिति में एजोटोबैक्टर 15 से 20 किग्रा. नाइट्रोजन प्रति हैक्टेयर प्रति वर्ष की दर से स्थिरीकरण करते हैं, जबकि इस नाइट्रोजन का कुछ भाग एजोटोबैक्टर स्वयं अपने वृद्धि के लिए ग्रहण कर लेते हैं, फिर भी इसका प्रयोग अकार्बनिक उर्वरकों के साथ करना पौधों के लिए लाभकारी पाया गया है। मृदा में नाइट्रोजन स्थिरीकरण के अतिरिक्त एजोटोबैक्टर कुछ "पादप वृद्धि नियामक" की मात्रा में भी वृद्धि करते हैं जैसे विटामिन 'बी', पादप हार्मोन-इंडोल एसिटिक एसिड, जिब्रेलिक एसिड और साइटोकाइनिन आदि। एजोटोबैक्टर की वृद्धि तथा विकास एवं नाइट्रोजन स्थिरीकरण के लिए मृदा का आदर्श पी. एच. मान 6.5 से 7.5 तक होता है। एजोटोबैक्टर को विभिन्न फसलों जैसेः- सब्जी वाली फसलों, अनाज

वाली फसलें, गन्ना और बागवानी वाली फसलों में प्रयोग करना चाहिए। निम्नलिखित तीन विधियों में से किसी एक विधि द्वारा एजोटोबैक्टर को फसलों पर उपचारित करना चाहिए।

बीज उपचार: सवा एक लीटर पानी में 100 ग्राम गुड़ अथवा 50 ग्राम चीनी को गरम करके गाढ़ा चिपचिपा घोल तैयार करके ठंडा करने के उपरांत उसमें 500 ग्राम एजोटोबैक्टर का संवर्धन डालकर गाढ़ा घोल तैयार कर लेना चाहिए, यह गाढ़ा घोल 8 से 10 किग्रा. बीज को उपचारित करने के लिए पर्याप्त होता है। बीज को उपचारित करने के बाद छाया में सुखाकर ही अतिशीघ्र बुआई करनी चाहिए।

पौधों की जड़ का उपचार: 500 ग्राम सूखी गोबर की खाद को 2.5 ली. पानी में डालकर गाढ़ा घोल (स्लरी) बनाने के बाद 500 ग्राम एजोटोबैक्टर कल्चर को डालकर इस गाढ़े घोल में पौधों की जड़ को 10 मिनट तक डुबोकर उपचारित करने के उपरांत पौध रोपित करना चाहिए। इस प्रकार का उपचार अधिकांशतः सब्जियों वाली फसलों जैसे फूल गोभी, टमाटर, बैंगन, मिर्च तथा प्याज में तथा धान की पौध की जड़ पर करना चाहिए।

मृदा उपचार: एजोटोबैक्टर की 1-5 किग्रा. मात्रा विभिन्न फसलों के अनुसार, 10-20 किग्रा. महीन पिसी हुई मृदा या बालू में मिलाकर प्रति हेक्टेयर की दर से खेतों में फसलों की बुआई के पूर्व उर्वरकों की तरह छिड़काव करना लाभप्रद होता है।

स- फॉस्फेट घोलक जीवाणु (पी.एस.बी. या पी.एस.एम.)

फॉस्फोरस पौधों के लिए आवश्यक पोषक तत्व है, एक अनुमान के अनुसार भारतवर्ष में प्रति वर्ष 2.8 मिलियन टन फॉस्फोरस खेतों में प्रयोग हो रहा है, जिसकी केवल 20-30 प्रतिशत मात्रा ही पौधों को उपलब्ध हो पाती है, क्योंकि अन्य फॉस्फोरस का मृदा में लौह-फॉस्फेट या कैल्शियम फॉस्फेट के रूप में स्थिरीकरण (जमा) हो जाता है, स्यूडोमोनास तथा बैसिलस प्रजाति के कुछ जीवाणु कार्बनिक अम्ल के रिसाव द्वारा स्थिरीकृत फॉस्फेट को घोलकर पौधों को इनकी उपलब्धता सफलतापूर्वक कराने में सक्षम पाए गए हैं, जिसे 'फॉस्फेट घोलक जीवाणु' कहते हैं। इस प्रकार के जैव उर्वरक जैसे राइजोबियम या एजोटोबैक्टर के साथ 1: 2 में मिलाकर प्रयोग कर सकते हैं। यह पाया गया है कि इस प्रकार के जैव उर्वरक (फॉस्फेट घोलक जीवाणु) मृदा से कुछ अधिक ही मात्रा में कार्बन को अपने भोजन के रूप में प्रयोग करते हैं। अतः इस प्रकार से उपचारित खेतों में कार्बनिक खादों की पर्याप्त मात्रा होना आवश्यक है, जो अन्ततः लाभकारी ही होगा। निम्नलिखित विधियों द्वारा हम विभिन्न फसलों को 'फॉस्फेट घोलक जीवाणु' द्वारा उपचारित कर सकते हैं।

बीज उपचार : सवा एक लीटर पानी में 100 ग्राम गुड़ अथवा 50 ग्राम चीनी को गरम करके गाढ़ा चिपचिपा घोल तैयार करके ठंडा करने के उपरांत उसमें 500 ग्राम 'फॉस्फेट घोलक जीवाणु' का संवर्धन डालकर गाढ़ा घोल तैयार कर लेना चाहिए, यह गाढ़ा घोल 8 से 10 किग्रा. बीज को उपचारित करने के लिए पर्याप्त होता है। बीज को उपचारित करने के बाद छाया में सुखाकर ही बुआई करनी चाहिए।

पौध जड़ उपचार : 500 ग्राम सूखे गोबर की खाद को 2.5 ली. पानी में डालकर गाढ़ा घोल (स्लरी) बनाने के बाद 500 ग्राम 'फॉस्फेट घोलक जीवाणु' को डालकर इस गाढ़े घोल में पौधों की जड़ को डुबोकर उपचारित करने के उपरांत रोपित करना चाहिए। इस प्रकार का उपचार अधिकांशतः सब्जियों वाली फसलों जैसे फूल गोभी, टमाटर, बैंगन, मिर्च तथा प्याज में तथा धान की पौध की जड़ पर करना चाहिए।

मृदा उपचारण : 'फॉस्फेट घोलक जीवाणु' के संवर्धन की 800 ग्राम मात्रा विभिन्न फसलों के अनुसार, 10-20 कि.ग्रा. महीन पिसी हुई मृदा या बालू में मिलाकर प्रति हेक्टेयर की दर से खेतों में फसलों की बुआई के पूर्व उर्वरकों की तरह छिड़काव करना लाभप्रद होता है।

जैव उर्वरकों के लाभ

जैव उर्वरक फसलों तथा मृदा को कई प्रकार से लाभ पहुंचाते हैं, जो निम्न प्रकार से हैं:-

- वायुमंडलीय नाइट्रोजन का यौगिकीकरण करते हैं

तथा मृदा में उपस्थित अघुलनशील फॉस्फोरस को घुलनशील रुप में परिवर्तित कर पौधों को उपलब्ध कराते हैं।

- पौधों को जैविक नाइट्रोजन प्रदान करते हैं।
- बी.जी.ए., एजोटोबैक्टर तथा एजोस्पिरिलियम कुछ वृद्धि कारक जैसे आई.ए.ए., आई.बी.ए., विटामिन आदि भी स्रावित करते हैं, जो पौधों की वृद्धि को तेज कर देते हैं।
- मृदा में उत्पन्न होने वाली बीमारियों को कम करते हैं और उनको फैलने से रोकते हैं।
- मृदा में पाए जाने वाले लाभदायक सूक्ष्म जीवाणुओं को जीवित रखने में तथा उनकी क्रियाशीलता बढाने में सहायक होते हैं।
- इनके प्रयोग से भूमि के भौतिक गुण जैसे कि संरचना, कणाकार, सुघट्यता एवं रासायनिक गुण जैसे किः- जल अवशोषण क्षमता, भूमि की धनायन विनिमय क्षमता, मिट्टी की बफर क्षमता आदि में वृद्धि होती है।
- मिट्टी की उर्वरता तथा उत्पादकता को काफी समय तक बनाए रखते हैं।
- फसलों के वानस्पतिक परिवर्धन में बढ़ोत्तरी होती है।
- फसल काटने के बाद पशुओं को चारे के द्वारा अच्छे पोषक तत्व प्राप्त हो जाते हैं।
- आर्थिक दृष्टि से किसानों के लिए लाभकारी हैं।
- पर्यावरण को प्रदूषण रहित बनाए रखने में सहायक होते हैं।

जैव उर्वरकों से अच्छे परिणामों के उपाय

- जैविक उर्वरकों से उपचारित बीज को रासायनिक उर्वरक के साथ कभी भी नहीं मिलाना चाहिए।
- उस स्थिति में जब बीज को फफूंदी नाशकों से उपचारित करना हो तो पहले बीज को फफूंदी नाशकों से उपचारित करके उसके बाद 24 घंटे छाया में सुखाने के बाद जैव उर्वरकों से उपचारित करना चाहिए।
- मृदा का पी. एच. मान 6.5 से 7.5 के मध्य होना चाहिए।
- अम्लीय भूमियों में जब जैव उर्वरक का प्रयोग करना हो तो बीज को उपचारित करने के तुरंत बाद कैल्शियम कार्बोनेट पाउडर की एक परत चढ़ा देनी चाहिए और क्षारीय भूमि में जिप्सम की परत चढ़ा देनी चाहिए।
- जैव उर्वरक के पैकेट को सूर्य ताप से बचाना चाहिए।

जैव उर्वरकों के प्रयोग तथा उत्पादन में बाधायें

- अप्रभावी जीवों की उपस्थिति।
- प्रतिरोध की उपस्थिति।
- अच्छे-अच्छे प्रभेदों (स्ट्रेनों) की कमी।
- सड़न के दौरान उत्परिवर्तन हो जाना।
- जैव उर्वरक की कम जीवन अवधि।
- आर्थिक दृष्टिकोण से उपकरणों का अत्यधिक महंगा होना।

कृषि उत्पादन मनुष्य का प्राचीनतम व्यवसाय है। जैव प्रतिरोपक जो कि पर्यावरण के प्रति उत्तम होते हैं तथा कम खर्च में उत्पादित किए जा सकते हैं। अतः इनका भारतीय परिप्रेक्ष्य में अत्यधिक महत्व है। जैव प्रतिरोपकों का सफल विकास जो कि कृषकों की महत्वाकांक्षाओं को पूरा कर सके, एक अत्यंत उत्तम विषय होगा। इस कार्य हेतु नई-नई तकनीकों का विकास आवश्यक है, जिनको उत्पादन हेतु प्रयोग किया जा सके। उत्पादों की अनुसंधान परख तथा सही जानकारी भी अति आवश्यक है। भारतीय कृषक अब रासायनिक उर्वरकों के विपरीत प्रभाव को जान गया है। अतः वह अधिक से अधिक जैविक खादों का प्रयोग करना चाहता है, जिससे कि उसकी मृदा सुरक्षित रह सके, साथ ही कृषकों को जैव प्रतिरोपकों की सीमाओं तथा संयमित फायदों की जानकारी भी अति आवश्यक है जिससे कि उन्हें बाद में हताश न होना पड़े। इन जानकारियों के उपरांत जैव प्रतिरोपकों के फायदे तथा विस्तृत लाभ से लाभान्वित हुआ जा सकता है।

गोबर की खाद- भारत में प्रत्येक किसान खेती के साथ-साथ पशुपालन भी करता है यदि किसान अपने उपलब्ध

फसल अवशेषों और पशुओं के गोबर का प्रयोग खाद बनाने के लिए करें तो स्वयं ही उच्च गुणवत्ता की खाद तैयार कर सकता है। अच्छी खाद बनाने के लिए 1 मीटर गहरा अथवा आवश्यकतानुसार 5 से 10 मीटर लंबाई का गड्ढ़ा खोदकर उसमें उपलब्ध फसल अवशेष की एक परत पर गोबर तथा पशुमूत्र की एक पतली परत दर परत बिछा देते हैं। उसे अच्छी तरह नम करके गड्ढे को उचित ढंग से ढककर मिट्टी और गोबर से बंद कर देते हैं। इस प्रकार दो महीने में 3 पलटाई करने पर अच्छी गुणवत्ता की खाद बनकर तैयार हो जाएगी।

वर्मी कंपोस्ट (केंचुआ खाद)- इसमें केंचुओं द्वारा गोबर और अन्य अवशेषों को कम समय में उत्तम गुणवत्ता की जैविक खाद में बदल देते हैं। इस तरह की जैविक खाद से मृदा की जलधारण क्षमता में वृद्धि होती है। यह भूमि की उर्वरा शक्ति बढ़ाने, दीमक के प्रकोप को कम करने और पौधों को संतुलित मात्रा में आवश्यक पोषक तत्व प्रदान करने के लिए उत्तम है।

हरी खाद- जैविक खेती हेतु वर्षा ऋतु में जल्दी बढ़ने वाली दलहनी फसलें जैसे ढैंचा, सनई, लोबिया, ग्वार आदि उगाकर कच्ची अवस्था में लगभग 40 से 50 दिन बाद खेत में जुताई करके मिट्टी में मिला देते हैं। इस प्रकार हरी खाद भूमि सुधारने, मिट्टी कटाव को कम करने, नाइट्रोजन स्थिरीकरण, मिट्टी संरचना और जलधारण क्षमता को बढ़ाने में सहायक सिद्ध होगी।

गोबर गैस स्लरी खाद- जैविक खेती में गोबर गैस संयंत्र से निकली हुई स्लरी को सीधे ही गोबर की खाद के रूप में खेत में प्रयोग की जा सकती है। यह शीघ्र ही फसल को लाभ पहुंचाती है, गोबर की खाद मृदा में मिलाने पर एक लंबी प्रक्रिया से गुजरने के बाद उसके पोषक तत्व फसल को उपलब्ध हो जाते हैं। एकत्रित स्लरी खाद का चूरा बना करके उसे सीधे ही कूड़ों में डाला जा सकता है। दो घन मीटर गैस संयत्र के प्रति वर्ष 10 टन बायो गैस स्लरी की खाद प्राप्त होती है।

इसमें नाइट्रोजन 1.5 से 2 प्रतिशत, फॉस्फोरस 1.0 प्रतिशत पोटाश 1.0 प्रतिशत पाया जाता है। पतली स्लरी में 2 प्रतिशत नाइट्रोजन, अमोनिकल नाइट्रोजन के रूप में होता है। इसलिए इसे सिंचाई जल के साथ नालियों में दिया जाए तो इसका तत्काल प्रभाव फसल पर स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। सूखी स्लरी में से नाइट्रोजन का कुछ भाग हवा में उड़ जाता है, प्रति हैक्टेयर 5 टन स्लरी की मात्रा असिंचित क्षेत्रों में तथा 10 टन स्लरी सिंचित क्षेत्रों में प्रयोग करना चाहिए।

फॉस्फो कंपोस्ट- भारत की अधिकांश भूमियों में फॉस्फोरस की मात्रा कम से मध्यम तक पाई जाती है। विभिन्न प्रकार के फसल अवशेषों के साथ सस्ती रॉक फॉस्फेट का प्रयोग करके फॉस्फो कंपोस्ट तैयार की जाती है। इस तरह से कंपोस्ट बनाने में रॉक फॉस्फेट में अप्राप्य फॉस्फोरस को प्राप्य फॉस्फोरस में परिवर्तित कर पौधों को उपलब्ध हो जाता है। फॉस्फो कंपोस्ट बनाने के लिए फसल के विशेष, खरपतवार तथा अन्य कार्बनिक पदार्थो को इकट्ठा करके उन्हें छोटे-छोटे टुकड़ों में काट लिया जाता है। कंपोस्ट बनाने के लिए 8 भाग कार्बनिक पदार्थ तथा फसल अवशेष, 1 भाग गोबर, 0.5 भाग छनी हुई मिट्टी तथा 0.5 भाग सड़ी हुई गोबर की खाद का मिश्रण बनाकर उपयोग किया जाता है पहले से तैयार किए गए गड्ढे (3-4 मीटर लंबा, 2 मीटर चौड़ा तथा 1 मीटर गहरा) में 15-20 सेमी मोटा परत बिछाकर खराब किस्म की रॉक फॉस्फेट की पतली परत बिछाकर आवश्यकतानुसार पानी से गीला कर देते हैं। इस प्रकार संपूर्ण गड्ढे को 50 सेमी जमीन की ऊंचाई तक भर दिया जाता है। इसके पश्चात 1 माह के अंतराल पर पलटते रहते हैं। इस प्रकार इस विधि द्वारा फॉस्फोरस की कंपोस्ट तैयार की जाती है। मसूरी रॉक फॉस्फेट (5 प्रतिशत फॉस्फोरस) द्वारा तैयार की गई कंपोस्ट में साइट्रेट में घुलनशील फॉस्फोरस की उच्च मात्रा पाई जाती है।

प्रतिवलित कंपोस्ट- कंपोस्ट बनाने की यह विधि सामान्य है इसमें फसल अवशेषों की 10-15 सेमी मोटी परत बिछाने के बाद परत के ऊपर 10 प्रतिशत की दर से गोबर के घोल का छिड़काव कर दिया जाता है। इसी क्रम में गड्ढे को पूरा भर दिया जाता है। इस विधि का प्रयोग किए जाने वाले कार्बनिक अपशिष्ट में 500 ग्राम प्रति टन की दर से शुष्क माइसीलियम (Mycelium) मिला देते हैं। इस कवक संदर्भ ट्राइकोरस स्पाइरेलिस (Trichorus

spiralis), कोर्पिनस एफेमेरस (Coprinus ephemerus), चैकटोनियम (Chactonium), ट्राइकोडर्मा विरडी (Trichoderma viridi), ट्राइकोडर्मा रेसेसी (Trichoderma resesii), एस्परजिलस पेसिलयोमाइल (Aspergillus paciliomyes), फसिस्पोरस (Fusisporus) and पेनिसिलियम एसपीपी. (Penicillium spp.) की प्रजातियों को उच्च कार्बन/नाइट्रोजन अनुपात वाले पदार्थ जैसे गेहूं एवं धान के भूसे, गन्ने की पत्तियां, केले की पत्तियां एवं तनों के लिए प्रभावकारी पाए गए हैं। कंपोस्ट बनाते समय पर्याप्त मात्रा में नमी बनाए रखनी चाहिए। खाद बनाते समय गड्ढे की 2-3 बार पलटाई करना आवश्यक है क्योंकि खाद बैठकर ठोस न हो जाए। पहली पलटाई गड्ढा भरने के 15 दिन उपरांत, दूसरी पलटाई पहली पलटाई के 1 माह बाद तथा तीसरी पलटाई दूसरी पलटाई के 2 माह के बाद करनी चाहिए। प्रत्येक पलटाई पहली पलटाई के समय पर्याप्त मात्रा में पानी डालकर नम करना आवश्यक है। इस विधि द्वारा कंपोस्ट बनाने में लगभग 8-10 माह का समय लग जाता है।

इस कंपोस्ट को बनाने में उच्च कार्बन/नाइट्रोजन अनुपात वाले जीवांश पदार्थों के विघटन में सामान्य पदार्थ की तुलना में आधे समय में पूर्ण हो जाती हैं। सेल्यूलोज के परिपाचन करने वाले संदर्भ (Cellulolytic inoculum) के प्रयोग के कारण इस विधि से तैयार कंपोस्ट में नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटाश तथा ह्यूमस की मात्रा अधिक पाई जाती है। धान के पुआल का प्रयोग करके बनाई गई कंपोस्ट में 1.3 से 1.76 प्रतिशत नाइट्रोजन तथा कार्बन/नाइट्रोजन का अनुपात 18.9 से 12.3ः1 पाया जाता है परंतु सेल्यूलोज के परिपाचन के संबर्द्ध के प्रयोग से नाइट्रोजन की मात्रा 1.15 से 1.52 प्रतिशत तथा कार्बन/नाइट्रोजन अनुपात 23.9 से 15.5ः1 हो जाता है।

फसल अवशेषों की कंपोस्ट- इस विधि में 5-6 मीटर लंबाई, 1.5 से 2.0 मीटर चैड़ाई तथा 1.0 मीटर गहराई का गड्ढा कर लेते हैं। इसमें गन्ने की पत्तियां, फसल के अवशेष, भूसा, डंठल, तने, आलू के वायवीय भाग, जलकुंभी, गाजर घास, सदाबहार एवं अन्य खरपतवारों का प्रयोग किया जाता है। सबसे पहले इन पदार्थों को चारा काटने वाली मशीन से छोटे-छोटे टुकड़ों में काट लिया जाता है। इन फसल अवशेषों को गड्ढे में 15-20 सेमी मोटी परत बिछा देते हैं। इस प्रकार से गड्ढे को जमीन की सतह से 50 सेमी ऊंचाई तक भर देते हैं। गड्ढा भरते समय यह ध्यान रखना आवश्यक है कि पर्याप्त मात्रा में पानी डालकर फसल अवशेषों को गीला करते रहना चाहिए। इस प्रकार प्रयुक्त सामग्री में 80 प्रतिशत तक नमी रहे। प्रत्येक सतह पर यूरिया का 5 प्रतिशत का घोल, रॉक फॉस्फेट, राइजोबियम, एजोटोबैक्टर जीवाणु कल्चर का प्रयोग करने से उत्तम किस्म की कंपोस्ट बनकर तैयार हो जाती है। इस प्रकार गड्ढा भर जाने के पश्चात मिट्टी तथा गोबर का मिश्रण बनाकर ऊपर से लिपाई कर दी जाती है। इस प्रकार गड्ढा बंद करने के एक माह बाद गड्ढे की पलटाई कर देनी चाहिए तथा पर्याप्त मात्रा में पानी डालकर इन पदार्थों को गीला कर देते हैं। इस तरह से 4-5 सप्ताह बाद और दो पलटाइयां कर देते हैं। इस तरह से 4-5 माह में कंपोस्ट बनकर तैयार हो जाती है। उपरोक्त प्रकार के तैयार की गई कंपोस्ट में 0.5 प्रतिशत नाइट्रोजन, 0.15 प्रतिशत फॉस्फोरस तथा 0.50 प्रतिश पोटाश की मात्रा पाई जाती है।

नाइट मिट्टी- ठोस अथवा द्रव्य अवस्था में मनुष्यों की विष्टा को नाइट मिट्टी (Night soil) कहते हैं। चीन में नाइट मिट्टी का प्रयोग लगभग 2000 वर्षों से किया जा रहा है जिसका कि मुख्य कारण मृदा की अधिक उर्वरा शक्ति एवं उत्पादकता का होना है। इसके अतिरिक्त जापान एवं विश्व के कई अन्य देश इसका प्रयोग कर रहे हैं। देश में इस समय लगभग 13.5 मिलियन टन शुष्क पदार्थ हैं जिसमें 0.75 मिलियन टन नाइट्रोजन, 0.55 मिलियन टन फॉस्फोरस तथा 3.0 मिलियन टन पोटाश की उपलब्धता हो सकती है। नाइट मिट्टी में फॉस्फोरस तथा पोटाश तत्व की अधिकता होती है। इस प्रकार इसमें 5.5 प्रतिशत नाइट्रोजन, 4.0 प्रतिशत फॉस्फोरस तथा 2.0 प्रतिशत पोटाश पाया जाता है।

भारतवर्ष में सामान्यः नाइट मिट्टी का प्रयोग सीधे रूप में नहीं किया जाता है परंतु कुछ मात्रा में गड्ढे में कुछ दिनों तक रखने के बाद अथवा अन्य पदार्थों के साथ मिलाकर प्रयोग किया जाता है। इसके लिए गड्ढों को 4-5 मीटर लंबा, 1 मीटर चौड़ा तथा 0.5 मीटर गहरा गड्ढा बनाकर मनुष्यों का विष्ठा इसमें भर दिया जाता है। इसके बाद ऊपर से मिट्टी अथवा कचरा से ढक दिया जाता है। इस गड्ढे के सूखने के पश्चात खाद बनकर तैयार हो जाती हैं जिसे पौड रेट कहते हैं। इस नाइट मिट्टी में बराबर मात्रा में राख तथा 10 प्रतिशत चारकोल पाउडर तथा गंध कम करने वाले पदार्थ मिला दिए जाते हैं। इस प्रकार से तैयार खाद में 1.32 प्रतिशत नाइट्रोजन, 2.8 प्रतिशत फॉस्फोरस, 4.1 प्रतिशत पोटाश तथा 24.2 प्रतिशत चूना पाया जाता है। इसमें 40 से 50 प्रतिशत लकड़ी का बुरादा मिला देने से नाइट्रोजन की मात्रा 2-3 प्रतिशत तक हो जाती है।

सीवेज एवं स्लज- शहरों से निकले हुए मनुष्यों के मलमूत्र तथा अन्य पदार्थों का प्रयोग खाद के रूप में किया जाता है, जिसे सीवेज तथा स्लज कहते हैं। सीवेज एवं स्लज में बहुत अधिक मात्रा में पोषक तत्व पाए जाते हैं यह मुख्यतः दो रूपों में (1) ठोस तथा (2) द्रव्य के रूप में पाया जाता है। द्रव्य रूप का प्रयोग शहरों के आस-पास तथा किनारे के क्षेत्रों में फसलों एवं सब्जियों में सिंचाई हेतु प्रयोग किया जाता है जबकि ठोस रूप का प्रयोग खाद बनाकर फसलों में उत्पादकता बढ़ाने में मुख्य रूप से किया जाता है। शहरों के आस-पास तथा किनारे के क्षेत्रों में फसलों एवं सब्जियों में इसकी खाद का प्रयोग किया जाता है। इस ठोस पदार्थ को गड्ढे में एकत्रित कर लिया जाता है तथा सूखने के पश्चात बुआई के पूर्व खेत में अच्छी तरह से मिला देते हैं। द्रव्य रूप का प्रयोग फसलों में सिंचाई के रूप में करने पर फसलों को जल की आवश्यकता के साथ पोषक तत्वों की भी आपूर्ति सुनिश्चित हो जाती है। सीवेज एवं स्लज की खाद में 1.5-3.0 प्रतिशत नाइट्रोजन, 0.78 से 4.0 प्रतिशत फॉस्फोरस तथा 0.3 से 3.0 प्रतिशत पोटाश की मात्रा पाई जाती है। इस खाद एवं पानी का प्रयोग अधिक मात्रा में तथा अधिक समय तक करने से भूमि की भौतिक दशा खराब हो जाती है क्योंकि इसमें उपस्थित बहुत छोटे-छोटे कण मृदा की संरचना खराब करने में सहायक होते हैं जिससे भूमि में जलशोषण क्षमता, पारगम्यता, रन्ध्रावकास, वायु संचार आदि कम हो जाती है।

सांद्रित कार्बनिक खादें- सांद्रित कार्बनिक खादें वह होती हैं जिसमें आवश्यक पोषक तत्व जैसे नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटाश आदि की गोबर की खाद अथवा कंपोस्ट की अपेक्षा अधिक पाई जाती है। सान्द्रित कार्बनिक खादें पशुओं एवं फसलों के अवशेष अथवा सह उत्पाद होते हैं जैसे खली का खाद, मछली की खाद, रक्त की खाद, हड्डी का चूरा आदि।

(क) खली की खाद- तिलहनी फसलों की खली तेल निकालने के पश्चात यह प्राप्त होती है। सामान्यतः खली को दो भागों में विभक्त किया जाता हैः

(1) खाने वाली खली- इसका प्रयोग पशुओं को खिलाने के रूप में किया जाता है।

(2) बिना खाने वाली खली-जिसका प्रयोग पशुओं को खिलाने के रूप में नहीं किया जाता है। सामान्यतः खाने वाली खली जैसे सरसों, कपास, तिल, मूंगफली की खली को पशुओं को दाने अथवा रातव के रूप में प्रयोग करते हैं परंतु कुछ मात्रा में खाने वाली खली तथा बिना खाने वाली खली की संपूर्ण मात्रा का प्रयोग खाद के रूप में किया जाता है।

भारत वर्ष में प्रतिवर्ष लगभग 2-5 मिलियन टन खली का उत्पादन होता है। खली में पर्याप्त मात्रा में नाइट्रोजन की अधिक मात्रा के अतिरिक्त पर्याप्त मात्रा में फॉस्फोरस तथा पोटाश के साथ-साथ कार्बनिक पदार्थ पाया जाता है। महुआ की खली में 2.5 प्रतिशत नाइट्रोजन तथा कुसुम के छिलके उतारे हुए बीजों की खली में 7.9 प्रतिशत नाइट्रोजन पाया जाता है। इसके अतिरिक्त 0.8 से 2.9 प्रतिशत फॉस्फोरस तथा 1.2 से 2.2 प्रतिशत पोटाश पाया जाता है। खली की खादों में नाइट्रोजन की अधिक मात्रा पाए जाने के कारण इन्हें नाइट्रोजनीय कार्बनिक खाद भी कहते हैं।

विभिन्न प्रकार की खली में पोषक तत्वों की मात्रा निम्नवत हैं-

खली की खाद प्रयोग करने के तुरंत पश्चात ही पोषक तत्व प्रदान करती है यद्यपि वह खली जो जल में विलेय नहीं है परंतु इसमें नाइट्रोजन पौधों को 7-10 दिन में उपलब्ध हो जाता है। महुआ की खली का प्रयोग फसल की बुआई के 2 माह पूर्व से ही किया जाता है। महुआ की खली का प्रयोग लंबी अवधि में पकने वाली फसलों एवं बागानों में किया जाता है।

खली का प्रयोग करने के पूर्व अच्छी तरह से पीस कर पाउडर बना लिया जाता है। इसके पश्चात खेत में एक समान मात्रा में बुआई के समय अथवा बुआई के कुछ दिन पूर्व फैला देते हैं। मूंगफली की खली का प्रयोग गन्ने के खेत में खड़ी फसल पर छिड़क कर किया जाता है। फसल की किस्म के अनुसार खली की खाद का प्रयोग छिड़कावों विधि द्वारा जमीन के अंदर तथा पौधों पर मिट्टी चढ़ाते समय किया जाता है।

(ख) रक्त की खाद- रक्त की खाद फसलों को बहुत जल्दी पोषक तत्व प्रदान करती है तथा इनका प्रयोग खली की खाद के साथ भी किया जाता है। रक्त की खाद का प्रयोग सभी प्रकार की फसलों पर सभी प्रकार की मृदाओं में किया जा सकता है। रक्त की खाद में 10-12 प्रतिशत नाइट्रोजन तथा 1-2 प्रतिशत फॉस्फोरस पाया जाता है। एक व्यस्क पशु से लगभग 15 किलो रक्त जबकि भेड़ तथा बकरी से 1.5-2.0 किलो रक्त निकलता है। बूचड़खाने में रक्त को कंक्रीट के बने हुए गड्ढे में इकट्ठा कर लेते हैं। 100 पांड रक्त में 2 औंस क्यूप्रिक सल्फेट मिलाकर धूप में सूखने के लिए रख देते हैं। इसके पश्चात इसको गड्ढ़े से निकालकर फर्श पर जाली से ढककर सूखने के लिए रख देते हैं जब वह पूर्ण रूप से सूख जाता है तब इसको पीसकर पाउडर बनाकर फसलों में प्रयोग करते हैं।

(ग) मछली की खाद- जिन मछलियों का प्रयोग खाने के लिए नहीं किया जाता है उनका प्रयोग मछलियों की खाद बनाकर किया जाता है। इन मछलियों को सुखाकर मशीन द्वारा अच्छी तरह से बारीक पीस लिया जाता है। मछलियों को खाद में 4-10 प्रतिशत नाइट्रोजन, 3-9 प्रतिशत फॉस्फोरस तथा 0.3-1.5 प्रतिशत पोटाश पाया जाता है। मछलियों की खाद (सूखी मछलियां अथवा पाउडर के रूप में) बाजार में उपलब्ध होती है। मछली की खाद में पोषक तत्व की मात्रा मछली की किस्म पर भी निर्भर करती है।

(घ) सींगों अथवा खुरों की खाद- मरे हुए जानवरों से लगभग 3-4 किलोग्राम सींग एवं खुर प्रति जानवर प्राप्त होता है। इन खुरों एवं सींगों को पानी में उबालने के पश्चात सूखाकर पाउडर बना लेते हैं। इस प्रकार से तैयार की गई खाद में 13 प्रतिशत नाइट्रोजन पाया जाता है। देश में लगभग प्रति वर्ष 2000 टन सींगों एवं खुरों की खाद बनाई जाती है।

जीव-जन्तु से प्राप्त खादें- जीव-जन्तुओं से प्राप्त खादों के अंतर्गत मुख्यतः रक्त का चूरा, मछलियों का चूर्ण, सींग एवं खुरों की खाद, पंख तथा बाल की खाद, ऊन की रद्दी, ग्वानों तथा मुर्गी की खाद आदि आती हैं, जिनका विवरण निम्नवत हैः-

(क) रक्त का चूरा- बूचड़खाने से प्राप्त रक्त चूर्ण में 10-12 प्रतिशत नाइट्रोजन तथा 1-2 प्रतिशत फॉस्फोरस होता है यह समस्त प्रकार की मृदाओं तथा फसलों के लिए सर्वोत्तम खाद है।

(ख) मछलियों का चूरा- मछलियों से ताप एवं दाब की नियंत्रित दशाओं में तेल निकाल लेने के पश्चात बचे हुए अवशेष पदार्थ को मछलियों का चूरा कहते हैं। मछलियों के चूरा में 4-10 प्रतिशत नाइट्रोजन, 3-9 प्रतिशत फॉस्फोरस तथा 0.3-1.5 प्रतिशत पोटाश पाया जाता है। प्रयोग करने से पूर्व इन्हें बारीक पीस लेना चाहिए। यह सभी प्रकार की मृदाओं तथा फसलों के लिए सर्वोत्तम खाद है।

(ग) सींग एवं खुरों की खाद- एक पशु में 6 से 8 पौंड सींग तथा खुर होते हैं। इन्हें पानी में उबालने के पश्चात अच्छी प्रकार सुखाकर पीस कर महीन चूर्ण बना लेते हैं जिसमें लगभग 13 प्रतिशत नाइट्रोजन होती है।

(घ) पंख तथा बाल की खाद- पक्षियों के पंखों में लगभग 15 प्रतिशत नाइट्रोजन जबकि मनुष्य के बालों में लगभग 17 प्रतिशत नाइट्रोजन पाई जाती है। मृदा में पंखों एवं बालों का विच्छेदन धीरे-धीरे होता है।

(च) ऊन की रद्दी की खाद- ऊन के कारखानों से प्राप्त इसका कचड़ा जिसे ऊन की रद्दी कहते हैं में 4-7 प्रतिशत नाइट्रोजन तथा 1-5 प्रतिशत पोटाश होता है। यह गेहूं, जौ, आलू तथा मक्का के लिए सर्वोत्तम खाद है।

(छ) ग्वानो- ग्वानो समुद्री मछलियों की सूखी बीट होती है इसमें 7-16 प्रतिशत नाइट्रोजन तथा 20-25 प्रतिशत फॉस्फोरस होता है। इस खाद में नाइट्रोजन अमोनिया के रूप में होने के कारण पौधों का सरलता एवं शीघ्रता से उपलब्ध हो जाती है।

(ज) मुर्गी के बीट की खाद- मुर्गी खाने से प्राप्त बीट का किण्डवन मृदा में शीघ्र होकर पोषक तत्व पौधों को तुरंत उपलब्ध हो जाते हैं। इसमें 3.8 प्रतिशत नाइट्रोजन, 3.5 प्रतिशत फॉस्फोरस तथा 1.7 प्रतिशत पोटाश पाया जाता है। मुर्गी के बीट की खाद का प्रयोग सभी प्रकार की मृदाओं तथा फसलों में किया जाता है।

हिंदी उन सभी गुणों से अलंकृत है जिनके बल पर वह विश्व की साहित्यिक भाषाओं की अगली श्रेणी में समासीन हो सकती है।

- राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त

अनुराग, यौवन, रूप या धन से उत्पन्न नहीं होता। अनुराग, अनुराग से उत्पन्न होता है।

- प्रेमचंद

तलने के क्षेत्र में नवीन प्रसंस्करण तकनीकें: एक समीक्षा

शालिनी गौड़ रुद्रा, विद्या राम सागर, अल्का जोशी, प्रिया पाल एवं जीतेंद्र कुमार बैरवा

खाद्य विज्ञान एवं फसलोत्तर प्रौद्योगिकी संभाग
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

बदलते सामाजिक परिवेश में सभी लोग अपने खान पान को लेकर सजग हो गए हैं फल, सब्जियों, कदन्न अनाजों का सेवन बढ़ गया है। रोगों से लड़ने की अपनी अंदरूनी ताकत को बढ़ाने हेतु सभी जागरूक हुए हैं और खाने में बदलाव ला रहे हैं। किंतु स्वाद एवं रोचकता को बनाए रखना भी उतना ही आवश्यक है अन्यथा स्वस्थ भोजन एक अवधि के बाद उबाऊ हो जाता है। तले हुए भोजन इसी प्रकार के व्यंजन है जिनके दुष्प्रभावों को जानकर भी हम अक्सर अनदेखा कर देते हैं। तले हुए भोजन को स्वस्थ बनाने की ओर कई वैज्ञानिक प्रयास हुए हैं। कुछ नवीन तकनीकें ऐसी है कि तलने के बावजूद भोजन की पौष्टिकता बनी रहती है। इस लेख के माध्यम से हम उन तकनीकों का विवरण दे रहे हैं।

नई तकनीक से तले हुए फल और सब्ज़ियां

तलने की प्रक्रिया में भोजन गर्म तेल (160-180 डिग्री सेंटीग्रेड) के संपर्क में होता है। तलने के उपरांत सुनहरा भूरा रंग मैलार्ड प्रक्रिया के कारण बनता है साथ ही प्रोटीन का विघटन होता है और नए रंगीन अवयवों का निर्माण होता है। भोजन के जल का वाष्पीकरण होता है। पानी के निकास के कारण ऊपरी परत की पपड़ी बन जाती है जिससे भोजन ज्यादा तेल नहीं सोखता है। प्रचुर मांड वाले खाद्य पदार्थों को गर्म तेल में तलने के अधिक तापमान की वजह से ऐक्राइलमाइड का निर्माण होता है जो कि कैंसर जैसी घातक बीमारी के उत्पन्न होने के प्रमुख कारकों में से एक है। इसलिए तलने के तापमान को कम से कम रखने का सुझाव दिया जाता है। इस विषय में पिछले कुछ सालों में विश्वभर में बहुत शोध हुए हैं और तलने की नई तकनीकों का पर शोध हुआ है। वनस्पति तेलों की ताप वाहकता अधिक होती है इसलिए खाद्य उत्पाद का गर्म तेल से सीधा संपर्क होने पर उत्पाद की सतह पर तीव्रता से तापमान बढ़ता है।

खाद्य पदार्थों के तलने के दौरान निम्न अवस्था परिवर्तन होते हैं:

1. प्रारंभिक ताप: जब तक खाद्य उत्पाद की सतह का तापमान पानी के उबलने के तापमान तक पहुंचता है तब तक खाद्य उत्पाद गर्म तेल में डूबा रहता है। ऊपरी सतह पर समान रूप से संवहन ऊष्मा का स्थानांतरण होता है, परंतु भोजन के अंदरूनी परतों के गर्म होने और पकने के लिए चालन ऊष्मा स्थानांतरण प्रक्रिया होती है, जहां गर्मी सतह से अंदर की तरफ पहुंचती है।
2. सतह का उबलना: आसपास गर्म तेल की उपस्थिति के कारण उत्पाद के अंदर के जल का वाष्पीकरण होता है। इस कारण गर्म तेल की लहरें बन जाती हैं और ऊपर से नीचे परिचालित होती रहती हैं। ऊष्मा के स्थानांतरण की तीव्रता बढ़ जाती है और ऊपरी सतह के तेल को सोचने की क्षमता कम हो जाती है।
3. ऊष्मा प्रवाह दर में कमी: ऊपरी सतह से जल का वाष्पीकरण होता रहता है और सतह सूखती जाती है,

जिसके कारण भोजन के अंदर गर्माहट कम पहुंचती है। भोजन के अंदर बचा हुआ पानी धीरे-धीरे उबलने के तापमान तक पहुंचता है, जिससे भोजन पक जाता है।

4. तेल के बुलबुलों का मंद पड़ना: यह तलने की आखिरी चरण का प्रतीक है, जहां नमी का वाष्पीकरण समाप्त हो जाता है और उत्पाद को तेल से निकाल लिया जाता है।

5. तलने के दौरान रासायनिक परिवर्तन:

तलने की प्रक्रिया से भोजन एवं तलने वाले तेल में रसायनिक परिवर्तन होते हैं जैसे ऑक्सीकरण, जलीय सन्लयन आदि। अधिक देर उपयोग करने से तेल गाढ़ा हो जाता है जिससे तेल की पकाने की क्षमता कम हो जाती है, तेल धुआँ छोड़ने लगता है। तलने के दौरान भोजन की ऊपरी परत गर्मी का स्थानांतरण कम कर देती है, जिसके कारण तलने की अवधि को बढ़ाना पड़ता है। तलने के बढ़े समय के कारण ऊर्जा की खपत बढ़ जाती है। तलने की प्रक्रिया से कुछ पौष्टिक तत्व कम हो जाते हैं या लुप्त हो जाते हैं। भोजन खाने के लिए उपयुक्त नहीं रह जाता या इतना पौष्टिक नहीं रह जाता, भोजन में तेल की मात्रा बढ़ जाती है जिससे वह स्वास्थ्य के लिए लाभकारी नहीं माना जाता। तले हुए उत्पाद एवं शेष बचे तेल का यदि ठीक प्रकार से भंडारण न हो तो यह कई हानिकारक अवयवों को भी उत्पन्न करता है, जैसे मुक्त मूलक, परॉक्साइड मूलक। साथ ही साथ मुक्त वसा अम्ल भोजन की स्वीकार्यता को भी कम कर देते है। उपरोक्त कमियों को एवं तलने के दौरान रासायनिक परिवर्तनों को नवीन तकनीकियों द्वारा सीमित किया जा सकता है।

तलने की नवीन तरीके

खाद्य प्रसंस्करण में दक्षता बढ़ाने एवं लागत में किफायत हेतु कई प्रकार की मिश्रित प्रणालियां विकसित की गई हैं। लेबलिन्ग अधिनियमों में ट्रैफिक लाइट लेबलिन्ग के लागू होने की जब से बात शुरू हुई है, तब से इस दिशा में सभी कंपनियां अपनी चालू प्रक्रियाओं में बदलाव लाने के लिए और अधिक तत्पर हो चुकी हैं। कुछ

प्रणालियां जैसे उच्च दबाव तलना, वैक्यूम (शून्य दबाव) में तलना, अल्ट्रासाउंड तरंगों से उपचार आदि हैं। इन तकनीकों से सब्जियों एवं अन्य खाद्य पदार्थों के निर्जलीकरण में भी सहायता मिलती है। इनमें से कुछ तरीकों को व्यावसायिक स्तर पर सटीक तलने में एवं उच्च गुणवत्ता वाले उत्पादों को तैयार करने के लिए प्रयोग किया गया है। तले हुए उच्च गुणवत्ता वाले उत्पादों को तैयार करने के लिए कुछ तकनीकियों का विवरण इस प्रकार है।

क) माइक्रोवेव की सहायता से तलना

माइक्रोवेव ऊर्जा की बचत करने वाला साधन है माइक्रोवेव से भोजन जल्दी पक जाता है, समय बचाता है। यह तकनीक आलू की फ्रेंच फ्राइज़, सेब के चिप्स, डोनट इत्यादि बनाने के लिए इस्तेमाल की जाती है। माइक्रोवेव का प्रयोग कई दशकों से चला आ रहा है। माइक्रोवेव इकाई की लागत कम होती है और इसके प्रयोग से प्रसंस्करण की दक्षता बढ़ती है। माइक्रोवेव से संवहन के द्वारा उच्च-स्तरीय इलैक्ट्रोमैग्नेटिक (विद्युत्-चुम्बकीय) ऊर्जा से भोजन को तलते समय विभिन्न निर्जलीकरण चरणों में नमी के वाष्पीकरण के लिए अतिरिक्त ऊर्जा मिल जाती है। इससे माइक्रोवेव से तैयार उत्पाद का घनत्व कम होता है। उत्पाद में छिद्रों की अधिकता एवं समानता एवं अंदरूनी सतह चिकनी होती है। पारंपरिक तलने की विधियों की अपेक्षा माइक्रोवेव सहायक तले हुए उत्पाद उच्च गुणवत्ता वाले होते हैं।

ख) अल्ट्रासाउंड की सहायता से तलना

अल्ट्रासाउंड उन उभरती तकनीकों में से एक है जो खाद्य संरक्षण संसाधन एवं सुरक्षा में काम आती है। निर्जलीकरण की क्षमता को बढ़ाने वाली मुख्य नवीन तकनीकों में से यह एक है। जो भोजन को तलने से पूर्व प्रयोग की जाती है। अल्ट्रासाउंड के उपयोग से भोजन तेल कम सोखता है। इसका उपयोग आलू के चिप्स, कद्दू, सेब एवं मीटबॉल्स को तलने के प्रयोग में सार्थक पाया गया है। यह भी पाया गया है कि यदि भोजन में प्रारंभिक नमी की मात्रा कम हो तो भोजन तेल को कम सोखता है। कम आवृत्ति वाले अल्ट्रासाउंड भोजन के भौतिकी, रसायनिक संबंधी गुणों का परिवर्तन कर देते हैं। यह आसानी से उपयोग होने वाला कम लागत एवं ऊर्जा को बचाने वाला उभरता विकल्प है।

ग) इंफ्रारैड तरंगों की सहायता से तलना

अवरक्त यानी इंफ्रारैड किरणों का तलने में इस्तेमाल एक नया विकल्प है। कई शोधों द्वारा यह सिद्ध किया हुआ है कि इसके पूर्व-उपचार से भोजन में ऐक्राइलामाइड का निर्माण कम होता है। यह तकनीक सुखाने, भूनने, सेंकने, कीटाणु- रोधन आदि के लिए भी उपयोग की जाती है। शर्करा वाले आलू से यदि पारंपरिक तरीके से चिप्स बनाएं तो ऐक्राइलामाइड की मात्रा अधिक होती है परंतु इंफ्रारैड की सहायता से सभी प्रकार के आलुओं से चिप्स बनाई जा सकती हैं। इस तकनीक से तेल के गर्म होने का समय कम होता है एवं उच्च गुणवत्ता वाले अल्पाहारों का निर्माण होता है। तलने से पूर्व यदि इंफ्रारैड किरणों से भोजन को सुखाकर भोजन का कुरकुरापन भी बढ़ाया जा सकता है और तेल सोखने की मात्रा कम की जा सकती है। इस तकनीक से उच्च गुणवत्ता वाले केले, शकरकंदी, आलू के चिप्स तैयार किए जा सकते हैं।

घ) उच्च दबाव (High pressure) में तलना

पारंपरिक तलने की तुलना में उच्च दबाव में तलने की प्रक्रिया से पकने की अवधि कम होती है और उत्पाद की संरचना बेहतर होती है क्योंकि क्रमिक दबाव के लगने एवं हटने से उत्पाद में तलने के दौरान नमी का वाष्पीकरण अधिक तीव्रता से हो पाता है भोजन में नमी की मात्रा, कोमलता जैसे गुण इत्यादि। प्रेशर की स्तर से प्रभावित पाए गए हैं। इसका उपयोग आलू के चिप्स एवं तले हुए चिकन को तैयार के लिए किया जाता है।

ङ) शून्य दबाव में तलना

इस तकनीक में कम दबाव यानी कि वैक्यूम अवस्था में पदार्थ को तला जाता है। इस तकनीक में तलने का तापमान कम होता है जिससे भोजन की गुणवत्ता बनी रहती है और ऐक्राइलामाइड की मात्रा कम बनती है। उत्पाद की रंगत बरकरार रहती है और पोषक तत्व का संरक्षण एवं स्वाद बेहतर होता है। भारत में भी कई कंपनियां आलू, पपीता, कटहल, अनानास, भिंडी, चिकन नगेट्स आदि तैयार करने के लिए इस तकनीक का इस्तेमाल करती हैं।

च) तेल-फुहार से तलना

स्प्रे फ्राइंग की प्रक्रिया में गर्म तेल के फुहार के माध्यम में भोजन को एक टोकरी में रखकर घुमाया जाता है। तेल की फुहार में पकने के कारण पके हुए उत्पाद में तेल की मात्रा कम एवं पौष्टिक गुणवत्ता अधिक होती है। राइस क्रैकर्स पर एक शोध में पाया गया है कि स्प्रे फ्राइंग से भोजन की भौतिक-रसायनिक एवं सूक्ष्म संरचना में वांछनीय बदलाव आते हैं। स्प्रे फ्राइंग द्वारा पकाए गए राइस क्रैकर्स में नमी एवं तेल की मात्रा कम एवं कुरकुरापन अधिक पाया गया। उपर्युक्त तरीके से पकाए गए राइस क्रैकर्स में तेल की मात्रा पारंपरिक तलने की अपेक्षा 45% तक कम पाई गई। स्प्रे फ्राइंग से राइस क्रैकर्स जैसे उत्पादों की दृणता कम होती है और वे हल्के, कुरकुरे हो जाते हैं। पारंपरिक तलने की तुलना में स्प्रे फ्राइंग से भोजन कम तेल सोखता है और उत्पादों की गुणवत्ता बेहतर होती है।

छ) एयर फ्राइंग

हवा की धारा में तेल की बूंदों वाली इमल्शन के माध्यम से तले हुए उत्पादों को प्राप्त करने के लिए एयर फ्राइंग एक नया तरीका है। इस प्रक्रिया में उत्पाद का धीरे-धीरे निर्जलीकरण होता है। एयर फ्राइंग से तैयार अल्पाहार में 80% तक तेल सोखने में कमी पाई गई है।

एयर फ्राइंग द्वारा चिकन नगैट्स इत्यादि तैयार किए जाते हैं एवं पारंपरिक फ्राइंग विधि की तुलना में इसे अधिक पौष्टिक विकल्प माना जाता है।

तले उत्पादों की उपयोगिता एवं महत्व

भोजन को तलने का प्रचलन सदियों से चला आ रहा है एवं आज भी यह प्रसंस्करण का एक महत्वपूर्ण तरीका है। यह सुविधाजनक है, समय को बचाता है और भोजन में रोचक स्वाद उत्पन्न करता है। इस कारण बाकी प्रसंस्करण के तरीकों की अपेक्षा इसे अधिक पसंद किया जाता है। भोजन से संबंधित अधिकतर उद्योगों में तलना एवं बेकिंग सबसे ज्यादा पसंद किए जाने वाला पाककला का साधन है जो कि विभिन्न खाद्य उत्पादों को तैयार करने के लिए प्रयोग में लाए जाते है। बाजार में आलू चिप्स, केले के चिप्स, नमकीन, मट्ठी आदि पदार्थ तलने की प्रक्रिया पर निर्भर है। इसका एक प्रमुख कारण यह भी है कि समाज में महिलाएं भी कमाने में महत्वपूर्ण योगदान देती हैं। पारंपरिक तरीकों से उत्पादों को बनाने के लिए अधिक समय नहीं निकाल पाती हैं। तलने के लिए अधिक जगह एवं बिजली की आवश्यकता नहीं होती एवं रोचक उत्पाद तैयार करने के लिए किफायती विकल्प के रूप में पसंद किया जाता है। इसके साथ ही वसा के अधिक इस्तेमाल से, उत्पाद नरम बनते है जिसे बच्चे, युवा एवं वृद्ध आसानी से खा सकते है।

निष्कर्ष

पारंपरिक तलना एक बहुमुखी प्रसंस्करण की विधि है जिसका औद्योगिक एवं घरेलू स्तर पर विभिन्न प्रकार के उत्पाद तैयार करने के लिए उपयोग किया जाता है। मगर अधिक तेल की मात्रा एवं पौष्टिक गुणवत्ता की हानि के कारण कई लोग तले हुए भोजन के सेवन से परहेज करते हैं। इसलिए स्वादिष्ट एवं पौष्टिक अल्पाहारों को तैयार करने के लिए कंपनियां तले हुए पदार्थों को पौष्टिक बनाए रखने के लिए हाइब्रिड तकनीकों का इस्तेमाल करती हैं। आज के दौर में इन रणनीतियों का उपयोग जरूरी हो गया है। कम ऐक्राइलमाइड की मात्रा, भूरापन एवं रंगत में बदलाव के साथ-साथ तेल के सोखने की मात्रा एवं पौष्टिक तत्वों के संरक्षण को ध्यान में रखते हुए नवीन तकनीकों को अपनाना जरूरी हो गया है। भविष्य में उम्मीद है कि हम पारंपरिक भोजन को और अधिक पौष्टिक रूप में उतने ही चाव से निःसंकोच खा पाएंगे जैसे बचपन में खाते थे।

समय परिवर्तन का धन है। परंतु घड़ी उसे केवल परिवर्तन के रूप में दिखाती है, धन के रूप में नहीं।

- रवींद्रनाथ ठाकुर

खाद्य एवं पोषण सुरक्षा में दालों की भूमिका

रणबीर सिंह एवं अचल दास

जैव पदार्थ उपयोग इकाई, सस्यविज्ञान संभाग
भा.कृ.अनु.प.- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली 110012

विश्व की लगभग लगभग 2 अरब जनसंख्या सूक्ष्म पोषक तत्वों कमी से उत्पन्न कुपोषण से ग्रसित है। उत्तम स्वास्थ्य व शारीरिक क्रियाओं के लिए आवश्यक कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, वसा, खनिज तत्व, विटामिन व सूक्ष्म तत्व युक्त पौष्टिक भोजन (जिसमें फल, सब्जी, आनाज, दाल व पशु उत्पाद सम्मिलित हैं) से विश्व की बड़ी जनसंख्या वंचित है। कम आय, सीमित क्रय शक्ति सूक्ष्म तत्व कुपोषण का मुख्य कारण है। कुपोषण भारत की भी एक गंभीर, आर्थिक एवं सामाजिक समस्या है। कहा जाता है कि मनुष्य केवल रोटी के सहारे जीवित नहीं रह सकता, लेकिन दालों के सहारे जीवित रह सकता है। भोजन में दाल का महत्वपूर्ण स्थान है। विशेषकर शाकाहारी लोगों के भोजन में प्रोटीन का सबसे बड़ा स्रोत दाल एवं फलियां ही हैं। 'दाल-रोटी खाओ, प्रभु के गुण गाओ' इस कहावत का सार आपकी सेहत बदल सकता है। दाल और रोटी का कॉम्बिनेशन एक प्रोटीन रिच डाइट बनाता है, जो स्वास्थ्य के लिए विशेष लाभप्रद है।

विश्व में दलहन उत्पादन में भारत का प्रथम स्थान है। भारत दालों का सबसे बड़ा उत्पादक और उपभोक्ता भी है, परंतु खपत अक्सर अपेक्षित मात्रा से कम होती है, जिसे आयात के द्वारा कमी को पूरा किया जाता है। देश के सभी नागरिकों के लिए खाद्य एवं पोषण सुरक्षा

वर्तमान सरकार का मुख्य उद्देश्य है। यह आशा की जा रही है कि दालों की कमी अब बीते दिनों की बात रह जाएगी। इसलिए हमें ऐसी रणनीति बनाने की आवश्यकता है जिससे हम दलहन उत्पादन में आत्मनिर्भर होकर निर्यात कर सकें। भारत सरकार एवं विभिन्न राज्य सरकारों द्वारा मिलकर दलहनी फसलों की खेती की ओर किसानों को आकर्षित करने तथा इन फसलों का देशव्यापी स्तर पर क्षेत्रफल बढ़ाने के लिए विभिन्न प्रकार के कार्यक्रमों एवं योजनाओं को भी क्रियान्वित किया जा रहा है। विश्वभर में भोजन के अभाव में करोड़ों लोग भुखमरी, कुपोषण और भूखजनित बीमारियों से ग्रस्त हो रहें है।

सारणी1: विभिन्न दालों के हिंदी एवं अंग्रेजी नाम

क्र.सं.	हिंदी में दालों नाम	वैज्ञानिक नाम	अंग्रेजी में नाम
		खरीफ में उगाई जाने वाली दालें	
1.	अरहर/तूर	कैजेनस कजान	Pigeon Pea/Red Gram
2.	मूंग	विग्ना रेडियेटा	Green Gram
3.	उड़द	विग्ना मूंगो	Black Gram
4.	लोबिया	वगीना अनज्यूकुलाता	Cowpea

5.	सोयाबीन	ग्लाइसिन मैक्स	Soyabean
6.	मोठ	फेसियोलस एकोनलिटफोलियस	Kulthi/Hors Bean
7.	कुल्थी	मैक्रोटेलोमा यूनिफ़्लोरम	Turkish Gram/Dew Bean
8.	ग्वार	स्यामोपसिस टेट्रागोनोलोब ब्सनेजमत	Cluster Bean/Gaur
रबी की दलहनी फसलों के नाम			
9.	चना	सिसर एरिटिनम लीन	Bengal Gram
10.	मसूर	लैन्स एसकुलेंटा	Lentil
11.	मटर	पाइसम स्पीसीज	Peas
12.	राजमा	फैजिओल्स वल्गेयर	Kidney Bean
13.	खेसारी	लेथाइरस सेटाइवस	Lathyrus/Khesari
जायद की दलहनी फसलें			
1.	मूंग	विग्ना रेडियेटा	Green Gram
2.	उड़द	विग्ना मूंगो	Blak Gram
3.	सोयाबीन	ग्लाइसिन मैक्स	Soyabean

भुखमरी व कुपोषण के कारण दुनिया में स्वास्थ्य और विकास की प्रत्येक चुनौती और गंभीर हो जाती है। बेहतर स्वास्थ्य के लिए हमें संतुलित आहार की आवश्यकता होती है। संतुलित आहार सभी प्रकार की दालों के बिना अधूरा होता है। स्वाद और स्वास्थ्य की दृष्टि से दालें महत्वपूर्ण हैं। भारतीय उपमहाद्वीप में दलहन फसलें प्रोटीन का प्रमुख स्रोत है। दालों में प्रोटीन और रेशे की मात्रा अधिक और वसा की मात्रा कम होती है और इनमें विटामिन और खनिजों की प्रचुर मात्रा होती है। भारत में कई प्रकार की दालें प्रयोग की जाती हैं। यह वनस्पति जगत में प्रोटीन का मुख्य स्रोत हैं। सामान्यतः चना, मसूर, राजमा, मटर, कुलथी, मूंग और उड़द जैसी कई और दालें दलहन के अंतर्गत आती हैं। दालें हमारे भोजन का सबसे महत्वपूर्ण भाग होती हैं। इनकी विशेषता यह होती है कि आंच पर पकने के बाद भी उनके पौष्टिक तत्व सुरक्षित रहते हैं। इनमें बहुत अधिक मात्रा में प्रोटीन और विटामिन्स पाए जाते हैं।

सारणी 2: दलहनी फसलों में प्रोटीन की प्रतिशत मात्रा

दालें मानव आहार में प्रोटीन की आवश्यकता पूर्ति का प्रमुख स्रोत है लगभग 3 प्रतिशत प्रोटीन की पूर्ति दालों द्वारा की जाती है। कुछ प्रमुख दालों में उपलब्ध प्रोटीन की मात्राएं सारणी 2 में दी गई है।

चना	21 प्रतिशत
मटर	21 प्रतिशत
मूंग	24 प्रतिशत
उड़द	24 प्रतिशत
अरहर	22.4 प्रतिशत
मसूर	25.2 प्रतिशत
सोयाबीन	42.0 प्रतिशत

दालों का पोषण मान

सभी दलहनी फसलें न केवल भारतीय आहार का एक प्रमुख अवयव के साथ पशु प्रोटीन की तुलना में आहार प्रोटीन का सस्ता स्रोत है। दालें प्रोटीन, विटामिन, खनिज की महत्वपूर्ण स्रोत हैं तथा 'गरीब आदमी का मांस' और 'अमीर आदमी की सब्जी' के रूप में, पोषण सुरक्षा हेतु महत्वपूर्ण योगदान करती है (सारणी 3)।

सारणी3: दालों में पोषण मान

प्रमुख तत्व	मात्रा
प्रोटीन	20 प्रतिशत से अधिक
कार्बोहाइड्रेटस	55-60 प्रतिशत
वसा	55-60 प्रतिशत
रेशा	3.2 प्रतिशत
फॉस्फोरस	300 से 500 मि.ग्रा./100ग्रा.
लौह	7-10 मि.ग्रा./100 ग्रा.
विटामिन 'सी'	10-15 मि.ग्रा./100ग्रा.
कैल्शियम	69-75मि.ग्रा./100 ग्रा.
कैलोरी	343
विटामिन 'ए'	430-489 आईयू

स्रोतः जर्नल ऑफ एग्री सर्च, वॉल्यूम 2, भारत में दाल उत्पादन का परिदृश्य, द्वारा अनिल कुमार सिंह एवं अन्य

भारत में दालों का पोषणिक महत्व

भारत एक शाकाहार प्रधान देश है। शाकाहारियों के लिए दाल प्रकृति की एक अद्भूत प्रदत्त उपहार है। इसमें पाए जाने वाले अमीनों अम्ल लायसिन की मात्रा उच्च कोटि की प्रोटीन प्रदान करने वाले अंडे के बराबर है। साबुत दालें खाद्य रेशों, खनिज लवणों और विटामिन का अच्छा स्रोत हैं। 'दि हिन्दु-सीएनएन-आईबीएन' द्वारा करवाए गए एक सर्वेक्षण के अनुसार (वर्ष 2006), भारत में लगभग 31 प्रतिशत लोग शाकाहारी हैं, जिनके आहार में दालें उनकी प्रोटीन आवश्यकता के एक बड़े हिस्से को पूरा करने में प्रमुख भूमिका निभा सकती है। अनाज की प्रोटीन में आमतौर पर लायसिन की मात्रा काफी कम पाई जाती है। खाद्य एवं कृषि संगठन के अनुसार एक अध्ययन में यह निष्कर्ष सामने आया है कि मानव के स्वास्थ्य के लिए पशु प्रोटीन या अंडा आवश्यक कैलोरी की पूर्ति हेतु उतना ही सहायक है, जितना एशिया महाद्वीप के लोगों के भोजन में। दाल यहां प्रोटीन का सबसे व्यापक व सस्ता स्रोत है। कहावत है कि घर की मुर्गी दाल बराबर लेकिन डॉक्टर कहते हैं कि शाकाहारियों के लिए तो दाल ही मुर्गी के बराबर है। वजह है इनसे ही शरीर की प्रोटीन की बड़ी आवश्यकताएं पूरी होती है। रोज एक कटोरी पकी हुई दाल मांसपेशियों के लिए आशातीत लाभप्रद होती है लेकिन इसका असली लाभ लेना हो तो एक ही किस्म की जगह दालें बदल-बदल कर और मौसमी सब्जियां डाल कर बनाएं। एक सामान्य व्यक्ति को प्रति कि.ग्रा. वजन के लिए 0.8 ग्राम प्रोटीन की आवश्यकता होती है। लेकिन जंक फूड का प्रयोग करने वाली आज की पीढ़ी की थाली से दालें समाप्त होती जा

सारणी4: दालों की पोषक गुणवत्ता संरचना (प्रति 100 ग्राम)

दलहन	नमी (ग्राम)	प्रोटीन (ग्राम)	वसा (ग्राम)	खनिज (ग्राम)	रेशे (ग्राम)	कार्बोहाइड्रेट (ग्राम)	कैल्शियम (ग्राम)	फॉस्फेट (ग्राम)	लौह (ग्राम)
चना	9.8	17.1	5.1	3.0	3.9	60.9	202	312	4.6
लोबिया	13.4	24.1	1.0	3.2	3.8	54.5	77	414	8.6
मूंग	10.4	24.0	1.3	3.5	4.1	56.7	124	326	4.4
मसूर	12.4	25.1	0.7	2.1	0.7	59.0	69	293	7.58
मोठ	10.8	23.6	1.1	3.5	4.5	56.5	202	230	9.5
मटर	16.0	19.7	1.1	2.2	4.5	56.5	75	298	7.05
राजमा	12.0	22.9	1.3	3.2	4.8	60.6	260	410	5.1
सोयाबीन	8.1	43.2	19.5	4.6	3.7	20.9	240	690	10.4

स्रोतः न्यूट्रीशियन वेल्यू ऑफ इंडियन फूड्स, राष्ट्रीय पोषण संस्थान, हैदराबाद, सो. अनु.केंद्र प्रसार बुलेटिन न.5, पृ.सं. नं. 22

रही हैं। शाकाहारी व्यक्तियों को प्रतिदिन कम से कम 130 ग्राम दाल अवश्य खानी चाहिए। खाद्य एवं कृषि संगठन के अनुसार भारत में प्रति व्यक्ति दाल की आवश्यकता 80 ग्राम प्रति दिन है परंतु दुर्भाग्यपूर्ण केवल 47.3 ग्राम प्रति दिन प्रति व्यक्ति ही उपलब्ध है (सारणी 5)।

सारणी 5: भारत में प्रति व्यक्ति प्रति दिन खाद्यान्न की उपलब्धता (ग्राम प्रति दिन)

वर्ष	खाद्यान्न	दालें	कुल खाद्यान्न
1951	334.2	60.7	394.9
1961	399.7	69.0	468.7
1971	417.6	51.2	468.8
1981	417.3	37.5	454.8
1991	468.5	41.6	510.1
2001	386.2	30.0	416.2
2009	407.0	37.0	444.0
2010	407.0	31.6	444.0
2019	447.4	47.3	494.7

स्रोतः आर्थिक एवं सांख्यिकी निदेशालय, डीएसी एवं एफ डब्ल्यू

दान खाने के लाभ

दालें मानव के लिए पादप आधारित प्रोटीन एवं एमिनों अम्ल का उत्तम स्रोत हैं, के साथ ही जानवरों के लिए चारे के रूप में पादप आधारित प्रोटीन का स्रोत भी

हैं। भारत जैसे देश में शाकाहारियों के लिए प्रोटीन का सबसे आसान स्रोत दाल हैं। जो लोग सप्ताह में चार से पांच बार दालें खाते हैं, उनमें दाल नहीं खाने वालों की तुलना में हृदय रोगों का खतरा 22 प्रतिशत और धमनियों से जुड़े रोगों का खतरा 11 प्रतिशत तक कम हो जाता है। दालों का ग्लासेमिक सूचकांक कम होता है, जिससे पेट देर तक भरा हुआ रहता है। इससे वजन कम करने में सहायता मिलती है। नियमित दालें खाने से गंभीर रोग जैसे मोटापा, डायबिटीज, हृदय रोगों और कुछ तरह के कैंसर की आंशका कम करने में सहायता मिलती है। दालें आंतों में पाए जाने वाले अच्छे जीवाणु के संतुलन को बनाएं रखती हैं और बरे कोलेस्ट्रॉल के स्तर को कम करती हैं। वर्ष 2014 में हुए एक शोध अध्ययन के अनुसार तीन सप्ताह तक लगातार दालें खाने से शरीर में बुरे कोलेस्ट्रॉल का स्तर निर्णायक रूप से कम हो जाता है, जो हार्ट अटैक और स्ट्रोक के खतरे को कम कर सकता है। प्रमुख दालों का संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार उल्लेखित है, जैसे;

1. चने की दालः चने की दाल पौष्टिक होने के साथ शरीर को ताकत भी देती है। इसमें रेशा सबसे अधिक मात्रा में होता है, जो कोलेस्ट्रॉल को कम करने में सहायक होता है।

पोषकताः चना दाल फोलेट, मैग्नीशियम, तांबा, रेशा, प्रोटीन, लौह और जिंक तत्वों का स्रोत है।

स्वास्थ्य लाभः चने की दाल का सेवन रक्त की कमी (एनीमिया),कब्ज, पीलिया, उल्टी और बालों को गिरने की समस्या से राहत देता है। मधुमेह रोगियों के लिए यह लाभप्रद है और खून में शर्करा के स्तर को ठीक रखती है। यह दाल खाने में भारी होती है। जिन्हें अपच हो, उन्हें इसे लौकी, तौरी इत्यादि सब्जियों के साथ खाना चाहिए।

2. मूंग की दालः मूंग दाल को सबसे पोषक दाल कहा जाता है। यह सुपाच्य है। अंकुरित साबुत मूंग को सर्वाधिक पोषक माना जाता है।

पोषकताः यह मैग्नीज, पोटैशियम, फोलेट, मैग्नीशियम, तांबा, जिंक और विटामिन बी व आहारक रेशा का अच्छा स्रोत है।

स्वास्थ्य लाभः जिन्हें पेट से जुड़ी समस्याएं हैं, उन्हें मूंग दाल खानी चाहिए। यह हड्डियों के लिए लाभप्रद है। इसका सूप रोगों से शीघ्र उबरने में सहायता करता है। गर्भवती महिलाओं को सप्ताह में कम से कम तीन दिन ये दाल खानी चाहिए।

3. अरहर की दालः इसे तुर/तुअर दाल भी कहा जाता है।

पोषकताः इसमें लौह, कैल्शियम, मैग्नीशियम, पोटैशियम, विटामिन-बी और रेशा प्रचुर मात्रा में होता है।

स्वास्थ्य लाभः इसमें आहारक रेशा अधिक होता है। यह आंतों को साफ रखती है। हृदय रोगों की आशंका कम रहती है।

4. उड़द की दालः उड़द दाल पौष्टिक व बलवर्धक होती है। यह दाल भारी होती है, इसलिए कमजोर पाचन वालों को कम खानी चाहिए।

पोषकताः उड़द दाल प्रोटीन, विटामिन बी, विटामिन सी, स्टार्च, राइबोफ्लेबिन, कैल्शियम व घुलनशील रेशा से भरपूर होती है। इसमें लौह और जिंक प्रचुर मात्रा में होता है।

स्वास्थ्य लाभः रेशा का उच्च स्तर बुरे कोलेस्ट्रॉल को कम कर हृदय रोगों और टाइप 2 मधुमेह के खतरे को कम करती है। इससे धमनियों में ब्लॉकेज रोकने में सहायता मिलती है। रक्त संचार सही रहता है।

5. मसूर की दालः मसूर को साबूत और बिना छिलकों दोनों रूप में खाया जाता है।

पोषकताः प्रोटीन, जिंक, कैल्शियम, सल्फर, कार्बोहाइड्रेट, एल्यूमीनियम, तांबा, आयोडीन, मैग्नीशियम, सोडियम, फॉस्फोरस, क्लोरीन और विटामिन डी जैसे तत्व पर्याप्त मात्रा में होते हैं।

स्वास्थ्य लाभः पाचन तंत्र की गड़बड़ी से परेशान लोगों को इसका सेवन करना चाहिए। मसूर की दाल का सूप पीने से आंतों और गले से संबंधित समस्याएं दूर होती हैं। लौह तत्व का अच्छा स्रोत होने के कारण ये खून की कमी नहीं होने देती। इसका सेवन स्ट्रोक, हाइपरटेंशन, हृदय रोग और मधुमेह का खतरा कम करता है।

6. लोबियाः लोबिया को अंकुरित करके भी खाया जाता है, जिससे इसमें एंजाइमों और आहार रेशा की मात्रा बढ़ जाती है।

पोषकताः उड़द दाल प्रोटीन, विटामिन बी, विटामिन सी, स्टार्च, राइबोफ्लेबिन, कैल्शियम व घुलनशील रेशा से भरपूर होती है। इसमें लौह और जिंक प्रचुर मात्रा में होता है।

स्वास्थ्य लाभः प्रोटीन और रेशा का अच्छा स्रोत है, इसलिए वजन कम करने के इच्छुकों को इसे खाना चाहिए। यह कोलेस्ट्रॉल को ठीक रखने, कब्ज, दर्द व सूजन में भी लाभप्रद है। बांझपन से ग्रसित व्यक्तियों के लिए लाभप्रद माना जाता है।

7. सोयाबीनः सोयाबीन, मानव पोषण एवं स्वास्थ्य के लिए उपयोगी खाद्य पदार्थ है। सोयाबीन में स्टार्च की मात्रा नहीं होने के कारण अन्य दालों की तरह इसकी दाल नहीं बन पाती है।

पोषकताः इसमें प्रोटीन 38 से 42 प्रतिशत, कॉलेस्ट्राल रहित वसा, कार्बोहाइड्रट एवं भस्म आदि प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। सोयाबीन गुणकारी प्रोटीन का रास्ता, सुलभ और अधिकतम मात्रा में प्राप्त होने वाला उपयोगी स्रोत है। वर्तमान में उपलब्ध प्रोटीन के अन्य स्रोतों की तुलना में सोयाबीन में सर्वाधिक गुणवत्तायुक्त 40 प्रतिशत प्रोटीन पाया जाता है।

स्वास्थ्य लाभः सोया-प्रोटीन में मानव शरीर के लिए आवश्यक सभी अमीनों अम्लों की उपस्थिति के साथ-साथ लगभग 20 प्रतिशत वसा (तेल) पाया जाता है जिसमें हृदय रोगियों के लिए विशेष रूप से उपयुक्त ओमेगा-3 एवं ओमेगा-6 नामक अमीनों अम्लों का सही एवं उचित अनुपात होता है। एनिमिया (खून में हीमोग्लोबीन की कमी) तथा हड्डी का कमजोर होना (ऑस्टीयोपोरोसिस) से पीड़ित महिलाओं और कुपोषण के ग्रस्त बच्चों के लिए सोयाबीन का प्रतिदिन अपनी खुराक में प्रयोग करना बहुत ही लाभकारी होता है।

8. कुल्थीः यह फसल चारा और आहार प्रदान करती है। इसके दानों में 23.30 प्रतिशत प्रोटीन होती है।

पोषकताः इसका दाना मानव के भोजन में दाल के रूप में, रसम बनाने में एवं पशु के दाने व चारे में प्रयोग होता है।

स्वास्थ्य लाभः यह बहुमूल्य औषधीय के रूप में गुर्दे और पित्ताशय की पथरी, बवासीर, वजन, कम करने, ब्रोंकाइटिस, खांसी की बीमारी, कब्ज, डायबिटीज, पाचन क्षमता, जुकाम और मूत्र रोगों के उपचार में सहायक है।

सारांशः विश्वभर में भोजन के अभाव में करोड़ों लोग भुखमरी, कुपोषण और भूखजनित बीमारियों से ग्रस्त हो रहे हैं। भुखमरी व कुपोषण के कारण दुनिया में स्वास्थ्य और विकास की प्रत्येक चुनौती और गंभीर हो जाती है। बेहतर स्वास्थ्य के लिए हमें संतुलित आहार की आवश्यकता होती है। संतुलित आहार सभी प्रकार की दालों के बिना अधूरा होता है। स्वाद और स्वास्थ्य की दृष्टि से दालें महत्वपूर्ण हैं। विश्व में 10 फरवरी को प्रत्येक वर्ष "अंतरराष्ट्रीय दलहन दिवस" (वलर्ड पल्स डे) मनाया जाता है, क्योंकि दालें खाद्य और पोषण सुरक्षा के लिए आवश्यक हैं। अतः दालें, पादप प्रोटीन का सबसे प्रमुख स्रोत हैं, विशेषकर शाकाहारियों के लिए इनका नियमित सेवन आवश्यक है। यदि देश को दलहन में आत्मनिर्भर करना है तो शोध, प्रसार, प्रशिक्षण एवं संसाधनों को गांव स्तर तक उपलब्ध कराना आवश्यक होगा। साथ ही साथ किसानों की मानसिकता धान और गेहूं की तरफ से अरहर और चना की तरफ मोड़ना होगा, क्योंकि अरहर और चना में धान और गेहूं से अधिक लाभ होता है।

आपका कोई भी काम महत्वहीन हो सकता है पर महत्वपूर्ण यह है कि आप कुछ करें।
- महात्मा गांधी

बदलते जलवायु परिवेश में दलहन फसलों की खाद्य सुरक्षा में भूमिका

संदीप कुमार एवं सीमा श्योराण

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय स्टेशन, करनाल - 132001

वैश्विक स्तर पर दालों की मांग तेजी से बढ़ रही है। दाल विकसित और कई अफ्रीकी देशों में 'भविष्य के भोजन' के रूप में उभर रहे हैं। दक्षिण एशिया में दालें पारंपरिक व महत्वपूर्ण खाद्य और प्रोटीन के सस्ते स्रोत हैं। यह क्षेत्र अब दालों की कमी का सामना कर रहा है। दाल उत्पादन दक्षता बढ़ाने की चुनौती ना केवल घरेलू आवश्यकताओं को पूरा करना है, बल्कि विकासशील और अफ्रीकी देशों में नए उपभोक्ताओं के लिए खाद्य आपूर्ति करना भी है। जिससे बढ़ती हुई मानव आबादी की खाद्य सुरक्षा को सुनिश्चित किया जा सके।

जलवायु परिवर्तन

जलवायु परिवर्तन एक वैश्विक वास्तविकता है। समय के साथ विभिन्न कारणों की वजह से मौसम के स्वरूप के सांख्यिकीय वितरण में परिवर्तन होते हैं। जब यह परिवर्तन समय की एक विस्तारित अवधि के लिए रहता है, तो उसे जलवायु परिवर्तन कहते हैं। जलवायु परिवर्तन मानव जीवन के सभी क्षेत्रों के लिए खतरा है, लेकिन कृषि क्षेत्र जलवायु परिवर्तन के लिए सबसे संवेदनशील प्रणाली माना जाता है। हर साल दुनिया का कोई ना कोई क्षेत्र मौसम की घटनाओं जैसे कि चक्रवात, ठंड, मूसलाधार बारिश, बाढ़, सूखे आदि से प्रभावित हो रहा हैं। अप्रत्याशित मौसम, बाढ़ और अन्य विनाशकारी घटनाओं के रूप में जलवायु परिवर्तन से उभरते हुए खतरे की वजह से वैश्विक आबादी को पर्याप्त भोजन प्रदान करने का कार्य और भी चुनौतीपूर्ण हो गया है। जलवायु परिवर्तन प्रत्यक्ष रूप से फसल उत्पादन और उसकी गुणवत्ता को प्रभावित करता है। अप्रत्यक्ष रूप से ये कीटों का प्रकोप, रोगों का संक्रमण, मृदा उर्वरता और जैविक कार्य तथा कृषि जैव विविधता में बदलाव करके फसल उत्पादन को प्रभावित करता है। जलवायु परिवर्तन से खाद्य उत्पादन के हर स्तर पर नकारात्मक प्रभाव पड़ रहा है और अंततः यह खाद्य कीमतों में अस्थिरता के रूप में सामने आ रहा है। हालांकि इसका प्रभाव क्षेत्र और फसल विशेष पर भिन्न होता है। आने वाले समय में जलवायु परिवर्तन वैश्विक खाद्यान्न सुरक्षा को और भी अधिक खतरे में डाल सकता है। दुनिया भर में जलवायु परिवर्तन खाद्य और गैर-खाद्य फसलों के उत्पादन क्षेत्रों को स्थानांतरित करने के लिए भूमिका निभा रहा है। जब तक जरूरी और स्थायी उपाय नहीं किए जाते हैं, जलवायु परिवर्तन कृषि पारिस्थितिकी तंत्र पर दबाव डालता रहेगा, विशेषकर संवेदनशील आबादी वाले क्षेत्रों में।

कृषि को जलवायु परिवर्तन से महफ़ूज करने की आवश्यकता

दालें बढ़ती आबादी के भोजन और जलवायु परिवर्तन की समस्या का सामना करने में अहम योगदान दे सकती हैं। फसल प्रणाली में दलहन फसलों को शामिल करके फसलों को विपरीत मौसम से महफ़ूज रखा जा सकता है। कृषि-वानिकी प्रणाली में दलहन फसलें जैसे अरहर को शामिल करके, किसानों की आय के स्रोतों में विविधता लाई जा सकती है, जो कि खाद्य सुरक्षा को सुनिश्चित करने में मदद करती है। कृषि-वानिकी प्रणाली जलवायु परिवर्तन के जोखिम का सामना करने में सक्षम है क्योंकि दलहन फसलें अन्य फसलों की तुलना में अधिक सूखा सहनशील हैं तथा मिट्टी को भी उपजाऊ बनाती हैं। दलहन जलवायु स्मार्ट हैं क्योंकि ये फसलें जहां एक तरफ जलवायु परिवर्तन के अनुकूल हैं तो दूसरी तरफ इसके प्रभावों को कम करने में योगदान देती हैं। अनुकूलन के साथ-साथ, यह ध्यान रखना जरूरी है कि कृषि-वानिकी प्रणालियों के महत्वपूर्ण घटक - वृक्ष में प्रक्षेत्र फसलों की

तुलना में कहीं अधिक कार्बन संचय करने की क्षमता है। एक अनुमान के मुताबिक, विश्व स्तर पर करीब 190 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र में फैली दलहन फसलें, मिट्टी में प्रति वर्ष पांच से सात लाख टन नाइट्रोजन का स्थिरीकरण करती है। चूंकि दलहन फसलें मिट्टी में नाइट्रोजन यौगिकीकरण खुद कर सकते हैं, उन्हें कम उर्वरक, जैविक और रासायनिक उत्पाद की आवश्यकता होती है, और इस तरह, वे ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

एक अनुमान के मुताबिक, दालों की कई स्थानीय किस्मों सहित सैकड़ों किस्में हैं, जिन्हें दुनिया भर में निर्यात नहीं किया गया है या उगाया ही नहीं गया है। उनकी व्यापक आनुवंशिक विविधता से जलवायु परिवर्तन के अनुकूल होने के लिए अधिक जलवायु-लचीला किस्मों का चयन किया जा सकता है। कई दलहन फसलें अक्सर अनाज वाली फसलों की तुलना में मिट्टी में कार्बन संचय को अधिक बढ़ावा देती हैं। फसल चक्र में दालों को शामिल करके, उर्वरकों के ऊर्जा सघन उत्पादन से बचा सकता है।

दालें ही सबसे अच्छा विकल्प क्यों हैं?

1. दलहन फसलें जलवायु स्मार्ट हैं क्योंकि ये जलवायु परिवर्तन के अनुकूल भी हैं और साथ-साथ इसके प्रभावों को कम करने में भी योगदान देती हैं।
2. दलहन फसलें वायुमंडलीय नाइट्रोजन का स्थिरीकरण कर इसे मिट्टी में संचय करती हैं । इससे रासायनिक नाइट्रोजन उर्वरक की आवश्यकता कम हो जाती है और ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करने में मदद मिलती है।
3. दलहनों में एक व्यापक आनुवंशिक विविधता है, इस का उपयोग करके अधिक जलवायु-लचीला दलहन किस्मों को विकसित किया जा सकता है।

दलहन का महत्व

1. दालें पोषक तत्वों का एक सस्ता स्रोत हैं, जिसमें प्रोटीन, आवश्यक खनिज, जटिल कार्बोहाइड्रेट, आहार फाइबर और स्वास्थ्य के लिए फायदेमंद विभिन्न विटामिन विद्यमान होते हैं।
2. दालों में प्रोटीन व खनिज पदार्थ की मात्रा उच्च होती है, जिसके नियमित रूप से सेवन करने से मानव स्वास्थ्य और पोषण में सुधार होता है।
3. दालें विटामिन (जैसे फोलेट) के अच्छे स्रोत हैं, जो नवजात शिशुओं में स्पाइन बिफिडा जैसे न्यूरल ट्यूब दोष (एन.टी.डीएस.) के जोखिम को कम करता है।
4. दालों में विद्यमान उच्च लोहा सामग्री उन्हें महिलाओं और बच्चों में लोहे की कमी से होने वाले एनीमिया को रोकने के लिए एक शक्तिशाली भोजन बनाती है, खासकर जब लोहे के अवशोषण में सुधार करने के लिए विटामिन-सी वाले भोजन के साथ खाया जाता है।
5. दलहन में ग्लाइसेमिक सूचकांक और वसा की मात्रा कम, जबकि फाइबर सामग्री उच्च होती है, जो कि मधुमेह रोगियों के लिए उपयुक्त हैं।
6. दालें मस्तिष्क के प्रतिरोध को कम करके रक्त शर्करा और इंसुलिन के स्तर को स्थिर करने में मदद करती हैं तथा यह वजन कम करने के लिए भी आदर्श माना जाता है।
7. दालें बायोएक्टिव यौगिकों जैसे कि फाइटोकेमिकल्स और एंटीऑक्सिडेंट्स में समृद्ध होती हैं जिनमें कैंसर विरोधी गुण होते हैं।
8. दालें कोरोनरी हृदय रोग के जोखिम को कम कर सकता है। ये आहार फाइबर में उच्च होती हैं, जो एलडीएल कोलेस्ट्रॉल को कम करने के लिए लाभदायक है।
9. दालें ग्लूटेन मुक्त होती है।
10. दालें हड्डी की ताकत को बढ़ावा देते हैं।
11. दालों का एक लंबा शेल्फ जीवन है, जिससे कि उन्हें लंबे समय तक बिना अपने पोषण तत्व खोए संग्रहीत किया जा सकता है।

टिकाऊ कृषि में दालों की भूमिका

दलहन फसलें टिकाऊ कृषि के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए काफ़ी अहम हैं। उदाहरण के लिए, दलहन पानी को कुशलतापूर्वक उपयोग करते हैं, जो उसी उसी खेत में फसल चक्र में उगाई गई आगामी फसलों के लिए फायदेमंद है। इसके साथ-साथ दलहन फसलों की गहरी जड़ें पानी और पोषक तत्वों के अवशोषण को बढ़ाने में मददगार हैं, जो सतही पानी के तनाव के प्रभाव को कम करते हैं। एक किलोग्राम पशु जनित प्रोटीन युक्त भोजन का उत्पादन करने के लिए लागत पानी एक किलोग्राम दालों का उत्पादन करने के लिए आवश्यक पानी की तुलना में सैकड़ों गुना अधिक है। कई दालें सूखा प्रतिरोधी हैं जो कि शुष्क जलवायु और सूखा प्रभावित क्षेत्रों के लिए उपयुक्त हैं, जैसे मूंग, मोठ। कुछ दालों की कम उपजाऊ मिट्टी और अर्ध-शुष्क वातावरण में भी अच्छी पैदावार ली जा सकती है, जैसे कि अरहर की कुछ किस्में। दलहन फसलों के अवशेषों को पशुओं के चारे के रूप में भी इस्तेमाल किया जाता है, इन अवशेषों में प्रोटीन की प्रचुर मात्रा पाई जाती है, जो कि पशु स्वास्थ्य में सुधार करने में मददगार हैं। यह फसलें मिट्टी में रहने वाले लाभकारी सूक्ष्मजीवों की संख्या, विविधता तथा उनकी गतिविधियां बढ़ाती है, जबकि घास, कीटनाशक और रोग एजेंटों को कम करती है। दलहन, मिट्टी में कार्बनिक पदार्थों की मात्रा, मिट्टी की संरचना और जल धारण क्षमता में सुधार करते हुए वायु और पानी क्षरण को कम करने में मदद करती हैं। इस प्रकार फसल प्रणाली में दलहन फसलों को शामिल करके मृदा अपरदन और क्षरण के जोखिम को कम किया जा सकता है। टिकाऊ कृषि के लक्ष्य को पूरा करने के लिए दालों की सबसे बड़ी विशेषता उनकी जैविक नाइट्रोजन-स्थिरीकरण क्षमता है। कुछ दलहन फसलें साथ में उगाई जाने वाली दूसरी फसल (अंतर फसल) या फसल चक्र में आगामी फसल (रोटेशन फसल) के लिए मिट्टी में फॉस्फोरस की उपलब्धता बढ़ाते है। इस प्रकार स्वाभाविक रूप से दो आवश्यक पोषक तत्व (नाइट्रोजन और फॉस्फोरस) प्रदान करते हैं। दलहन-अनाज फसल चक्र में, दलहन फसल द्वारा प्रदत्त नाइट्रोजन के कारण आगामी अनाज वाली फसल की पैदावार और क्रूड प्रोटीन की मात्रा में बढ़ोतरी होती है। इस प्रकार रासायनिक नाइट्रोजन उर्वरकों की आवश्यकता को कम करते हैं और मिट्टी की उर्वरता को बढ़ावा देते हैं। दलहन फसलों के साथ दूसरी फसलों की सह खेती उर्वरकों व कीटनाशकों का इस्तेमाल कम करने में सहायक है। इस प्रकार, यह फसलें अधिक टिकाऊ फसल उत्पादन और पर्यावरण के अनुकूल वातावरण सुनिश्चित करते हैं। अतः दलहनी फसलें कार्बन फुटप्रिंट को कम करके और आगामी या साथी फसलों में उर्वरकों की ज़रूरतों को कम करके, जलवायु परिवर्तन की शमन में अहम रोल अदा करती है।

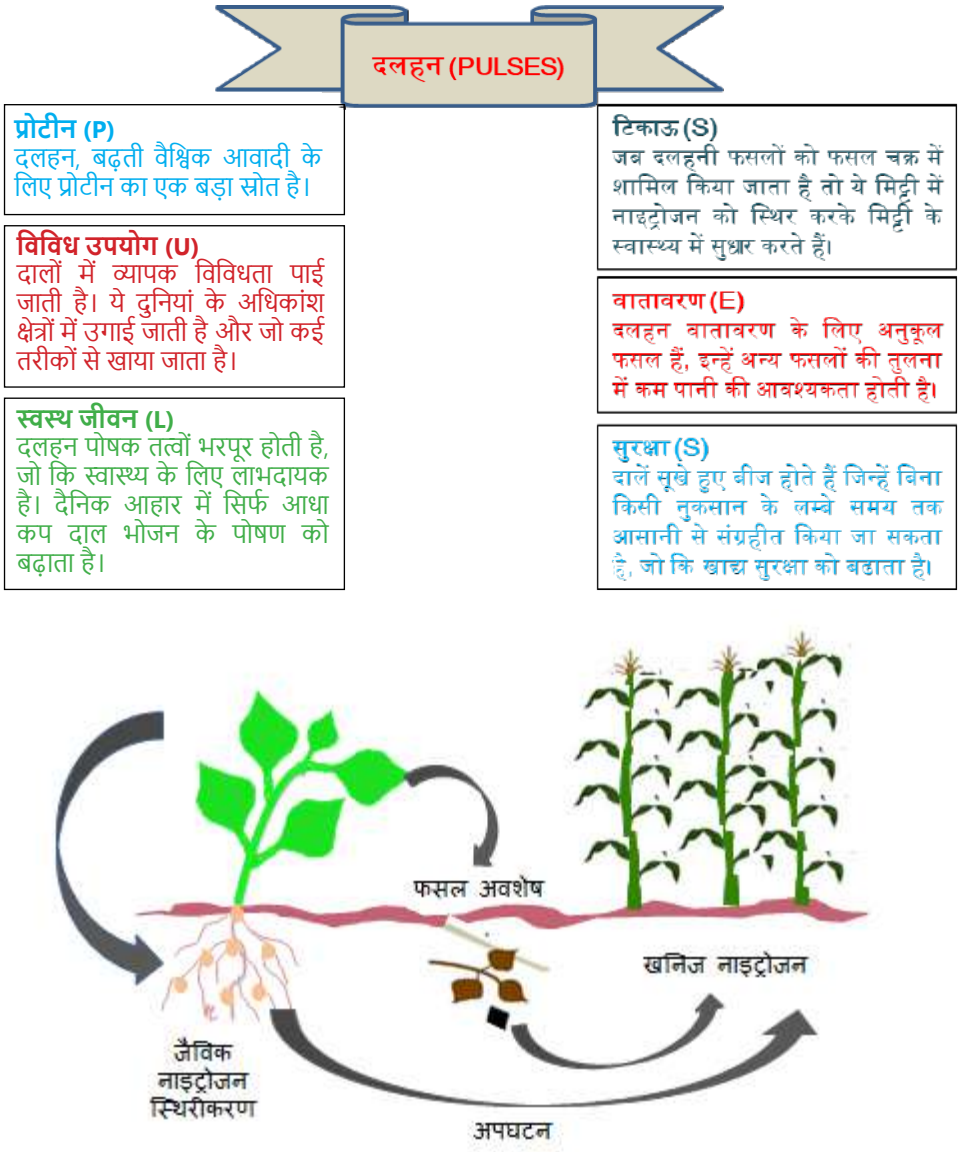

चित्र: दलहन आधारित फसल प्रणाली

दलहन और खाद्य सुरक्षा

खाद्य सुरक्षा एक ऐसी स्थिति है जब सभी लोगों के पास, हमेशा, शारीरिक, सामाजिक और आर्थिक रूप से पर्याप्त, सुरक्षित और पौष्टिक भोजन उपलब्ध हो। जो एक सक्रिय और स्वस्थ जीवन के लिए उनकी आहार आवश्यकताओं और खाद्य वरीयताओं को पूरा करती है। खाद्य सुरक्षा में कई पहलुओं को शामिल किया गया है, जैसे कि खाद्य उपलब्धता, पहुंच, सामर्थ्य, स्थिरता और उपयोग। खाद्य उत्पादन, खाद्य सुरक्षा और जलवायु परिवर्तन एक दूसरे से आंतरिक रूप से जुड़े हुए हैं । चाहे वो बाढ़ के रूप में हो या सूखे, तूफान या मिट्टी का अम्लीकरण के रूप में। दुनिया में अनेक ऐसे कई देश हैं जहां कुपोषण एक महत्वपूर्ण मुद्दा है और इन देशों के बड़े क्षेत्र में दालों का उत्पादन की अपार संभावनाएं है। इस प्रकार, इन क्षेत्रों में दालों का उत्पादन खाद्य और पोषण सुरक्षा को बढ़ाने में मदद कर सकता है।

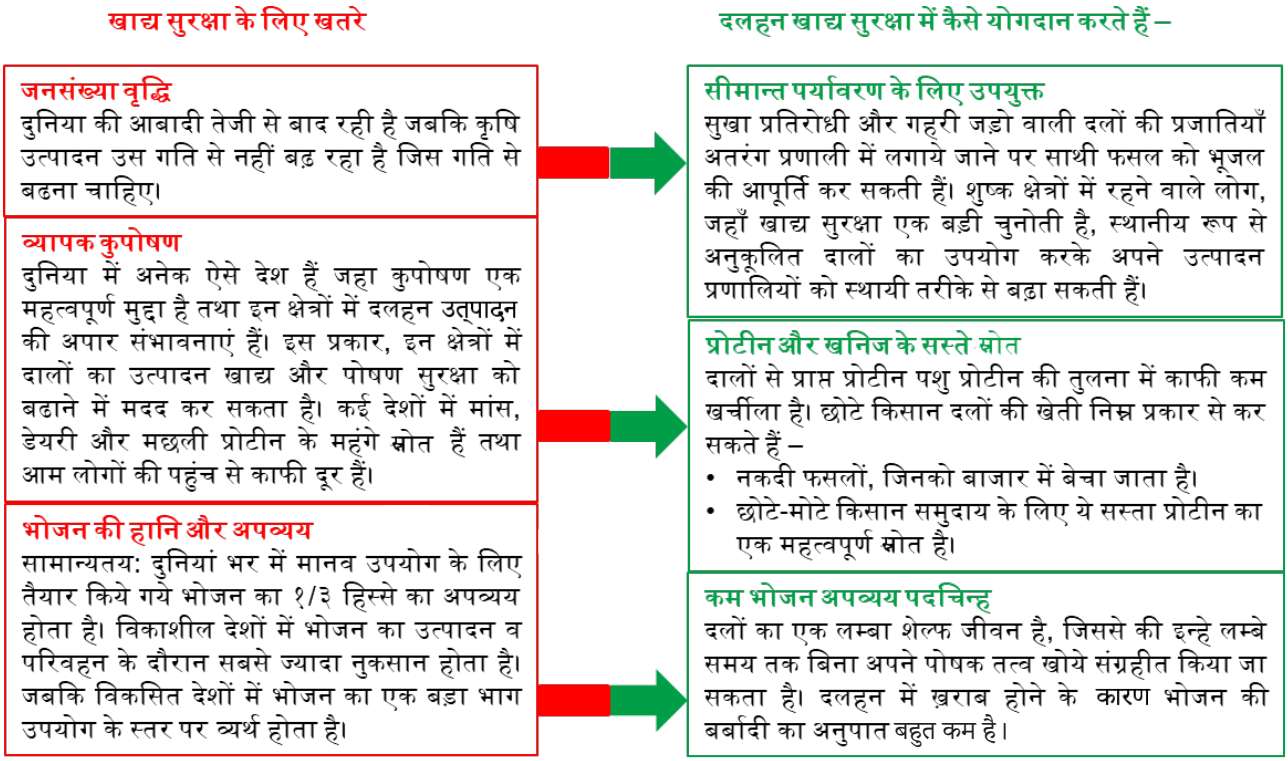

चित्र: दलहन का खाद्य सुरक्षा में महत्व

फूल चुन कर एकत्र करने के लिए मत ठहरो। आगे बढ़े चलो, तुम्हारे पथ में फूल निरंतर खिलते रहेंगे।

- रवींद्रनाथ ठाकुर

ग्रामीण कृषि विपणन से ग्रामीण विकास का बदलता परिदृश्य

प्रेम नारायण

भा.कृ.अनु.प.-राष्ट्रीय कृषि आर्थिकी एवं नीति अनुसंधान संस्थान,
डी.पी.एस. रोड, पूसा,नई दिल्ली -110012

सारांश

देश के समग्र ग्रामीण विकास के लिए कृषि क्षेत्र में आत्मनिर्भर होने के साथ-साथ कृषि उत्पादों की मांग एवं आपूर्ति में संतुलन बनाए रखने हेतु ग्रामीण विपणन एवं बाजार अवसंरचना में सुधार का महत्वपूर्ण योगदान है। हमारी सरकार वर्ष 2015-16 से 2021-22 में लगातार कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय, ग्रामीण विपणन, बाजार सुविधाओं एवं अवसंरचना निर्माण को उच्च प्राथिमिकता दे रही है। वैश्विक महामारी कोविड-19 के दौरान कृषि की विकास दर में 3.4 प्रतिशत की वृद्धि होने से जीडीपी में कृषि की हिस्सेदारी 17.8 प्रतिशत की दर से बढ़ कर 19.9 प्रतिशत हो गई है। विश्व कृषि व्यापार में भारत के कृषि निर्यात और आयात का हिस्सा क्रमशः 2.27 प्रतिशत और 1.90 प्रतिशत था। वैश्विक कोरोना महामारी में लॉकडाउन के कठिन समय के दौरान भी, वर्ष 2019-20 में कृषि और संबद्ध वस्तुओं का निर्यात 249 हजार करोड़ दर्ज किया गया जो वर्ष 2020-21 में 22.5 प्रतिशत की वृद्धि के साथ बढ़कर 305 हजार करोड़ रुपए हो गया। भारत ने विश्व खाद्य आपूर्ति श्रृंखला सुधार हुआ और निर्यात जारी रखा गया। ग्रामीण कृषि विपणन एवं बुनियादी ढांचे में विकास का महत्वपूर्ण योगदान होने से आज देश कठिन परिस्थितियों में भी कृषि विकास दर बेहतर दर्ज की गई।

देश के ग्रामीण विकास में स्वाभाविक रूप से ग्रामीण विपणन आर्थिक विकास के लिए उत्प्रेरक के रूप में कार्य करता है। शहरों की तुलना में ग्रामीण क्षेत्रों में अधिक आकर्षक व्यवसाय के अवसर मौजूद हैं। कच्चे माल एवं उपभोक्ता टिकाऊ वस्तुओं और सेवाओं के लिए ग्रामीण बाजार में अधिक संभावनाएं हैं। वर्ष 1950 में देश की 75 प्रतिशत जनसंख्या कृषि व्यवसाय पर निर्भर करती थी और यह कुल राष्ट्रीय आय में लगभग 50 प्रतिशत का योगदान करती थी।

आज भी कृषि क्षेत्र भारतीय अर्थव्यवस्था का आधारभूत स्तंभ माना जाता है। आज देश की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए औद्योगिक क्षेत्रों का बड़ी तेजी के साथ विकास हुआ जिससे बढ़ते शहरीकरण के कारण कृषि भूमि का लगातार अधिग्रहण हो रहा है, जिसके कारण कृषि क्षेत्र के कुल सकल घरेलू आय में हिस्सेदारी घटती गई। आर्थिक सर्वेक्षण 2019 के आंकड़ों के अनुसार कृषि क्षेत्र न केवल भारत की जीडीपी में लगभग 15.96 प्रतिशत का योगदान करता है बल्कि भारत की लगभग 55 प्रतिशत जनसंख्या रोज़गार के लिए कृषि क्षेत्र पर ही निर्भर है।

ग्रामीण विकास जिसका विश्लेषण दो दृष्टिकोण संकुचित एवं व्यापक के आधार पर किया गया है। संकुचित दृष्टिकोण से ग्रामीण विकास का अभिप्राय है विविध कार्यक्रमों, जैसे- कृषि, पशुपालन, ग्रामीण हस्तकला एवं उद्योग, ग्रामीण मूल संरचना में बदलाव, आदि के द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों का विकास करना। वृहद दृष्टिकोण से ग्रामीण विकास का अर्थ है ग्रामीण जनता के जीवन में गुणात्मक उन्नति हेतु सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक, प्रौद्योगिक एवं संरचनात्मक परिवर्तन करना। विश्व बैंक (1975) के अनुसार "ग्रामीण विकास एक विशिष्ट समूह- ग्रामीण निर्धनों के आर्थिक एवं सामाजिक जीवन को उन्नत करने की एक रणनीति है।

डा. बसंत देसाई (1988) ने भी इसी रुप में ग्रामीण विकास को परिभाषित करते हुए कहा कि, "ग्रामीण विकास एक अभिगम है जिसके द्वारा ग्रामीण जनसंख्या के जीवन की गुणवत्ता में उन्नयन हेतु क्षेत्रीय स्रोतों के

बेहतर उपयोग एवं संरचनात्मक सुविधाओं के निर्माण के आधार पर उनका सामाजिक आर्थिक विकास किया जाता है एवं उनके नियोजन एवं आय के अवसरों को बढ़ाने के प्रयास किए जाते हैं।

क्रॉप (1992) ने ग्रामीण विकास को एक प्रक्रिया बताया जिसका उद्देश्य सामूहिक प्रयासों के माध्यम से नगरीय क्षेत्र के बाहर रहने वाले व्यक्तियों के जनजीवन को सुधारना एवं स्वावलंबी बनाना है।

जॉन हैरिस (1986) ने यह बताया कि ग्रामीण विकास एक नीतिगत प्रक्रिया है जिसका आविर्भाव विश्व बैंक एवं संयुक्त राष्ट्र संस्थाओं की नियोजित विकास की नई रणनीति के विशेष परिप्रेक्ष्य में हुआ है।

ग्रामीण विकास की उपरोक्त परिभाषाओं के विश्लेषण में यह तथ्य उल्लेखनीय है कि ग्रामीण विकास की रणनीति में राज्यों की भूमिका को महत्वपूर्ण माना गया है। राज्यों के हस्तक्षेप के बिना ग्राम वासियों के निजी अथवा सामूहिक प्रयासों, स्वयंसेवी संगठनों के प्रयासों के आधार पर भी ग्रामीण जनजीवन को उन्नत करने के प्रयास होते रहे हैं, इन प्रयासों को ग्रामीण विकास की परिधि में शामिल किया जा सकता है।

भारतीय अर्थ तंत्र में कृषि क्षेत्र की भागीदारी

आर्थिक सर्वेक्षण में साल 2018-19 में देश की आर्थिक वृद्धि दर 7 से 7.5 प्रतिशत रहने का अनुमान लगाया गया था जबकि कृषि विकास दर वर्ष 2016-17 में 4.9 प्रतिशत दर्ज की गई थी। वर्ष 2016-17 के आर्थिक सर्वेक्षण के आधार पर कृषि एवं संबद्ध क्षेत्रों का देश के सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में 17.8 प्रतिशत योगदान रहा है। वर्ष 2017-18 के दौरान बाग़वानी फसलों का क्षेत्रफल 25.43 मिलियन हेक्टर एवं उत्पादन 311.71 मिलियन टन प्राप्त हुआ जोकि कुल खाद्यान्नों के उत्पादन से अधिक है। अत: कृषि उत्पादन के विपणन हेतु ग्रामीण विपणन बाजार सुविधाओं का होना अति आवश्यक है। फलों एवं सब्जियों के उचित भंडारण हेतु शीत गृहों अवसंरचनाओं की आवश्यकता है जिससे इन्हें अधिक समय तक बेहतर गुणवत्ता में रखा जा सके।

ग्रामीण विपणन में अवसंरचना में सुधार

भारत में कृषि विपणन सार्वजनिक स्वामित्व वाले थोक बाजारों के एक समूह द्वारा शासित था जो एपीएमसी अधिनियम के तहत औपनिवेशिक काल के दौरान स्थापित किए गए थे। नियामक तंत्र, जो कि 100 वर्ष से अधिक पुराना है, निसंदेह, कुछ अच्छी विपणन प्रथाओं को स्थापित किया है, लेकिन यह प्रणाली विभिन्न नियामक तंत्रों और कृषि वस्तुओं के व्यापार पर प्रतिबंधों के कारण कुछ कमियों से भी लड़ रही है, इसलिए ग्रामीण विपणन गतिविधियों को मुख्य धारा में लाने के लिए भारत सरकार ने एक मॉडल अधिनियम 2003 और एपीएलएम अधिनियम 2017 के माध्यम से इस क्षेत्र में सुधार क्रियान्वित किया। मॉडल अधिनियम में वस्तुओं की आवाजाही पर प्रतिबंध हटाने, बाजार शुल्क की एकल वसूली, वैकल्पिक विपणन प्रणाली को बढ़ावा देने एवं सूचना संचार तकनीकी को प्राथमिकता दी गई। इन सभी प्रयासों का उद्देश्य ग्रामीण विपणन में सुधार लाना, मुख्य रूप से कृषि व्यापार में प्रतिबंधों को हटाना और सूचना संचार तकनीकी और वैकल्पिक बाजार चैनलों का लाभ उठाकर व्यापारियों की अधिक से अधिक भागीदारी सुनिश्चित करके प्रतिस्पर्धा का माहौल तैयार करना आवश्यक है।

सरकार ने केंद्रीय बजट 2014-15 में एकीकृत आम बाजार मंच के विचार का प्रस्ताव रखा जो 14 अप्रैल, 2016 को शुरू किया गया। एक अखिल भारतीय इलेक्ट्रॉनिक ट्रेडिंग पोर्टल (ई-नाम) जिसे राष्ट्रीय कृषि बाजार के रूप में जाना जाता है। यह एक आभासी बाजार मंच है जो मौजूदा भौतिक मंडियों यानी एपीएमसी को इलेक्ट्रॉनिक रूप से "एक राष्ट्र, एक बाजार" की पहल के साथ बाजार के रूप में स्थापित किया गया है।

ई-नाम एकरूपता को बढ़ावा देता है, एकीकृत बाजारों में प्रक्रियाओं को सुव्यवस्थित करता है एवं खरीदारों और विक्रेताओं के बीच सूचनाओं को आदान प्रदान करता है और बाजार में वास्तविक मांग और आपूर्ति के आधार पर वास्तविक समय एवं मूल्य की जानकारी को बढ़ावा देता है। यह नीलामी प्रक्रिया में पारदर्शिता प्रदान करता है और दोनों पक्षों को एक राष्ट्रव्यापी बाजार तक पहुंच प्रदान

करता है। ई-नाम (राष्ट्रीय कृषि बाजार) को निम्नलिखित दृष्टिकोण, मिशन और उद्देश्यों के साथ शुरू किया गया था। कृषि फसलों में अखिल भारतीय व्यापार की सुविधा के लिए एक सामान्य ऑनलाइन बाजार मंच के माध्यम से देश भर में एपीएमसी का एकीकरण, उत्पाद की गुणवत्ता के आधार पर पारदर्शी नीलामी प्रक्रिया के माध्यम से बेहतर मूल्य प्रदान करना और समय पर ऑनलाइन भुगतान सुनिश्चित करना है।

भारत में ई-नाम मंडियों की स्थिति

भारत में कृषि विपणन में एकरूपता को बढ़ावा देने के उद्देश्य से, 18 राज्यों और 2 केंद्र शासित प्रदेशों में 1,000 मंडियों को एकीकृत किया गया है। ई-नाम के अंतर्गत आने वाली मंडियों राजस्थान में सबसे अधिक 144 मंडी, उत्तर प्रदेश में 125 एवं गुजरात में 122 मंडियां कार्यरत है इसी तरह अन्य राज्यों की मंडियों का विवरण (तालिका 1) में दर्शाया गया है।

सरकार ने ग्रामीण विपणन पर बनी समिति की सिफारिश को स्वीकार करते हुए वर्ष 2018-19 के बजट में निर्णय लिया कि कृषि उत्पादों की बिक्री तंत्र को मजबूत करने के लिए देश भर के 22,000 ग्रामीण हाटों को कृषि बाजार में बदल दिया जाएगा, ताकि जो किसान ए.पी.एम.सी. मंडियों की जगह वे अपने नजदीक इन हाटों में फसल बेचकर लाभकारी मूल्य प्राप्त कर सकें। इसमें से 10,000 ग्रामीण कृषि बाजारों में विपणन अवसंरचना विकास के लिए सरकार ने नाबार्ड के अधीन 2,000 करोड़ रुपए के एग्री-मार्केट इन्फ्रास्ट्रक्चर फंड (एएमआई एफ) को मंजूरी दी थी।

इस फंड को राज्यों एवं केंद्रशासित प्रदेशों को सस्ती दर (करीब छह फीसदी) पर लोन देना है, ताकि वे इस धनराशि का उपयोग कर अपने यहां के हाटों को कृषि बाजार में परिवर्तित कर सकें। हालांकि नाबार्ड ने बताया है कि इस फंड को प्राप्त करने के लिए अभी तक एक भी राज्य ने प्रस्ताव नहीं भेजा है, जबकि ए.एम.आई.एफ के सुझाव के तहत 31 मार्च 2020 तक राज्यों एवं केंद्र शासित प्रदेशों द्वारा भेजे गए प्रस्तावों और सत्यापन के बाद इसकी स्वीकृति वालों को ही योजना के तहत फंड प्राप्त करने योग्य माना जाएगा।

तालिका 1. देश भर में ई-नाम बाजार

क्रमांक	राज्य	कुल मंडी
1.	आंध्र प्रदेश	33
2.	चंडीगढ़	01
3.	छत्तीसगढ़	14
4.	गुजरात	122
5.	हरियाणा	81
6.	हिमाचल प्रदेश	19
7.	जम्मू कश्मीर	02
8.	झारखंड	19
9.	कर्नाटक	02
10.	केरल	06
11.	मध्य प्रदेश	80
12.	महाराष्ट्र	118
13.	ओडिशा	41
14.	पुडुचेरी	02
15.	पंजाब	37
16.	राजस्थान	144
17.	तमिलनाडु	63
18.	तेलंगाना	57
19.	उत्तर प्रदेश	125
20.	उत्तरा खंड	16
21.	पश्चिम बंगाल	18

भारत सरकार ने एग्री-मार्केट इन्फ्रास्ट्रक्चर फंड के दिशानिर्देश सभी राज्यों को जारी कर दिए हैं और नाबार्ड ने 22 जुलाई 2020 को अपने क्षेत्रीय कार्यालयों में एक आंतरिक दिशानिर्देश भेजा है। हालांकि अभी तक हमें किसी भी राज्य से कोई प्रस्ताव नहीं मिला है। कृषि क्षेत्र

में उद्यमिता को बढ़ाने के लिए भी महत्त्वपूर्ण प्रयास किए गए हैं। मेगा फूड पार्कों के अलावा कृषि उत्पादों के लिए मुख्य जनपदों को क्लस्टर के रूप में विकसित किए जाने की योजना है।

देश में सड़कों का बुनियादी ढांचा विकास

सड़क प्रणाली देश की अर्थव्यवस्था की धुरी है और विकास के केंद्र के रूप में कार्य करती है। इसका उद्देश्य माल और कृषि उपज को मंडी तक पहुंचाना, पर्यटन और संपर्क स्थापित करने जैसे कई महत्त्वपूर्ण कार्य संपन्न होते हैं। देश में सभी मौसमों में चालू रहने वाली बेहतरीन किस्म के मजबूत सड़क नेटवर्क को बढ़ावा देने से तीव्र सामाजिक-आर्थिक विकास के साथ-साथ, व्यापार के सुचारू रूप से संचालन तथा देश भर के बाजारों के समन्वयन में मदद मिलती है। प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना (प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना) का मूल उद्देश्य देश के ग्रामीण विकास के लिए गांवों को सड़क संपर्क से जोड़ना है जो अब तक अलग-थलग पड़े हुए थे।

चित्र 1. सड़क राजमार्ग से गांवों को जोड़ना

सड़क परिवहन और राजमार्ग मंत्रालय का वर्ष 2017-18 का कुल खर्च करीब 64,900 करोड़ रुपए था जोकि वर्ष 2016-17 के संशोधित अनुमान से 24 प्रतिशत अधिक है। वर्ष 2017-18 में कुल खर्च में से सबसे अधिक आवंटन सड़कों और पुलों के निर्माण के लिए रखा गया, इसके बाद भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण के लिए 37 प्रतिशत का आवंटन किया गया जिसमें राजस्व खर्च 10,723 करोड़ रुपए और पूंजी खर्च 54,177 करोड़ रुपए है। बजट वर्ष 2021-22 में सड़क एवं राजमार्ग अवसंरचना सड़क एवं राजमार्ग मंत्रालय को 1,81,101 लाख करोड़ रूपये का अब तक का सर्वाधिक आबंटन किया गया (चित्र 1.)।

ग्रामीण विपणन में भंडारण का विकास

सरकार उपज के नुकसान को कम करने के किए खरीफ़ और रबी फसलों की बुवाई से पहले ही न्यूनतम समर्थन मूल्य (MSP) के साथ कृषि उपज की खरीद में वृद्धि होने की घोषणा कर देती है। इसलिए किसान खाद्य फसलों के अधिक उत्पादन लेने की कोशिश में जुट जाते है जबकि अच्छे भंडारण और परिवहन सुविधाओं के अभाव में अधिक उत्पादन कभी-कभी लाभप्रद साबित नहीं हो पाता है क्योंकि बाजार में उपज के अधिक आपूर्ति के कारण भाव गिर जाते हैं और किसान को कम कीमत पर अपनी उपज को बेचना पड़ता है।

शीघ्र नष्ट होने वाले फल सब्जियों का उत्पादन अनुकूल परिस्थितियों में बहुत अधिक होता है जो कभी-कभी मंडियों में विषम परिस्थितियों के कारण नहीं पहुंच पाती है तो सड़कर बर्बाद हो जाती है या अधिक पहुंच के कारण भाव कम हो जाने से किसानों को नुकसान उठाना पड़ता है। उपज के उचित भंडारण और परिवहन सुविधाओं के अभाव के कारण भारतीय किसान प्रति वर्ष 92,651 करोड़ रुपए का नुकसान उठाते है जबकि उच्चस्तरीय दलवई समिति की रिपोर्ट के अनुसार भारत सरकार 89,375 करोड़ रुपए का निवेश सब खाद्य फसलों के भंडारण और परिवहन सुविधाओं की स्थिति में सुधार करने के लिए करती है जो वार्षिक नुकसान की तुलना में थोड़ा कम है। भंडारण सुविधाओं की कमी के कारण समय से सुविधाओं को उपलब्ध न होने से 4.6-6 प्रतिशत गेहूं प्रति वर्ष खुले में बारिश में ख़राब हो जाता है।

उपलब्ध आंकड़ों के अनुसार भारतीय खाद्य निगम (एफ़सीआई) के गोदामों में वर्ष 1997 से 2007 के दौरान 1.83 लाख टन गेहूं, 6.33 लाख टन चावल, 2.20 लाख टन धान और 111 टन का मक्का नुकसान हुआ है। हर साल क़रीब 60 हजार करोड़ रुपए की सब्जियां और फल भी ख़राब हो जाते हैं (चित्र 2.)। सरकार को खाद्यान्न भंडारण एवं फल सब्जियों के शीत भंडारण की विशेष

व्यवस्था करनी चाहिए। खाद्यान्न भंडारण एवं फल सब्जियों के शीत भंडारण के लिए काफी पूंजी निवेश की आवश्यकता है इस समस्या को हल करने के लिए पब्लिक प्राइवेट पार्टनरशिप (PPP Model) की भागीदारी से प्रवंधन कुशलता बढ़ाई जा सकती है।

चित्र 2 भंडारण की कमी से खाद्यान्न का नुकसान

बागवानी फसलों के भंडारण के लिए योजना

बागवानी फसलों की खेती के लिए केंद्र तथा राज्य सरकार मिलकर बागवानी के लिए लागत का 50 से 100 प्रतिशत की सब्सिडी दे रही है। जिसमें पूर्वोतर राज्यों तथा हिमाचल प्रदेश के लिए 100 प्रतिशत तथा शेष अन्य राज्यों के लिए 50 प्रतिशत की सब्सिडी दी जा रहा है। इसका मुख्य उद्देश्य है कि देश में फलों का उत्पादन बढ़ाया जाए तथा किसानों को खेती में अधिक मुनाफा हो सके। फलों, सब्ज़ियों एवं फसलों के बंपर उत्पादन के बाद उसकी ग्रेडिंग करके भंडारण करना किसानों के लिए एक बड़ी समस्या है।

सरकार का मुख्य ध्यान किसानों को प्रोत्साहित करना है कि वे वेयर हाउस का उपयोग करें व अपनी फसल को मजबूरी में ना बेचें। किसानों को नुकसान से बचाने के लिए सरकार का पूरा फोकस ग्रामीण भंडारण एवं एकीकृत शीत श्रृंखला (Integrated Cold Chain) पर है, जो पर्याप्त और उचित भंडारण सुविधा की कमी के कारण एक बड़ी समस्या है जो किसानों को प्याज की आपात बिक्री के लिए विवश करता है। ग्रामीण भंडारण योजना किसानों के लिए बेहद मददगार साबित हो सकती है यदि इसका सही तरीके से लाभ उठाया जाए (चित्र 3)।

चित्र 3. फलों एवं सब्ज़ियों की ग्रेडिंग

यदि स्वयं किसान भंडार गृह का निर्माण करें तो इसमें बहुत खर्चा आता है जो एक साधारण किसान के बस की बात नहीं है। अच्छी भंडारण सुविधा के साथ किसानों को डिजिटल मंडियों के बाजार भाव पर ध्यान रखना चाहिए जिससे अपनी फसल के सही मौके पर सही कीमत ग्रामीण बाजार से ले सके एवं अपनी आमदनी बढ़ा सके। फसल कटाई के बाद समुचित भंडारण समन्वय फसल प्रबंधन के लिए सरकार ने स्टोरेज यूनिट पर 2 लाख का अनुदान दिया है एवं समन्वय पक्का भंडारण (9*18 मीटर) तथा शोर्टिंग ग्रेडिंग मशीन के लिए 17.50 लाख एवं शीत गृह के लिए 8.75 लाख प्रति यूनिट तक का अनुदान दिया गया।

चित्र 4. फलों एवं सब्ज़ियों का भंडारण

ग्रामीण विपणन के लाभ

ग्रामीण विपणन का तात्पर्य विपणन सिद्धांत को लागू करना और ग्रामीण बाजार (ग्राहकों) की जरूरतों को बनाने और संतुष्ट करने के लिए विपणन प्रयासों को निर्देशित करना है। ग्रामीण और शहरी विपणन का योगदान विपणन के महत्व को दर्शाता है। ग्रामीण बाजार शहरों की तुलना में तेजी से बढ़ रहा है। ग्रामीण विपणन के परिणामस्वरूप समग्र संतुलित आर्थिक और सामाजिक विकास होता है। ग्रामीण विपणन व्यावसायिक इकाइयों, ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले लोगों, शहरी क्षेत्रों में रहने वाले लोगों और पूरे देश के लिए लाभप्रद हो जाता है। ग्रामीण विपणन एवं बाजारों का विकास समग्र समृद्धि और कल्याण में महत्वपूर्ण योगदान देता है।

1. तीव्र आर्थिक विकास

स्वाभाविक रूप से, विपणन आर्थिक विकास के लिए उत्प्रेरक के रूप में कार्य करता है। शहरों की तुलना में ग्रामीण क्षेत्रों में अधिक आकर्षक व्यवसाय अवसर मौजूद हैं। उपभोक्ता टिकाऊ वस्तुओं और सेवाओं के लिए ग्रामीण बाजार में अधिक संभावनाएं हैं। ग्रामीण जन संख्या मुख्य रूप से कृषि पर निर्भर करती है। वर्तमान में कुल निर्यात कारोबार में भी कृषि क्षेत्र का महत्वपूर्ण 13 प्रतिशत हिस्सा है। ग्रामीण विपणन से कृषि क्षेत्र में सुधार से देश की पूरी अर्थव्यवस्था को बढ़ावा मिल सकता है।

2. रोजगार सृजन

ग्रामीण विपणन ग्रामीण और शहरी लोगों के लिए अधिक आकर्षक रोजगार के अवसर पैदा कर सकता है। ग्रामीण विपणन के विकास से व्यवसायिक गतिविधियों और सेवाओं में वृद्धि होती है जो रोजगार के बहुत सारे अवसर पैदा कर सकती है। ग्रामीण विपणन प्रणाली के कारण, ग्रामीण खरीदार उचित मूल्य पर आवश्यक मानक वस्तुओं और सेवाओं तक आसानी से पहुंच सकते हैं। उसी तरह, ग्रामीण विपणन ग्रामीण बुनियादी ढांचे के निर्माण से जैसे सड़क, यातायात, बिजली सुधार होता है। जो ग्रामीण विपणन के आलावा अन्य लोगों भी रोजगार के साधन प्रदान किए जा सकते है। ये सभी पहलू सीधे आम लोगों के जीवन स्तर में सुधार ला सकते हैं।

3. ग्रामीण विपणन से गांवों का विकास

ग्रामीण विपणन ग्रामीण बुनियादी ढांचे और समृद्धि में योगदान कर सकता है। गांवों में तुलनात्मक रूप से कम कीमत पर भी सभी वस्तुओं और सेवाओं की उपलब्धता के कारण लोग गांवों में जीवन यापन कर सकते हैं। लोग, विपणन गतिविधियों की वृद्धि के कारण, ग्रामीण क्षेत्रों में अपनी आजीविका कमा सकते हैं जिससे शहरी जनसंख्या पर दबाव कम होगा जिससे बिजली, पानी, बढ़ती ट्राफिक जाम की समस्या का आसानी से समाधान किया जा सकता है। इस तरह ग्रामीण विकास भी तेज़ी से होगा।

5. कृषि आधारित उद्योगों का विकास

ग्रामीण विपणन कृषि आधारित प्रसंस्करण उद्योग स्थापित करने की ओर ले जाता है। कच्चे माल के रूप में फल, सब्जियां, अनाज, दालें आदि का उपयोग किया जाता है। इसके अतिरिक्त जीवन शैली खानपान बदलते परिवेश में डेरी, मुर्गी पालन, मत्स्य उद्योग किसानों के लाभ मार्जिन और रोजगार के अवसरों में सुधार कर सकते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में व्यापार के असीमित अवसर मौजूद हैं। अप्रयुक्त और कम उपयोग किए गए संसाधनों का इष्टतम स्तर पर उपयोग किया जा सकता है और इससे समग्र आर्थिक विकास में और तेजी आ सकती है।

6. कृषि उत्पादों की आसान विपणन क्षमता

ग्रामीण विपणन के विकास से संपूर्ण विपणन प्रणाली में सुधार होता है। किसानों और स्थानीय उत्पादकों के लिए अपने उत्पादों के विपणन के लिए कई विकल्प उपलब्ध हैं। बड़े कॉरपोरेट और बहुराष्ट्रीय कंपनियां गांवों से सीधे अपने या एजेंटों और छोटी फर्मों के माध्यम से कृषि उत्पाद खरीदना पसंद करती हैं। ग्रामीण उत्पादक अपनी उपज को संतोषजनक कीमतों पर आसानी से बेच सकते हैं एवं उनकी क्रय शक्ति में सुधार हो सकता है जो देश औद्योगिक मांग को और बढ़ा सकता है।

7. मूल्य में स्थिरता

उत्पादकों, व्यापारियों एवं उपभोक्ताओं को मूल्य में स्थिरता से लाभ मिलता है एवं कृषि उत्पादों को पूरे वर्ष व्यवस्थित रूप से विपणन किया जा सकता है। मांग और आपूर्ति के बीच अंतराल से बचा जा सकता है, इसके परिणाम स्वरूप, अधिकांश वस्तुओं की कीमतें कमोबेश स्थिर रहती हैं। ग्रामीण विपणन का तात्पर्य विपणन सिद्धांत को लागू करना ग्रामीण (ग्राहकों) की जरूरतों और संतुष्ट करने के लिए विपणन प्रयासों को निर्देशित करना है। विपणन का महत्व ग्रामीण और शहरी विपणन के योगदान को दर्शाता है। ग्रामीण बाजार शहरों की तुलना में तेजी से बढ़ रहा है, इसके परिणाम स्वरूप समग्र संतुलित आर्थिक और सामाजिक विकास तेज़ी से होता है। ग्रामीण विपणन व्यावसायिक इकाइयों, ग्रामीण क्षेत्रों में एवं शहरी क्षेत्रों में रहने वाले लोगों के लिए लाभदायक हो सकता है।

8. विपणन से कृषि निर्यात में वृद्धि

इस वर्ष 2020 मार्च-जून में महामारी के कारण व्यवधान के बावजूद कृषि निर्यात 23 प्रतिशत बढ़कर 25,553 करोड़ रुपए हो गया। भारत न केवल अनाज का सबसे बड़ा उत्पादक है बल्कि दुनिया में अनाज उत्पादों का सबसे बड़ा निर्यातक है। भारत का कुल अनाज का निर्यात रु 40361.56 करोड़ वर्ष 2016-17 के दौरान किया गया जो बढ़कर वर्ष 2020-21 में 74448.36 करोड़ हो गया, इनमें चावल (बासमती और गैर बासमती सहित) भारत के कुल अनाज निर्यात में वर्ष 2020-21 के दौरान 87.70 प्रतिशत के साथ प्रमुख हिस्सा है।

भारत का कुल अनाज का निर्यात रु 40361.56 करोड़ वर्ष 2016-17 के दौरान किया गया जो बढ़कर वर्ष 2020-21 में 74448.36 करोड़ रुपए हो गया, इनमें चावल (बासमती और गैर बासमती सहित) भारत के कुल अनाज निर्यात में वर्ष 2020-21 के दौरान 87.70 प्रतिशत के साथ प्रमुख हिस्सा है। जबकि, इस अवधि के दौरान भारत से निर्यात किए गए कुल अनाज में गेहूं सहित अन्य अनाज केवल 12.30% हिस्सेदारी का प्रतिनिधित्व करते हैं।

ग्रामीण विपणन जोखिम को कम करना

ग्रामीण विपणन या किसी भी विपणन प्रणाली की लाभप्रदता और सफल कामकाज में जोखिम को कम करता है। जो सिद्धांत अधिकांश अर्थशास्त्रियों को स्वीकार्य है, वह है जोखिम वहन करने वाला सिद्धांत- हार्डी ने जोखिम को अनिश्चितता के रूप में परिभाषित किया है जो आपको पर्याप्त लाभ दे सकता है या यह बुरी तरह से बर्बाद कर सकता है। एक जगह वह बताते हैं कि कम रिस्क कम प्रॉफिट, ज्यादा रिस्क ज्यादा प्रॉफिट की संभावनाएं होती है। उन्होंने जोखिम सिद्धांत को परिभाषित किया है, "लाभ अनिश्चितता और जोखिम वहन का इनाम है"।

सभी मार्केटिंग लेनदेन में जोखिम निहित है। आग, कृन्तकों या अन्य तत्वों से उपज के नष्ट होने, गुणवत्ता में गिरावट, कीमत में गिरावट, स्वाद, आदतों या फैशन में बदलाव और वस्तु को गलत हाथों या क्षेत्र में रखने का जोखिम है। जब भी जोखिम अधिक और विविध होते हैं, जोखिम उठाने वालों द्वारा लिया गया मार्जिन अधिक पड़ता है, और इसके विपरीत जो इस प्रक्रिया में वस्तु को धारण करता है वह जोखिम का वाहक होता है उसे प्रतिफल के रूप में लाभ प्राप्त होता है कभी कभी विषम परिस्थितियों हानि भी उठानी पड़ती जैसे कोविड 19 महामारी में लॉकडाउन के कारण उत्पाद ख़राब होने से जोखिम की संभावना अधिक होती है।

जोखिम के प्रकार

1. मूल्य जोखिम

ग्रामीण उत्पादों की कीमतों में न केवल साल-दर-साल उतार-चढ़ाव होता है, बल्कि साल-दर-महीने, दिन-प्रतिदिन और यहां तक कि एक ही दिन में भी उतार-चढ़ाव होता है। कीमतों में बदलाव ऊपर या नीचे हो सकता है। मूल्य भिन्नता से इंकार नहीं किया जा सकता है, क्योंकि ग्रामीण उत्पादों की मांग और आपूर्ति को प्रभावित करने वाले कारक लगातार बदल रहे हैं। कीमत में गिरावट से उस व्यापारी या किसान को नुकसान हो सकता है जो उपज का स्टॉक करता है। कभी-कभी, जोखिम इतने अधिक होते हैं कि उनके परिणामस्वरूप व्यवसाय पूरी

तरह से विफल हो सकता है, और जो व्यक्ति इसका मालिक है वह दिवालिया हो सकता है।

2. संस्थागत जोखिम

इन जोखिमों में सरकार की बजट नीति में बदलाव, टैरिफ और कर कानूनों में बदलाव, आयत, निर्यात शुल्क में बढोत्तरी, व्यापार प्रतिबंध, वैधानिक मूल्य नियंत्रण और लेवी लगाने से उत्पन्न होने वाले जोखिम शामिल हैं।

जोखिमों का न्यूनीकरण

विपणन गतिविधियों में लगी एजेंसियां हर स्तर पर जुड़े जोखिमों की चिंता करती हैं; और वे लगातार इन जोखिमों के प्रभावों को कम करने का प्रयास करते हैं। एक जोखिम को समाप्त नहीं किया जा सकता क्योंकि इसमें लाभ भी होता है। जो एजेंसियां जोखिम नहीं उठाती हैं वे शायद ही लाभ कमाती हैं। नीचे सूचीबद्ध कुछ उपायों को अपनाने से जोखिम प्रबंधन जोखिम को कम कर सकता है। किसी उत्पाद की भौतिक हानि (मात्रा और गुणवत्ता दोनों) को निम्नलिखित उपायों को अपनाकर कम किया जा सकता है। आग के कारण होने वाली दुर्घटनाओं को रोकने के लिए भंडारण संरचनाओं में अग्निरोधक सामग्री का उपयोग। अत्यधिक नमी, तापमान, कीड़ों और कीटों, कवक और कृन्तकों के हमलों से उत्पन्न होने वाली गुणवत्ता और मात्रा में नुकसान को रोकने के लिए उन्नत भंडारण संरचनाओं का उपयोग और उत्पाद को आवश्यक पूर्व-भंडारण उपचार देना। बेहतर और तेज परिवहन विधियों का उपयोग और पारगमन के दौरान उचित संचालन; तथा उचित पैकेजिंग सामग्री का उपयोग।

बीमा कंपनियों को स्थानांतरित करके भौतिक जोखिम के बोझ को कम किया जा सकता है। ऐसे जोखिमों को वहन करने के लिए विशेष पेशेवर एजेंसियां हैं जो कुछ प्रीमियम एकत्र करते हैं और जिन कारणों से उत्पादों का बीमा किया जाता है, उनके नुकसान के मामले में पार्टी को पूर्ण मुआवजा प्रदान करते हैं। इस तरह, कंपनी कई किसानों को नुकसान के खिलाफ बीमा करती है।

कीमतों में भिन्नता से जुड़े जोखिम को कम किया जा सकता है जैसे सरकार द्वारा वस्तुओं की न्यूनतम और अधिकतम कीमतों का निर्धारण और केवल परिभाषित सीमा के भीतर कीमतों में उतार-चढ़ाव की अनुमति देना। समय और स्थान पर समाज के सभी वर्गों के लिए सटीक और वैज्ञानिक मूल्य की जानकारी के प्रसार की व्यवस्था करना इसमें बाजार की मांग, एक विशेष फसल के तहत औसत, बाजार की आपूर्ति के अनुमान और वस्तुओं के आयात और निर्यात की जानकारी शामिल होनी चाहिए।

भारत में ग्रामीण विपणन अनुसंधान

ग्रामीण बाजार अनुसंधान परंपरागत रूप से बहुत लंबे समय तक अस्तित्व में रहा है और शहरी बाजारों के पूरी तरह से विकसित होने से पहले ही इसकी संरचना हो गई है। हालांकि, विपणन और इसकी समस्याओं से संबंधित अनुसंधान हाल ही में शुरू कर दिया गया है जैसे टाटा, आई टी सी, एच यु एल, डाबर, कोलगेट-पामोलिव, लिमिटेड, रिलाइंस जियो मार्ट जैसी कंपनियों ने ग्रामीण बाजारों में आगे बढ़ना शुरू कर दिया। बड़ी कंपनियों अपने उत्पादों के मांग आपूर्ति एवं बाजारों प्रतिस्पधा बारे में जानकारी प्राप्त करने के लिए बाजार सर्वेक्षण पर अनुसंधान जारी है। हालांकि, एक अध्ययन शुरू करने में समय लगता था और इसमें भारी वित्तीय संसाधन शामिल थे। इसके अलावा, बाजार की विविधता का मतलब था कि एक क्षेत्र के डेटा को कहीं और नहीं अपनाया जा सकता था। बाजार के आकार और क्षमता का आकलन करना मुश्किल था। अनुसंधान में काफी समय और निवेश करने के बाद आज एचएलएल जैसी कंपनियों की ग्रामीण उपस्थिति मजबूत है। लेकिन, बुनियादी ढांचे और स्थानों की भौगोलिक पहुंच जैसे मुद्दे अभी भी कंपनियों को परेशान कर रहे हैं। हालांकि ग्रामीण विपणन अनुसंधान के संबंध में स्थिति धीरे-धीरे बदल रही है क्योंकि ग्रामीण विपणन पर हमारे ज्ञान का आधार उपलब्ध उच्च अनुभवात्मक आंकड़ों के साथ-साथ ग्रामीण बाजारों की गहरी पैठ दोनों के आधार पर बढ़ रहा है।

निष्कर्ष

भारतीय उद्योगों में कुशल श्रमिकों की बहुत मांग है, और उसी को पूरा करने के लिए, भारत सरकार वर्ष 2022 तक 500 मिलियन लोगों को प्रशिक्षित करने का लक्ष्य बना रही है एवं उद्यमियों और निजी संगठनों की भागीदारी को प्रोत्साहित कर रही है।

सरकार ग्रामीण शिक्षा को बढ़ाने की दिशा में एक कदम बढ़ा रही है, वहीं ग्रामीण भारत भी ऑनलाइन शिक्षा को बड़े पैमाने पर अपना रहा है। कई कॉर्पोरेट, सरकार और शैक्षिक संगठन कुशल श्रमिकों को शिक्षित करने, प्रशिक्षित करने और उत्पन्न करने के लिए कई प्रयास कर रहे हैं। ग्रामीण बाजारों में उपभोक्ताओं की पसंद ने पिछले कुछ वर्षों में एक आदर्श बदलाव दिखाया है। उनकी खपत की टोकरी शहरी समकक्षों के समान दिखती है। निकट भविष्य में ग्रामीण बाजारों तक पहुंचने की कोशिश कर रही कंपनियों के लिए ऑनलाइन पोर्टल भी बहुत महत्वपूर्ण होने की उम्मीद है। ग्रामीण भारत के कंप्यूटर और स्मार्टफोन के सशक्त होने के साथ, इंटरनेट निश्चित रूप से बहुत जल्द अपना रास्ता बनाने जा रहा है।

आभारोक्ति

लेखक इस अनुसंधान पत्र के लिखने में निदेशक, भा.कृ.अनु.प.-राष्ट्रीय कृषि आर्थिकी एवं नीति अनुसंधान संस्थान से प्राप्त समर्थन एवं संसाधन के लिए आभार प्रकट करता है।

जीवन की जड़ संयम की भूमि में जितनी गहरी जमती है और सदाचार का जितना जल दिया जाता है उतना ही जीवन हरा भरा होता है और उसमें ज्ञान का मधुर फल लगता है।

- दीनानाथ दिनेश

भारत में कृषि, वैश्विक खाद्य सुरक्षा के लिए चुनौतियां और अवसर

कालीदिंडी उषा

पर्यावरण विज्ञान संभाग
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

सारांश

विकासशील और विकसित दोनों देशों के लिए कृषि हमेशा से एक महत्वपूर्ण स्तंभ तथा विकास और अर्थव्यवस्था का चालक रहा है। भारत भी, 1960 के दशक में हरित क्रांति की गति के कारण उत्पादन और उत्पादकता के मामले में कई गुना बढ़ गया है। हालांकि, अब समय आ गया है कि हम हरित क्रांति के बाद के कृषि परिदृश्य तथा मिट्टी, पौधे और मानव स्वास्थ्य की उभरती चिंता पर फिर से विचार करें। हमें अपनी वैज्ञानिक, तकनीकी और सामाजिक चुनौतियों को फिर से परिभाषित करने की जरूरत है।

परिचय

भारत में कृषि की वर्तमान स्थिति

1.27 बिलियन की आबादी और 159.7 मिलियन हेक्टेयर भूमि के साथ भारत विशाल कृषि-पारिस्थितिकी विविधता का घर है। विश्व के भूमि क्षेत्र का केवल 2.4 प्रतिशत होने के कारण, भारत में सभी दर्ज प्रजातियों का लगभग 8% हिस्सा है, जिसमें 45,000 से अधिक पौधे और 91,000 पशु प्रजातियां शामिल हैं। भारत दूध, पशुधन का शीर्ष उत्पादक है। मसाले, दालें, चाय, काजू, जूट, और चावल, गेहूं, तिलहन, फल और सब्जियां, गन्ना और कपास का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक देश है।

देश में कुल खाद्यान्न उत्पादन 296.65 मिलियन टन होने का अनुमान है, जिसमें चावल का उत्पादन 118.43 मिलियन टन, गेहूं 107.59 मिलियन टन, पोषक/मोटा अनाज 47.48 मिलियन टन, दलहन 23.15 मिलियन टन, तिलहन 33.42 मिलियन टन, गन्ना 355.70 मिलियन टन है। कपास 35.49 मिलियन गांठें 170 किलोग्राम प्रत्येक और जूट और मेस्टा 9.91 मिलियन गांठ 80 किलोग्राम प्रत्येक (कृषि मंत्रालय, 2021)।

वर्ष 2020-21 में 103.0 मिलियन टन फलों और 197.2 मिलियन टन सब्जियों के साथ कुल बागवानी उत्पादन 331.05 मिलियन टन था। प्याज का उत्पादन 26.8 मिलियन टन, आलू का 54.2 मिलियन टन, टमाटर 21.1 मिलियन टन, सुगंधित और औषधीय फसलों का 0.78 मिलियन टन, रोपण फसलों का 16.6 मिलियन टन और मसालों का 10.7 मिलियन टन (एन. एच.बीच, 2021) था। कृषि उत्पादकता में हुई उत्कृष्ट प्रगति के बावजूद, शहरीकरण में वृद्धि के कारण प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थों की खपत में वसा, नमक, चीनी की अधिक खपत हुई, जिसमें फलों, सब्जियों और फलियों का उत्पादन और खपत अनुशंसित से कम थी। इसलिए भारतीय खाद्य प्रणाली को खाद्य सुरक्षा के साथ-साथ पोषण सुरक्षा प्रदान करने की आवश्यकता है।

2050 में खाद्यान्न की वैश्विक मांग

कृषि एक अभूतपूर्व चुनौती का सामना कर रही है। 1960 के दशक से वैश्विक अनाज उत्पादन में प्रभावशाली वृद्धि के बावजूद, 795 मिलियन खाद्य-असुरक्षित और ~2 बिलियन लोग कुपोषण से ग्रस्त हैं। 2030 तक खाद्यान्न की मांग बढ़कर 345 मिलियन टन हो जाएगी। इसके अलावा, वैश्विक जनसंख्या 2050 तक 11 बिलियन तक बढ़ने का अनुमान है। इसलिए वैश्विक खाद्य उत्पादन को 2050 तक 60 से 70% तक बढ़ाना होगा (एफएओ, 2021)।

अधिक आबादी बढ़ने पर विश्व को खिलाने के लिए मोटे तौर पर 2050 तक कृषि उत्पादन को दोगुना करने की आवश्यकता होगी, जो प्रति वर्ष फसल उत्पादन वृद्धि

2.4% की दर (रे एट अल। 2013) से अनुसरण करती है। विश्व जनसंख्या द्वारा उपभोग की जाने वाली कुल कैलोरी का एक उच्च प्रतिशत शीर्ष चार वैश्विक फसलों- मक्का, चावल, गेहूं और सोयाबीन से है। ये चार प्रमुख खाद्य फसलें- वर्तमान में प्रति वर्ष केवल 0.9 से 1.6% के बीच औसत उपज में सुधार देख रही हैं, जो कि केवल उपज लाभ (एफ.ए.ओ., 2020) से 2050 तक अपने उत्पादन को दोगुना करने के लिए आवश्यक दरों की तुलना में बहुत धीमी है।

भारत में अधिक उत्पादन की चुनौतियां

भारत का कुल भौगोलिक क्षेत्र 328.7 मिलियन हेक्टेयर है, जिसमें से 139.4 मिलियन हेक्टेयर शुद्ध बोया गया क्षेत्र है और 200.2 मिलियन हेक्टेयर सकल फसल क्षेत्र है, जिसमें 143.6% की फसल तीव्रता है। कुल बोया गया क्षेत्र कुल भौगोलिक क्षेत्र का 42.4% है। शुद्ध सिंचित क्षेत्र 68.6 मिलियन हेक्टेयर है। 1.08 हेक्टेयर के औसत आकार के साथ छोटी और सीमांत जोत, कुल भूमि जोत (कृषि जनगणना, 2015-16) का 86.08% है। इसलिए भारत में कृषि उत्पादन के लिए कृषि योग्य भूमि को और बढ़ाने की सीमित संभावना है।

जाहिर है, दुनिया एक उभरते और बढ़ते कृषि संकट का सामना कर रही है। 2050 में अनुमानित मांगों को पूरा करने के लिए पैदावार में तेजी से सुधार नहीं हो रहा है। हरित क्रांति प्रथाएं लागत गहन हैं। लेकिन जलवायु स्मार्ट कृषि को बदलती जलवायु परिस्थितियों में कम भूमि, पानी और कम इनपुट से अधिक से अधिक उत्पादन करने की आवश्यकता है। हम अब तक अपनाई जा रही पद्धति के साथ अपने कृषि उत्पादन को जारी नहीं रख सकते हैं। दुनिया भर में उत्पादन बढ़ाने के लिए चुनौतियों को मौजूदा कृषि योग्य भूमि के अधिक कुशल उपयोग और सर्वोत्तम प्रबंधन पद्धति को फैलाने और उपज अंतराल को कम करके उपज वृद्धि दर में वृद्धि के माध्यम से अवसरों में परिवर्तित किया जाना है।

अपनाई जाने वाली प्रौद्योगिकियां

भारत, वर्ष भर कृषि फसलों की खेती के लिए मिट्टी, जलवायु और जैव विविधता से संपन्न दूसरी सबसे बड़ी कृषि आधारित अर्थव्यवस्था है। जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम करके और 2050 तक प्रति व्यक्ति फसल क्षेत्र में घटती प्रवृत्ति के बावजूद वैश्विक खाद्य मांगों को पूरा किया जा सकता है। वर्तमान COVID-19 संकट ने एक ऐसा क्षण भी पैदा कर दिया है जहां कृषि-पारिस्थितिकी के लिए मौजूदा कॉल नई प्रासंगिकता प्राप्त कर लेते हैं। "कम से अधिक उत्पादन" की रणनीति के लिए मिट्टी के स्वास्थ्य की बहाली और जड़ क्षेत्र में मिट्टी की कार्बनिक कार्बन एकाग्रता को 1.5-2.0% से अधिक बढ़ाने की आवश्यकता है।

सतत गहनता से उत्पादकता बढ़ाने के साथ-साथ कृषि उपज के 30 प्रतिशत खराब होने को कम करना, खाद्यान्न की पहुंच और वितरण बढ़ाने तथा पौधे आधारित आहार को बढ़ावा देने की रणनीति बनानी होगी। हमारा लक्ष्य बेहतर पर्यावरणीय गुणवत्ता के साथ उच्च उत्पादन को समेटना, शहरी कृषि (एक्वापोनिक्स, एरोपोनिक्स और वर्टिकल फार्म) विकसित करना, पोषण-संवेदनशील खेती को बढ़ावा देना और खराब मिट्टी को बहाल करना है।

कृषि पारिस्थितिकी प्रणालियों के सतत गहनता से 0.045 हेक्टेयर कृषि योग्य भूमि पर एक व्यक्ति को एक वर्ष के लिए खिलाने के लिए पर्याप्त खाद्यान्न का उत्पादन हो सकता है। भविष्य की कृषि को परिष्कृत तकनीकों जैसे रोबोट, तापमान और नमी सेंसर, हवाई चित्र तथा जीपीएस तकनीक का उपयोग करना चाहिए। ये उन्नत उपकरण और सटीक कृषि तथा रोबोट सिस्टम खेतों को अधिक लाभदायक, कुशल, सुरक्षित और पर्यावरण के अनुकूल बनाने में मदद करेंगे (भा.कृ.अनु.प., 2015)।

विश्व की बढ़ती जनसंख्या की खाद्य मांगों को पूरा करने के प्रयासों को साइट-विशिष्ट प्रथाओं को अपनाने के माध्यम से अनाज और सिंचाई के लिए जल संसाधनों के लिए आवंटित भूमि क्षेत्र को कम करके प्राप्त किया जा सकता है। कृषि वानिकी, फसल रोटेशन, वर्षा जल संचयन, जैविक खेती, प्राकृतिक खेती- बहु फसल, ऊर्ध्वाधर खेती, संरक्षण कृषि पद्धतियां, जैव विविधीकरण, सटीक खेती, एक खोजी लेंस के रूप में कृषि पारिस्थितिकी

का उपयोग करके वैकल्पिक पशु उत्पादन प्रणाली बनाने जैसी नवीन जलवायु-स्मार्ट कृषि प्रौद्योगिकियों को करना होगा कम और कम भूमि, पानी, उर्वरक, ईंधन, और फसल-संरक्षण रसायनों से अधिक उत्पादन करने के लिए अपनाया जाना चाहिए। ये प्रथाएं मिट्टी की उर्वरता और कीट विनियमन को एक साथ अनुकूलित करने में मदद करती हैं।

निष्कर्ष

पिछले 50 वर्षों के उत्पादकता प्रतिमान ने बढ़ती आबादी को खिलाने के लिए उत्पादकता के अलावा पर्यावरण, स्वास्थ्य, पोषण, उपभोक्ता प्राथमिकताओं और किसान आजीविका पर जोर देने के साथ कृषि अनुसंधान के लिए बहुआयामी दृष्टिकोण के एक नए प्रतिमान का मार्ग प्रशस्त किया। कृषि पारिस्थितिकी, खाद्य उत्पादन और ऑक्सीजन उत्पन्न करने के लिए जैव अपशिष्ट का पुनर्चक्रण, आकाश खेती, एरोपोनिक्स, एक्वापोनिक्स, सिंथेटिक मिट्टी, अंतरिक्ष कृषि, राइजोस्फेरिक प्रक्रियाओं में सुधार, रोग दमनकारी मिट्टी का निर्माण, मिट्टी रहित संस्कृति का उपयोग, जीवमंडल का पुन: कार्बनीकरण जैसी तकनीकों को अपनाना, सतत गहनता, प्रोटीन के नए स्रोतों (जैसे, शैवाल, मशरूम) की पहचान करना, जलवायु परिवर्तन को कम करना (लाल, 2016), भारत को बढ़ती आबादी की पोषण और खाद्य सुरक्षा मांगों को पूरा करने के लिए तैयार कर सकता है।

संदर्भ

1) कृषि जनगणना, 2015-16
2) दीपक के रे, नथानिएल डी मूलर, पॉल सी वेस्ट, जोनाथन ए फाले (2013). 2025 तक वैश्विक फसल उत्पादन को दोगुना करने लिए उपज के रुझान अपर्याप्त है।
3) एफ.ए.ओ. (2020) स्टैटिस्टिकल ईयर बुक, वर्ल्ड फूड एंड एग्रीकल्चर 2020.
4) भा.कृ.अनु.प. (2015). भा.कृ.अनु.प. विजन 2050. https://icar.org.in/files/Vision-2050-ICAR.pdf
5) कृषि विज्ञान मंत्रालय, भारत सरकार डेटाबेस, 2021.
6) एन.एच.बी (2021). राष्ट्रीय बागवानी बोर्ड, 2021.

प्रकृति अपरिमित ज्ञान का भंडार है, पत्ते-पत्ते में शिक्षापूर्ण पाठ हैं, परंतु उससे लाभ उठाने के लिए अनुभव आवश्यक है।

- हरिऔध

कंबाइन हार्वेस्टर का आवश्यक समायोजन और रख रखाव

मुकेश कुमार सिंह

भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केंद्र, करनाल

कंबाइन हार्वेस्टर किसानों के बीच बहुत प्रचलित मशीन है। इसका उपयोग गेहूं, धान, सोयाबीन एवं सरसों की फसलों को काटने में मुख्यतौर से किया जाता है। कंबाइन हार्वेस्टर की कार्य क्षमता 7 से 10 हेक्टेयर प्रति दिन होती है। परंपरागत विधि से कटाई में लगभग 25 मजदूर लगते हैं जो की कंबाइन हार्वेस्टर से कटाई की तुलना में बहुत मंहगा होता है। कंबाइन हार्वेस्टर से कटाई में लगभग 900 रुपए प्रति घंटा का खर्च आता है यह उसकी कार्य क्षमता पर निर्भर करता है। कंबाइन हार्वेस्टर में 2 से 6 मीटर की लंबाई तक का कटर बार बाजार में उपलब्ध है जिसकी कीमत 15 से 25 लाख तक होती है। कंबाइन हार्वेस्टर एक साथ कटाई, गहाई, फटकना एवं अनाज की सफाई का कार्य करता है। कंबाइन हार्वेस्टर की मुख्या इकाई हेडर, थ्रेशर, पृथक्करण इकाई, शोधन एवं अनाज इकट्ठा करने का टैंक होता है। हेडर का काम फसल को काटकर थ्रेशिंग इकाई तक ले जाना है। हेडर के सामने लगी हुई रील फसल को प्लेटफार्म पर धकेलती है जहां कटर बार फसल को काटने का कार्य करता है। फसल की गहाई थ्रेशिंग सिलिंडर और कॉनकेव के बीच होती है। गहाई हो चुकी सामग्री को स्ट्रॉ रैक द्वारा हिला दिया जाता है ताकि अनाज रैक से होकर क्लीनिंग शू के ऊपर गिरे एवं पुआल को पीछे की तरफ से बहार गिरा दिया जाता है। शोधन तंत्र की दो मुख्य इकाई पंखा एवं छलनी होती है। सफाई हो चुके अनाज को कन्वेयर के द्वारा टैंक में पहुंचाया जाता है। सुचारू संचालन के लिए कटाई क्षेत्र एक समान समतल होना चाहिए ताकि ठूंठ की लंबाई भी एक समान हो। चावल के खेत में पानी का नियंत्रण यह सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक है कि खेत फसल की कटाई के समय अपेक्षाकृत सूखे हों। बड़े खेतों में कंबाइन हार्वेस्टर की क्षेत्र दक्षता अधिक होती है।

कंबाइन हार्वेस्टर में समायोजन:

1. मशीन की गति को समायोजित करें: यह देखने के लिए मशीन की गति देखें कि, कंबाइन हार्वेस्टर अनुशंसित चक्र प्रति मिनट चल रहा है या नहीं। निर्माताओं द्वारा मशीन की ऑपरेटर मैनुअल में मूल गति दी जाती है। इसमें बीटर शाफ्ट की गति, रेटेड आर. पी. एम. पर इंजन की गति, ब्लोअर स्पीड, थ्रेशिंग सिलेंडर स्पीड आदि के रूप में दिया जाता है।

2. सिलेंडर कॉनकेव निकासी और सिलेंडर गति को समायोजित करें: ये समायोजन रैक एवं शू पर होने वाले नुकसान को बहुत प्रभावित करते हैं इससे रैक और शू को ओवर-लोड होने से बचाया जा सकता है। जिस प्रकार की फसल को काटा जा रहा है, उसके अनुरूप सिलेंडर की गति में भिन्नता के लिए समायोजन प्रदान किया जाता है। बहुत धीमी सिलेंडर गति या बहुत ज्यादा कॉनकेव निकासी सिलेंडर में बैक फीडिंग का परिणाम हो सकती है। सिलेंडर की गति और कॉनकेव निकासी के बीच एक सामंजस्य बनाए रखा जाना चाहिए। मार्गदर्शन के लिए बुनियादी मशीन समायोजन तालिका 1. में दिए गए हैं।

3. कटर-बार की ऊंचाई समायोजित करें: कटाई की ऊंचाई आवश्यकता से कम नहीं होनी चाहिए अन्यथा बहुत अधिक सामग्री रैक को अधिभारित करेगी और बहुत अधिक अनाज की वाली को खेत में छोड़ दिया जाएगा।

4. रील समायोजन: रील को गति से, ऊंचाई से और आगे या पीछे की ओर समायोजित किया जा सकता है। न्यूनतम कटर बार नुकसान के लिए अनुकूलतम रील इंडेक्स 1.1 से 1.25 होना चाहिए।

रील गति = 1.25 x कंबाइन की गति

तालिका 1. बुनियादी मशीन समायोजन

क्रमांक	फसल का प्रकार	ड्रम की गति (आर. पी. एम्.)	कॉनकेव निकासी (मि.मी.)	छलनी (मि.मी.)	स्ट्रा वॉकर (आर. पी. एम्.)
1.	गेहूं	900-1000	सामने - 15 पीछे - 7	ऊपरी - 16-19 निचली - 6-8	200
2.	धान	600-800	सामने - 17 पीछे - 14	ऊपरी - 16-19 निचली - 5-6	180
3.	सोयाबीन	250-600	सामने - 15 पीछे - 11	ऊपरी - 16-19 निचली - 8 (होल)	200
4.	सरसों	450-700	सामने - 10 पीछे - 5	ऊपरी - 16-19 निचली - 4-5	200

स्रोत: स्वराज 8100 कंबाइन का ऑपरेटर मैनुअल

विभिन्न फसलों की स्थिति के लिए रील ऊंचाई:

(ए) मध्यम और लघु फसलों के लिए: रील को कटर बार के ऊपर लगभग 100 मि.मी. समायोजित करें और पर्याप्त आगे की ओर।

(ब) लंबी फसलों के लिए: रील पीछे की ओर सेट करें ताकि बट्स अनाज के शीर्ष के करीब चले।

(स) नीची फसलों के लिए: रील को नीचे की ओर एवं आगे की स्थिति में समायोजित करें।

5. कटर बार समायोजन

(ए) गार्ड संरेखण

(बी) नाइफ क्लिप

(स) घिसी हुई प्लेट्स

(द) सिकल रजिस्टर

यदि ये भाग ढीले या खराब हो गए हैं, तो नाइफ फसल को काटने के बजाय फसल को चबा कर खा जाएगा। इससे पकी फसलों का अत्यधिक बिखरना भी होगा।

6. आगे की गति को समायोजित करना: थ्रोटल का उपयोग करके कंबाइन की गति को नहीं बदलना चाहिए।

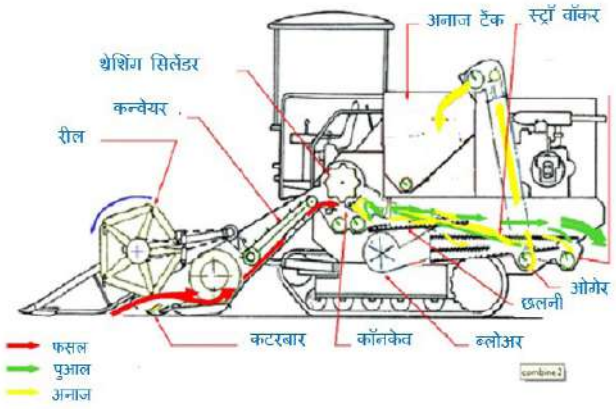

कंबाइन हार्वेस्टर का फसल प्रवाह आरेख

स्व-चालित कंबाइन हार्वेस्टर

इंजन को अनुशंसित गति से ही चलाया जाना चाहिए। गति को गियर शिफ्ट करके और परिवर्तनशील पुली द्वारा समायोजित किया जाना चाहिए। अधिक गति से चलने में रेक के द्वारा होने वाले नुकसान बढ़ते है क्यूंकि इससे कंबाइन की ओवर लोडिंग होती एवं एक समान ऊंचाई से फसल की कटाई नहीं हो पाती।

7. कंबाइन हार्वेस्टर में समस्या निवारण:

समस्या	उपाय
कटरबार	कटरबार पर या उसके आसपास काम करते समय कंबाइन को रोकना नितांत आवश्यक है। यदि नीचे काम करना आवश्यक है, तो दुर्घटना के जोखिम से बचने के लिए कटरबार को ब्लॉक करें।
ख़राब काटने की क्रिया	• नाइफ रजिस्ट्रेशन समायोजित करें। • नाइफ की धार को तेज करें। • फिंगर बार को सीधा करें। • क्षतिग्रस्त नाइफ को बदलें। • कटरबार से बाहरी वस्तुओं को हटा दें।
अचानक नाइफ की रुकावट	• बाहरी वस्तुओं को हटा दें। • असंरेखित कटर बार फिंगर को बदलें। • ड्राइव बेल्ट के तनाव को समायोजित करें।
डिवाइडर बिंदुओं पर गंदगी और अन्य वस्तुओं का जमा होना	• स्लाइड का उपयोग करके ड्राइव को उच्च स्थिति पर सेट करें। यदि आवश्यक हो तो कटर बार स्किड को नवीनीकृत करें। • रील को आगे एडजस्ट करें।
कटर बार बहुत धीरे-धीरे लिफ्ट करता है	• हाइड्रोलिक तेल स्तर की जांच करें और यदि आवश्यक हो तो भरें। • हाइड्रोलिक तेल के दबाव की जांच करें।
कटरबार क्लच छूटता नहीं है	• कटरबार क्लच बेल्ट गाइड के समायोजन की जांच करें। • कटरबार-क्लच के वी-बेल्ट पुली को साफ करें।
असमान फसल फ़ीड	• फसल की स्थिति के अनुरूप मुख्य टेबल आगोर ऊंचाई समायोजित करें • रील टाइन स्थिति और रील गति समायोजित करें। • उचित तनाव के लिए फ़ीड रेक चैन समायोजित करें।
अनियमित गति भिन्नता	• आइडलर पुली और स्प्रिंग-लोडेड सिलेंडर की सेटिंग्स को ठीक करें जो पावर बैंड बेल्ट के तनाव को नियंत्रित करता है। • इंजन की जांच करें (इंजन की समस्याओं को देखें)।

ख़राब थ्रेशिंग	• ड्रम के करीब कॉनकेव को समायोजित करें। • ड्रम की गति बढ़ाएं। • कॉनकेव की मूल सेटिंग को समायोजित करें। • मरम्मत या प्रतिस्थापित थ्रेशिंग उपकरण खराब हो गए हैं। • फसल की स्थिति से मेल खाने के लिए कॉनकेव प्रवेश और कॉनकेव निकास की सापेक्ष स्थिति को समायोजित करें।
दाने टूटना	• ड्रम की गति कम होना। • ड्रम-कॉनकेव निकासी बढ़ाएं। • फ्रॉगमाउथ छलनी को व्यापक रूप से खोलें। • लिफ्ट चैन के तनाव को समायोजित करें।
अत्यधिक बेल्ट घिसाव	इंजन को धीमी गति से गति के साथ ड्राइव को संयोजित करें और फिर इंजन को पूर्ण गति पर लाएं। बेल्ट तनाव समायोजित करें।

8. कंबाइन हार्वेस्टर का रखरखाव: उचित समय पर और उचित तकनीकों के साथ रखरखाव, कार्य की गुणवत्ता और मशीन के जीवन को बढ़ाता है। कटाई का मौसम शुरू होने से पहले कंबाइन हार्वेस्टर की तैयारी निम्नानुसार होनी चाहिए:

1. डीजल टैंक को साफ करें और स्वच्छ डीजल से टैंक को भरें। 2. सभी डीजल फिल्टर तत्वों को बदलें। 3. इंजन तेल और तेल फिल्टर को बदलें। 4. टेपेट क्लीयरेंस की जांच करें और रीसेट करें। 5. इंजेक्टर के इंजेक्शन के दबाव और स्प्रे की जांच करें। 6. एयर क्लीनर तेल बदलें, एयर क्लीनर कटोरा को साफ करें और तेल के अनुशंसित ग्रेड के साथ इसे फिर से भरें। 7. तेल के अनुशंसित ग्रेड के साथ हाइड्रोलिक तेल को बदले या टॉप-अप करें। 8. छलनी और स्ट्रॉ वॉकर बदलें। 9. इसके वोल्टेज, इलेक्ट्रोलाइट स्तर और ग्रेविटी के लिए बैटरी की जांच करें। यदि आवश्यक हो तो इलेक्ट्रोलाइट स्तर बनाए रखने के लिए केवल आसुत जल का इस्तेमाल करें। 10. सभी ग्रीसिंग बिंदुओं को लुब्रिकेट करें। 11. ट्रांसमिशन और हाइड्रोलिक सिस्टम में तेल की जांच करें। 12. उचित तनाव के लिए फ्लैट बेल्ट, वी-बेल्ट और रोलर चेन की जांच करें। 13. रेडिएटर में कूलेंट या जल स्तर की जांच करें। ताजे और साफ पानी का ही प्रयोग करें। 14. टायरों के दबाव की जांच करें। 15. अपने उचित टार्क और लॉकिंग के लिए सभी नट और बोल्ट की जांच करें। 16. फीडर बॉटम और फीडर एंगल के बीच क्लीयरेंस चेक करें। 17. कटर बार पैन और कन्वेयर वर्म के बीच क्लीयरेंस की जांच करें। 18. आगे और पीछे की तरफ थ्रेशिंग ड्रम और कॉनकेव के बीच निकासी की जांच करें। 19. उनके समुचित कार्य के लिए सभी विद्युत घटकों की जांच करें। 20. इंजन शुरू करें और जांचें; (ए) डीजल के रिसाव, हाइड्रोलिक तेल एवं इंजन तेल कनेक्शन से रिसाव। (ब) इंजन ऑयल प्रेशर एवं बैटरी चार्जिंग। 21. सभी बॉल, टेपर रोलर, थ्रस्ट और नीडल रोलर बेयरिंग की जांच करें। 22. टूटे हुए लिंक के लिए चेन की जांच करें। 23. प्रतिस्थापन के लिए वेल्डिंग जोड़ों और टूटे हुए घटकों की जांच करें। किसी भी दरार के लिए शाफ्ट की जांच करें।

प्राकृतिक खेती : उत्पादन की न्यूनतम लागत द्वारा किसानों की शुद्ध आय बढ़ाने में सहायक

नरेन्द्र मोहन सिंह, राजू आर., नित्यश्री एम. एल. एवं अल्का सिंह

कृषि अर्थशास्त्र संभाग
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110 012

परिचय

प्राकृतिक रूप से खेती के तरीके को प्राचीन काल से ही बेहतर माना जाता रहा है। प्राकृतिक खेती भारतीय प्राचीन कृषि पद्धतियों पर आधारित है। उत्पादन की न्यूनतम लागत के कारण यह पद्धति जीरो बजट नेचुरल फार्मिंग (जे.बी.एन.फ) के नाम से भी जानी जाती है। इसमें किसान के घर में उपलब्ध संसाधनों का उपयोग खेती करने में किया जाता है। इसमें किसान के पास एक देशी गौवंश का होना जरूरी है। एक देशी गाय से किसान 30 एकड़ तक प्राकृतिक खेती करने में सक्षम होता है। इसे रसायन मुक्त पशुधन आधारित कृषि के रूप में भी परिभाषित किया जा सकता है। इस पद्धति में खेतों की जुताई, मिट्टी को पलटना व निराई गुड़ाई नहीं की जाती व इसके स्थान पर मृदा की उर्वरा शक्ति और अच्छे पोषण में योगदान देनेवाले लाभकारी मिट्टी के जीवों, केंचुओं व जीवाणुओं को पुनर्जीवित करने पर ध्यान केंद्रित किया जाता है। इसमें वर्षा के जल को प्राकृतिक रूप से संचित करने पर महत्व दिया जाता है। प्राकृतिक खेती हमें सिंथेटिक केमिकल उर्वरकों व कीटनाशकों के प्रयोग से बचाती है व केमिकल उर्वरकों के स्थान पर गोबर की खाद, फसल अवशेषों से खाद, जीवाणु खाद का प्रयोग किया जाता है व रासायनिक कीटनाशकों के विकल्प में जैविक कीटनाशकों जैसे अग्निअस्त्र, ब्रह्मास्त्र और नीमअस्त्र का प्रयोग किया जाता है। इस पद्धति में स्वस्थ पौधों से स्वयं बीज तैयार करने पर महत्व दिया जाता है। प्राकृतिक खेती जैव विविधता के अधिकतम कार्यात्मक प्रयोग द्वारा फसलों, पेड़ों और पशुधन को एकीकृत करती है।

यह पद्धति मिट्टी की उर्वरा शक्ति और पर्यावरणीय स्वास्थ्य को बढ़ाने तथा ग्रीन हाउस उत्सर्जन को कम करने या निम्न करने जैसे कई अन्य लाभ प्रदान करते हुए किसानों की शुद्ध आय बढ़ाने में सहायक है।

किसानों की शुद्ध आय में वृद्धि करना:

इसमें इंटर-क्रापिंग की विधि द्वारा शुद्ध आय में वृद्धि करना व उत्पादन लागत में कमी द्वारा खेती को व्यावहारिक और अनुकूल बनाना।

उत्पादन लागत में भारी कटौती करना:

इसमें जैविक आदानों को तैयार करने के लिए किसानों के खेत, प्राकृतिक स्रोत, पशुधन और घरेलू संसाधनों का उपयोग कर उत्पादन लागत को कम करना है।

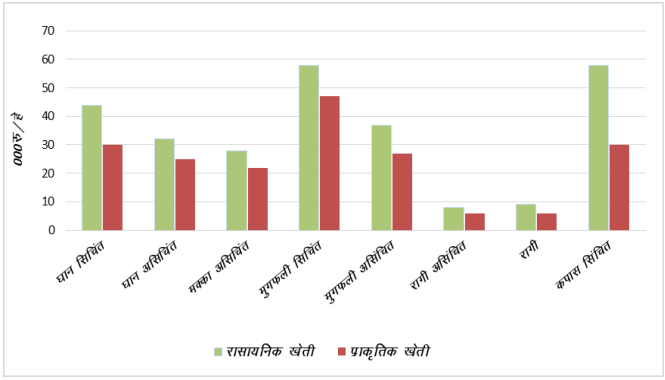

चित्र 1 प्राकृतिक खेती व रासायनिक खेती के अंतर्गत इनपुट लागत (000 रुपए/हेक्टेयर) खरीफ फसल

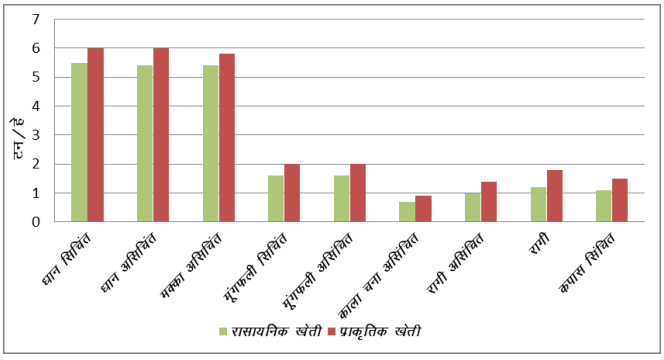

चित्र 2: प्राकृतिक खेती व रासायनिक खेती के अंतर्गत प्राप्त कुल उपज (टन/हेक्टेयर) खरीफ फसल

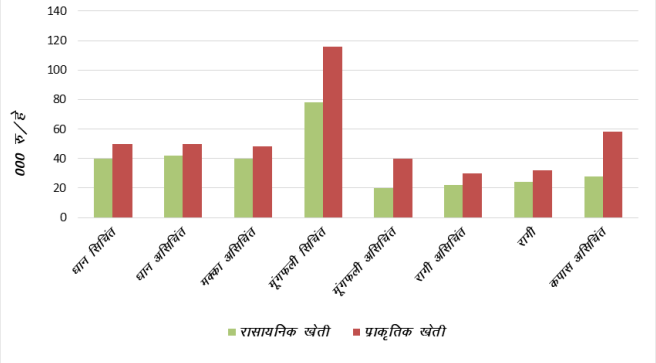

चित्र 3 प्राकृतिक खेती व रासायनिक खेती के अंतर्गत प्राप्त शुद्ध आय (000 रुपए/हेक्टेयर) खरीफ फसल

महत्व

उत्पादन की न्यूनतम लागतः

प्राकृतिक खेती में रासायनिक खादों, रासायनिक कीटनाशकों, जुताई व निराई-गुड़ाई की लागत, बीज खरीदने का खर्च काफी कम हो जाता है। सिंचाई व बिजली की आवश्यकता कम हो जाती है। प्राकृतिक स्रोत, पशुधन और घरेलू संसाधनों का उपयोग कर कुल उत्पादन लागत न्यूनतम हो जाती है।

मृदा उर्वरा शक्ति को पुनर्जीवित करनाः

प्राकृतिक खेती में बंजर भूमि को भी एक या दो वर्षा में कृषि योग्य बनाने की क्षमता है। जीवामृत व आच्छादन विधियों का उपयोग, प्राकृतिक रूप से मृदा के कार्बन में वृद्धि कर मृदा को आश्चर्यजनक रूप से उपजाऊ बना देता है।

फसल उत्पाद का भाव अधिक व लागत कम:

प्राकृतिक खेती से प्राप्त फसल उत्पाद केमिकल फ्री होने के कारण अधिक स्वास्थ्यवर्धक, स्वादिष्ट व उच्च कोटि के होते हैं जिसका बाजार भाव 25% से 30% अधिक प्राप्त होता है व इसमें उत्पादन की लागत न्यूनतम होती है।

रोजगार सृजन व ग्रामीण विकास की संभावनाएं

यह पद्धति नए उद्यमों, मूल्य वर्धन, स्थानीय क्षेत्रों में विपणन आदि में रोजगार के सृजन में सहायक है। इससे ग्रामीण युवाओं का पलायन रूकेगा।

पशुधन स्थिरता:

कृषि प्रणाली में पशुधन का एकीकरण प्राकृतिक खेती में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है और परिस्थितिकी तंत्र के पुनर्चक्रण में मदद करता है। प्राकृतिक खेती का मूल स्तंभ पशुधन ही है। जीवामृत और बीजामृत जैसे इको-फ्रेंडली बायो इनपुट गाय के गोबर व गोमूत्र से ही तैयार किए जाते हैं।

कम सिंचित क्षेत्रों में अधिक उपयोगी:

इसमें गोबर की खाद, फसल अवशेषों से खाद, जीवाणु खाद का उपयोग व आच्छादन की विधि द्वारा जल की खपत कम होने के कारण, कम सिंचित क्षेत्रों में अधिक उपयोगी पाई गई है। इस विधि में सिंचाई व बिजली की आवश्यकता न्यूनतम हो जाती है।

स्वस्थ फसल व लचीलापनः

प्राकृतिक खेती पद्धति में मृदा की संरचना अच्छी हो जाने से पौधे स्वस्थ होकर सूखे, चक्रवात व बाढ़ जैसी परिस्थितियों की गंभीरता कम कर देते हैं व मौसम की चरम सीमाओं के खिलाफ फसलों को लचीलापन प्रदान करते हैं, इस प्रकार प्राकृतिक खेती किसानों को आर्थिक सबलीकरण प्रदान करती है।

प्राकृतिक खेती के मूल स्तंभ

1. बीजामृत

यह प्रथम चरण होता है जिसमें देशीगायों के गोबर, गोमूत्र, चूने व खेत की मिट्टी से बीज शोधन (सीड ट्रीटमेंट) का कार्य किया जाता है। इसमें गाय का गोबर 5 किलोग्राम, गोमूत्र 5 लीटर, चूना 50 ग्राम, पानी की मात्रा 20 लीटर, एक मुट्ठी खेत की मिट्टी, इस मिश्रण को 24 घंटे तक रखने पर बीजामृत तैयार हो जाता है।

2. जीवामृत

इस विधि में गाय के गोबर, गोमूत्र व अन्य जैविक पदार्थों का एक घोल तैयार कर किण्वन (फर्मेंटेशन) किया

जाता है। इसे तैयार करने के लिए देशी गाय का गोबर 10 किलो, गोमूत्र 10 लीटर, गुड़ या फलो का गूदा (पल्प) 1 से 2 किलो, और मूंग या अरहर या चने का आटा 1 से 2 किलो, जीव युक्त मिट्टी एक मुट्ठी, पानी 200 लीटर इस मिश्रण को मिलाकर 2 से 3 दिनों तक किण्वन (फर्मेंटेशन) छांव में रखकर तैयार किया जाता है।

3. आच्छादन

इसमें जुताई के स्थान पर फसल के अवशेषों को भूमि पर आच्छादित कर दिया जाता है। इसमें सूक्ष्म जीवाणु और केंचुए भूमि में अंदर बाहर चक्कर लगाकर भूमि को बलवान, उर्वरा एवं समृद्ध बनाने का काम करते रहते हैं। आच्छादन से मृदा की नमी और उष्णता वातावरण में न जाकर मृदा में ही बची रहती है, जिस कारण सिंचाई की कम मात्रा की आवश्यकता पड़ती है।

4. वाफसा

इसमें सिंचाई के स्थान पर मृदा में नमी एवं वायु की उपस्थिति को महत्व दिया जाता है। जिस कारण सिंचाई की मात्रा में 90% तक की कमी हो जाती है। इस विधि में भूमि की उपजाऊ शक्ति बढ़ाने के लिए बीजामृत से बीज संस्कार व बीज या पौधे लगाने के बाद जब हम फसलों को सिंचाई के पानी के साथ हर महीने में 1 या 2 बार जीवामृत देते हैं तो मृदा शक्ति में वृद्धि होती है व आच्छादन रूपी विधि द्वारा भूमि के अंदर वाफसा का निर्माण करते है। इससे पौधे स्वस्थ होकर वृद्धि को प्राप्त करते हैं।

अन्य मुख्य सिद्धांत

5. अंतर फसल

अंतर फसल विधि व साथ साथ मुर्गीपालन व गोपालन को अपनाकर किसान अपनी शुद्ध आय में वृद्धि कर निरंतर आमदनी प्राप्त करता रहता है व यह इंटर-क्रॉपिंग विधि खरपतवार नियंत्रण कीट व रोग नियंत्रण व मृदा स्वास्थ्य के लिए भी महत्वपूर्ण व उपयोगी सिद्ध हुई है।

प्राकृतिक खेती पद्धति में कीट नियंत्रण

इस पद्धति में रासायनिक कीटनाशकों के विकल्प में जैविक कीटनाशकों जैसे अग्निअस्त्र, ब्रह्मास्त्र और नीमअस्त्र का प्रयोग किया जाता है। इसे किसान के खेत में ही उपलब्ध संसाधनों से जैसे गाय का गोबर, गोमूत्र, हरी मिर्च, नीम का गूदा (पल्प) व नीम की पत्तियों का उपयोग कर तैयार किया जाता है। यह जैविक कीटनाशक लीफरोलर, स्टाम बोरर, फ्रूट बोरर, पोडबोरर, सकिंग पेस्ट और मिली बग जैसे सभी तरह के नुकसानदायक कीटों को नियंत्रण करने मे उपयोगी सिद्ध हुआ है।

निष्कर्ष

भारत सरकार किसानों की आय को दोगुनी करने के उद्देश्य से प्राकृतिक खेती को एक विकल्प के रूप में प्रोत्साहित कर रही है। कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय व नीति आयोग इस पद्धति को प्रोत्साहन प्रदान करने की दिशा में कार्य कर रहे हैं। प्राकृतिक खेती सहित पारंपरिक स्वदेशी पद्धतियो को प्रोत्साहित करने के लिए भारत सरकार द्वारा भारतीय प्राकृतिक कृषि पद्धति योजना (बी.पी.के.पी.) 2020-21 की शुरूआत की गई। इसके अंतर्गत, कलस्टर निर्माण, क्षमता निर्माण और प्रशिक्षित कर्मियों द्वारा प्रमाणीकरण और अवशेष विश्लेषण के लिए प्रति हेक्टेयर 12200.00 रूपयों की वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है। अब तक, प्राकृतिक खेती के तहत देश भर के 8 राज्यों में 4.09 लाख हेक्टेयर क्षेत्र को कवर किया गया है। जो देश भर के कुल कृषि उत्पादन क्षेत्र का सिर्फ दो प्रतिशत है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा गठित की गई कमेटी ने कई शोध पत्रों के अध्ययन के पश्चात इस पद्धति से संबंधित अपनी रिपोर्ट मे यह सलाह दी गई है कि प्राकृतिक खेती को इंटर-क्रॉपिंग विधि, केंचुआ खाद व नियमित जैविक खादों के प्रयोगों के साथ कम सिंचित क्षेत्रों में अधिक प्रभावशाली बनाया जा सकता है व साथ साथ ये भी आगाह किया है कि जेविक खादों का प्रयोग कम या बिल्कुल न करने से दो या तीन वर्षो के पश्चात उत्पादन घट सकता है। इसके लिए आगे अध्ययन करने के लिए

कम सिंचित (रेनफेड) क्षेत्रों में भा.कृ.अनु.प. द्वारा रिसर्च ट्रायल प्रोजेक्ट लगाने का निर्णय लिया गया है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद-भा.कृ.अनु.सं. द्वारा इस पद्धति को प्रोत्साहन प्रदान करने व इसके प्रसार के लिए प्राकृतिक खेती के विषय को सभी कृषि विश्वविद्यालय के स्नातक और स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम में शामिल करने का निर्णय लिया गया है व इसके साथ अलग से एक वर्षीय सर्टिफिकेट कोर्स व दो वर्षीय डिप्लोमा कोर्स का प्रारूप तैयार करने का भी फैसला लिया गया है ताकि ज्यादा संख्या में युवाओं व किसान भाईयों को प्रशिक्षित किया जा सके। किसान भाई आगे भविष्य में प्राकृतिक खेती से संबंधित जानकारी के लिए (उद्योग उपकर्म योजना, एन. इ. पी 2020) भा.कृ.अनु.प.-भा.कृ.अनु.सं., नई दिल्ली के साथ जुड़कर मार्गदर्शन प्राप्त कर सकते हैं।

कष्ट ही तो वह प्रेरक शक्ति है जो मनुष्य को कसौटी पर परखती है और आगे बढ़ाती है।

- सावरकर

भारतीय भाषाएं नदियां हैं और हिंदी महानदी। हिंदी देश के सबसे बड़े हिस्से में बोली जाती है। हमें इसे राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार करनी ही चाहिए। मैं दावे के साथ कह सकता हूं कि हिंदी बिना हमारा काम चल नहीं सकता।

- रबिन्द्रनाथ टैगौर

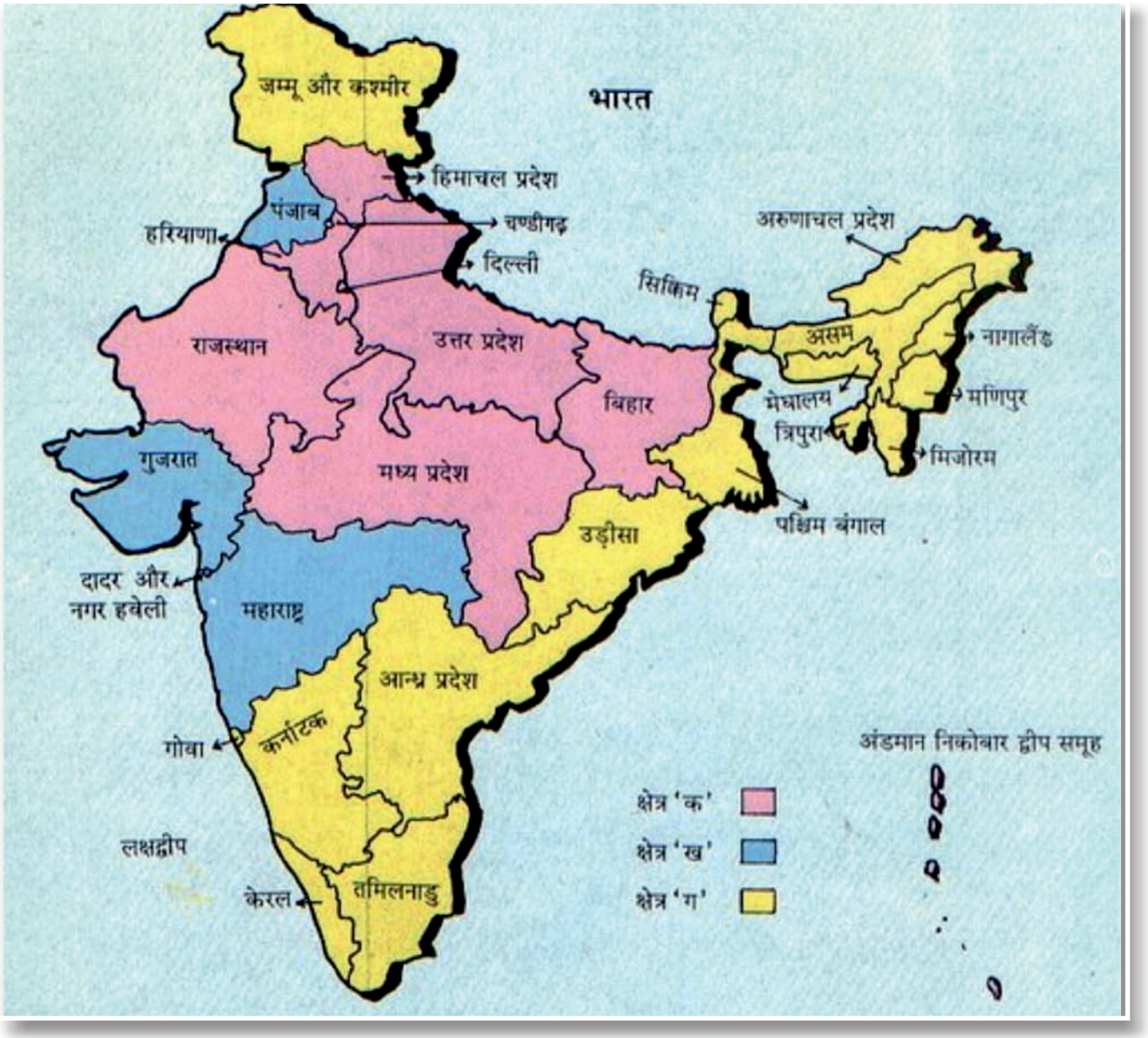
भारत
जम्मू और कश्मीर
हिमाचल प्रदेश
पंजाब
चण्डीगढ़
हरियाणा
दिल्ली
सिक्किम
अरुणाचल प्रदेश
राजस्थान
उत्तर प्रदेश
असम
नागालैंड
बिहार
मेघालय
मणिपुर
त्रिपुरा
गुजरात
मध्य प्रदेश
मिजोरम
पश्चिम बंगाल
उड़ीसा
दादर और
नगर हवेली
महाराष्ट्र
आन्ध्र प्रदेश
गोवा
कर्नाटक
अंडमान निकोबार द्वीप समूह
क्षेत्र 'क'
क्षेत्र 'ख'
क्षेत्र 'ग'
लक्षद्वीप
केरल
तमिलनाडु

राजभाषा खंड...

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान
राजभाषा प्रगति रिपोर्ट (2021-22)

रिपोर्टाधीन अवधि के दौरान हिंदी की प्रगति के लिए संस्थान में अनेक गतिविधियां चलाई गईं, जिनमें से कुछ इस प्रकार से हैं-

- संस्थान के सभी वर्गों के अधिकारियों/कर्मचारियों के लिए विभिन्न विषयों पर राजभाषा संबंधी कार्यशालाएं आयोजित की गईं जिनमें बहुत बड़ी संख्या में अधिकारी/कर्मचारी लाभान्वित हुए।
- संस्थान में राजभाषा के प्रगामी प्रयोग की स्थिति की मॉनीटरिंग के लिए गठित राजभाषा निरीक्षण समिति ने इस वर्ष भी संस्थान के संभागों एवं निदेशक कार्यालय के अनुभागों का निरीक्षण किया तथा संबंधितों को निरीक्षण रिपोर्टें भेजी गई। हाल ही में संस्थान के अधीनस्थ क्षेत्रीय केंद्र, इंदौर का दिनांक 02.03.2022 एवं क्षेत्रीय केंद्र, कालिम्पोंग का दिनांक 26.10.2021 को माननीय संसदीय राजभाषा की दूसरी उपसमिति द्वारा हिंदी के प्रगामी प्रयोग की प्रगति का निरीक्षण किया गया, जिसमें समिति द्वारा केंद्र में किए जा रहे राजभाषा संबंधी कार्यों की सराहना की गई।
- संस्थान में राजभाषा कार्यान्वयन को वांछित गति प्रदान करने और अधिकारियों/कर्मचारियों में हिंदी में कार्य करने के प्रति जागरुकता का सृजन करने के लिए प्रतिवर्ष सितंबर माह को हिंदी चेतना मास के रुप में आयोजित किया जाता है। इस वर्ष भी दिनांक 14 सितंबर से 13 अक्तूबर, 2021 तक हिंदी चेतना मास का सफलतापूर्वक आयोजन ऑफलाइन/ऑनलाइन के माध्यम से किया गया। जिनमें सात प्रतियोगिताएं आयोजित की गई: काव्य पाठ, आशुभाषण, वाद-विवाद, टिप्पण एवं मसौदा लेखन, प्रश्नोत्तरी, सामान्य ज्ञान प्रतियोगिता (कुशल सहायी कर्मचारी वर्ग के लिए) एवं हिंदी टंकण प्रतियोगिता। उक्त प्रतियोगिताओं में सभी वर्गों के अधिकारियों/कर्मचारियों ने बढ़-चढ़कर भाग लिया।
- संस्थान का प्रकाशन कार्य सुचारु रूप से चल रहा है। जिसमें संस्थान की वार्षिक रिपोर्ट भी द्विभाषी रुप में नियमित रूप से प्रकाशित की जाती है। वर्ष 2019-20 से संस्थान की गृह-पत्रिका पूसा सुरभि का प्रकाशन वित्तीय वर्ष में एक अंक के स्थान पर दो अंकों के रूप में किया जाना प्रारंभ किया गया है। साथ ही संस्थान द्वारा पूसा समाचार (तिमाही), प्रसार दूत (द्विमासिक) तथा सामयिकी (मासिक) जैसे नियमित प्रकाशनों के अलावा तदर्थ प्रकाशन, पैम्फेलेट तथा प्रसार बुलेटिन भी जारी किए जाते हैं।
- संस्थान के जिन अधिकारियों और कर्मचारियों को हिंदी भाषा में प्रवीणता प्राप्त है उन्हें निदेशक महोदय द्वारा राजभाषा नियम 8(4) के तहत अपना शतप्रतिशत प्रशासनिक काम हिंदी में करने के लिए आदेश जारी किए गए हैं। इसके अलावा निदेशक कार्यालय के सभी अनुभागों को अपना शतप्रतिशत सरकारी काम हिंदी में करने के लिए विनिर्दिष्ट किया गया है। जिसके परिणास्वरूप वर्ष में संस्थान के राजभाषा कार्यान्वयन में उल्लेखनीय प्रगति हुई है।
- संस्थान को मानद विश्वविद्यालय का दर्जा प्राप्त है। यहां एमएससी और पीएचडी की उपाधियां प्रदान की जाती है। संस्थान के सभी पीएचडी छात्रों को अपनी थीमिस का सारांश हिंदी में प्रस्तुत करना अनिवार्य है। संस्थान द्वारा

आयोजित की जाने वाली पीएचडी प्रवेश परीक्षा में अभ्यर्थियों को द्विभाषी माध्यम उपलब्ध कराया जा रहा है।

- प्रत्येक वर्ष की भांति इस वर्ष भी संस्थान के मेला ग्राउंड में 'कृषि उन्नति मेला' आयोजित किया गया। जिसका उद्घाटन केंद्रीय कृषि एवं किसान कल्याण मंत्री श्री नरेंद्र सिंह तोमर जी के कर कमलों द्वारा हुआ। दिनांक 09 से 11 मार्च, 2022 तक आयोजित कृषि मेले का मुख्य विषय ''तकनीकी ज्ञान से आत्मनिर्भर किसान'' रहा। जिसमें देश भर से लगभग 40000 किसानों ने भाग लिया। मेले के प्रमुख आकर्षण रहे, स्मार्ट/ डिजिटल कृषि, एग्री स्टार्टअप एवं किसान उत्पादक संगठन (एफपीओ), जैविक तथा प्राकृतिक खेती, संरक्षित खेती/ हाइड्रोपोनिक/ एरोपानिक/वर्टिकल खेती, कृषि उत्पादकों के निर्यात, प्रोत्साहन सलाह केंद्र, साथ ही मेले में संस्थान द्वारा विकसित नवीन किस्मों की जानकारी भी दी गई।
- संस्थान में हिंदी में पुस्तक लेखन को बढ़ावा देने के लिए सर्वश्रेष्ठ पुस्तक लेखन के लिए 'डॉ. रामनाथ सिंह पुरस्कार' द्विवार्षिक प्रदान किया जाता है। इस पुरस्कार योजना में 10,000/- रुपए नकद प्रदान किए जाते हैं। इसी प्रकार विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में हिंदी में वैज्ञानिक लेख लिखने संबंधी एक पुरस्कार योजना चल रही है। जिसमें 7000/-, 5000/- तथा 3000/- रुपए नकद पुरस्कार स्वरूप दिए जाते हैं। इसी क्रम में हिंदी में व्याख्यान देने को बढ़ावा देने के लिए इस संस्थान के प्रवक्ताओं द्वारा हिंदी में सर्वश्रेष्ठ वैज्ञानिक/तकनीकी व्याख्यान देने के लिए पूसा विशिष्ट हिंदी प्रवक्ता पुरस्कार के नाम से एक नकद पुरस्कार योजना चलाई जा रही है। इस योजना में प्रत्येक वर्ष पुरस्कार विजेता को 10,000/- रुपए का नकद पुरस्कार प्रदान किया जाता है। इसके साथ ही हिंदी में प्रशासनिक कार्य को बढ़ावा देने के लिए राजभाषा विभाग की वार्षिक प्रोत्साहन नकद पुरस्कार योजना के तहत कुल दस कर्मचारियों को पुरस्कार प्रदान किए जाने का प्रावधान है जिसमें 5000/- रु. के दो प्रथम, 3000/- रु. के तीन द्वितीय तथा 2000/- रु. के पांच तृतीय पुरस्कार दिए जाते हैं।
- संस्थान में हिंदी पुस्तकों की खरीद के लिए एक समिति बनाई गई है जो हिंदी पुस्तकालय के लिए पुस्तकें खरीदने की सिफारिश करती है। पुस्तकालय में प्रत्येक वर्ष राजभाषा विभाग द्वारा निर्धारित लक्ष्य के अनुसार पुस्तकें खरीदने का प्रयास किया जा रहा है। संस्थान के पुस्तकालय में उपलब्ध सभी हिंदी प्रकाशनों की सूची संस्थान की वेबसाइट पर उपलब्ध कराई गई है।
- संस्थान को प्राप्त होने वाले सभी हिंदी पत्रों के उत्तर अनिवार्यत: हिंदी में दिए जा रहे हैं, 'क' और 'ख' क्षेत्रों में स्थित सरकारी कार्यालयों के साथ अब अधिकाधिक पत्र व्यवहार हिंदी में किया जा रहा है। इन दोनों क्षेत्रों में स्थित कार्यालयों से प्राप्त अधिकांश अंग्रेजी पत्रों के उत्तर भी हिंदी में दिए जा रहे हैं। साथ ही मूल पत्राचार अधिकाधिक हिंदी में करने को बढ़ावा देने के लिए संस्थान के सभी संभागों/अनुभागों व केंद्रों के बीच हिंदी व्यवहार प्रतियोगिता चलाई जा रही है। जिसमें वर्षभर सबसे अधिक पत्राचार हिंदी में करने वाले संभाग/केंद्र को पुरस्कार स्वरूप शील्ड प्रदान की जाती है।
- संस्थान में फाइलों पर हिंदी में टिप्पणियां लिखने में भी बहुत प्रगति हुई, सेवा-पुस्तिकाओं व सेवा संबंधी अन्य अभिलेखों में अब लगभग सभी प्रविष्टियां हिंदी में की जा रही हैं और राजभाषा अधिनियम की धारा 3(3) का अनुपालन किया जा रहा है। संस्थान में हिंदी को दैनिक प्रशासनिक कार्यों में बढ़ावा देने के उद्देश्य से फाइल कवर पर ही हिंदी-अंग्रेजी की प्रासंगिक टिप्पणियां प्रकाशित की गई हैं।
- संस्थान के अधिकारियों/कर्मचारियों के हिंदी शब्द ज्ञान को बढ़ाने के उद्देश्य से निदेशक कार्यालय व एनेक्सी भवन के प्रवेश द्वारों पर डिजिटल

बोर्ड स्थापित किए गए हैं। जिसमें प्रतिदिन हिंदी का एक शब्द उसके अंग्रेजी समानार्थ व एक सुविचार के साथ प्रदर्शित होता है। इसके अतिरिक्त संस्थान के सभी संभागों/केंद्रों/इकाइयों के प्रवेश द्वारों पर लगे सूचना पट्टों पर 'आज का शब्द' शीर्षक के अंतर्गत भी हिंदी का एक शब्द उसके अंग्रेजी समानार्थ के साथ लिखा जाता है, ताकि आते-जाते कर्मचारियों की नज़र इन पट्टों पर पड़े और उनके शब्द ज्ञान में वृद्धि हो सके। साथ ही निदेशालय में महापुरुषों के कथन लगाए है।

- राजभाषा विभाग के आदेशानुसार संस्थान के सभी कंप्यूटरों में हिंदी में यूनिकोड में काम करने की सुविधा उपलब्ध है।
- संस्थान के समस्त संभागों/अनुभागों/क्षेत्रीय केंद्रों में राजभाषा कार्यान्वयन उपसमिति गठित है जिनकी नियमित रूप से प्रत्येक तिमाही में बैठकें आयोजित की जा रही हैं।
- संस्थान, राजभाषा विभाग द्वारा गठित की गई नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (उत्तरी दिल्ली) का भी सदस्य है। उक्त समिति की बैठकों में नगर में स्थित केंद्रीय सरकार के सदस्य कार्यालयों/उपक्रमों आदि में राजभाषा हिंदी में निष्पादित कामकाज/गतिविधियों की समीक्षा की जाती है। राजभाषा विभाग के आदेशानुसार इस समिति की बैठकों में संस्थान की ओर से निदेशक और संयुक्त निदेशक (अनुसंधान) द्वारा सक्रिय रूप से भाग लिया जाता है।
- संस्थान के समस्त संभागों/अनुभागों/क्षेत्रीय केंद्रों में हिंदी की प्रगति को वांछित गति प्रदान करने, राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक में लिए गए निर्णयों को क्रियान्वित करने तथा संभाग एवं हिंदी अनुभाग के बीच संपर्क-सूत्र के रूप में कार्य करने के उद्देश्य से प्रत्येक संभाग/केंद्र में राजभाषा नोडल अधिकारी नामित किए गए हैं। नोडल अधिकारियों के लिए सर्वश्रेष्ठ राजभाषा नोडल अधिकारी पुरस्कार योजना भी आरंभ की गई है जिसके अंतर्गत 5000/-रु. की नकद राशि पुरस्कार स्वरूप प्रदान की जाती है।

उपर्युक्त सभी कार्य भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान की राजभाषा कार्यान्वयन समिति की देखरेख में किए जाते हैं जो प्रत्येक तीन माह में बैठक आयोजित करके संस्थान के राजभाषा कार्यान्वयन में हुई प्रगति की समीक्षा करती है व हिंदी की उत्तरोतर प्रगति के लिए निर्णय लेती है। इन बैठकों में प्रत्येक संभाग/अनुभाग/इकाई व क्षेत्रीय केंद्रों द्वारा हिंदी प्रगति के संबंध में किए गए कार्यों की रिपोर्ट प्रस्तुत की जाती है।

हिंदी चेतना मास

संस्थान में राजभाषा कार्यान्वयन के प्रति नवीन चेतना और जागृति उत्पन्न करने तथा अधिकारियों/कर्मचारियों को हिंदी में कार्य करने के लिए प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से संस्थान मुख्यालय में प्रतिवर्ष की भांति रिपोर्टाधीन वर्ष सितंबर से अक्तूबर मास को हिंदी चेतना मास के रूप में मनाया गया। कोविड-19 संक्रमण के कारण गृह मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा निर्धारित किए गए दिशा-निर्देशों के अनुसार गत वर्ष की भांति ही कुछ प्रतियोगिताएं ऑनलाइन ढ़ंग से आयोजित की गई, जैसे काव्य पाठ प्रतियोगिता, आशुभाषण प्रतियोगिता एवं वाद-विवाद प्रतियोगिता। साथ ही सामाजिक दूरी का पालन करते हुए अन्य प्रतियोगिताएं जैसे- टिप्पण एवं मसौदा लेखन, प्रश्नोत्तरी, सामान्य ज्ञान प्रतियोगिता (कुशल सहायी कर्मचारी वर्ग के लिए) एवं हिंदी टंकण प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। इस वर्ष आयोजित की गई वाद-विवाद प्रतियोगिता का विषय था- "शिक्षा" रोजगार का साधन मात्र है-पत्र/विपक्ष।

उक्त सभी प्रतियोगिताओं में संस्थान मुख्यालय स्थित निदेशक कार्यालय एवं विभिन्न संभागों/इकाइयों के सभी वर्गों के अधिकारियों/कर्मचारियों ने बढ़-चढ़कर भाग लिया।

संस्थान मुख्यालय के साथ-साथ संस्थान के दिल्ली स्थित अनेक संभागों में हिंदी में जागरुकता का सृजन करने और हिंदीमय परिवेश बनाने के उद्देश्य से अपने स्तर पर अनेक प्रतियोगिताओं का सफलतापूर्वक आयोजन

किया गया।

हिंदी कार्यशालाएं (मुख्यालय)

संस्थान के विभिन्न वर्गों के अधिकारियों व कर्मचारियों को अपने कार्यों में राजभाषा हिंदी का अधिकाधिक प्रयोग करने के प्रति प्रेरित करने के लिए वर्ष 2021-22 के दौरान संस्थान मुख्यालय में दो कार्यशालाओं का आयोजन किया गया।

- संस्थान के वैज्ञानिक/तकनीकी/प्रशासनिक वर्ग के अधिकारियों/कर्मचारियों के लिए दिनांक 30 दिसंबर, 2021 को ''सरकारी कामकाज हिंदी में करने में आने वाली बाधाएं एवं उनका समाधान'' विषय पर संस्थान के कैटेट संभाग में एक दिवसीय हिंदी कार्यशाला का आयोजिन किया गया। जिसमें प्रतिभागियों को सरकारी कार्यालयों में हिंदी के प्रयोग को निरंतर बढ़ावा देने एवं उसमें आने वाली परेशानियों को दूर करने संबंधी जानकारी प्रदान की गई।

दिनांक 30 दिसंबर, 2021 को आयोजित कार्यशाला में भाग लेते

प्रतिभागी।

- संस्थान के वैज्ञानिक/तकनीकी/प्रशासनिक वर्ग के अधिकारियों/कर्मचारियों के लिए दिनांक 07 मार्च, 2022 को संस्थान में स्थित कृषि रसायन संभाग में ''केंद्रीय सरकार के कार्यालयों में हिंदी का प्रयोग: व्यावहारिक पहलू एवं कंप्यूटर में हिंदी में कैसे कार्य करें और उसमें आने वाली समस्याओं का समाधान'' विषय पर एक दिवसीय हिंदी कार्यशाला का आयोजन किया गया। जिसमें प्रतिभागियों को राजभाषा नीति नियमों व कंप्यूटर में हिंदी में कैसे कार्य करें, साथ ही हिंदी के विभिन्न फॉण्ट्स एवं यूनिकोड़ संबंधी जानकारी प्रदान की गई।

कार्यशाला में व्याख्यान देते हुए वक्ता

संस्थान मुख्यालय के साथ-साथ संस्थान के विभिन्न संभागों तथा क्षेत्रीय केंद्रों में भी हिंदी में जागरुकता का सृजन करने और हिंदीमय परिवेश बनाने के उद्देश्य से अपने स्तर पर अनेक कार्यक्रम व प्रत्येक तिमाही में कार्यशालाओं का निरंतर आयोजन किया गया। इसी क्रम में-

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केंद्र, पुणे

- केंद्र में दिनांक 07 दिसंबर, 2021 को एक हिंदी कार्यशाला का आयोजन किया गया। कार्यशाला का आयोजन कोविड-19 संक्रमण व भारत सरकार द्वारा सामाजिक दूरी बनाए रखने हेतु जारी दिशा-निर्देशों के साथ ऑफलाइन माध्यम से किया गया। इस अवसर पर डॉ. (श्रीमती) स्वाति चड्ढा, राजभाषा अधिकारी, राष्ट्रीय रासायनिक प्रयोगशाला, पुणे ने "नारी सशक्तिकरण... चुनौतियां तथा संभावनाएं" विषय पर व्याख्यान दिया। कार्यशाला में 14 अधिकारियों/कर्मचारियों

ने भाग लिया। कार्यक्रम की अध्यक्षता डॉ. राज वर्मा, अध्यक्ष (प्रभारी) ने की। सभी अधिकारियों/कर्मचारियों ने कार्यशाला में उत्साह से भाग लिया। कार्यशाला का समापन सभी को धन्यवाद प्रस्ताव से हुआ।

क्षेत्रीय केंद्र, पुणे में कार्यशाला का आयोजन (07/12/2021)

- केंद्र में दिनांक 11 मार्च, 2022 को एक हिंदी कार्यशाला का आयोजन किया गया। जिसमें "नारी का शिक्षा के क्षेत्र में योगदान" नामक विषय पर व्याख्यान देने हेतु श्रीमती सुजाता वारकर, पुणे

क्षेत्रीय केंद्र, पुणे में कार्यशाला का आयोजन (11/03/2022)

को आमंत्रित किया गया था। कार्यशाला में 15 अधिकारियों/कर्मचारियों ने भाग लिया। कार्यक्रम की अध्यक्षता डॉ. राज वर्मा, अध्यक्ष (प्रभारी) ने की। कार्यशाला का समापन सभी को धन्यवाद प्रस्ताव से हुआ।

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केंद्र, शिमला

हिंदी कार्यशाला

- भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केंद्र, शिमला के टुटीकंडी फार्म में दिनांक 14.09.2021 को एक हिंदी कार्यशाला का आयोजन किया गया। इस कार्यशाला में नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, शिमला की सचिव श्रीमती सुधा सिहं व केंद्र के अध्यक्ष डॉ. कल्लोल कुमार प्रमाणिक के साथ मौजूद थी। कार्यशाला में लगभग केंद्र के 18 वैज्ञानिक व प्रशासनिक/तकनीकी वर्ग के कर्मचारियों को हिंदी में कार्य करने हेतु प्रशिक्षित किया गया।
- नराकास, शिमला द्वारा तय दिनांक 31.03.2022 को हिंदी कार्यशाला का आयोजन केंद्र के अमरतारा स्थित कार्यालय पर किया गया। इस कार्यशाला के मुख्य अतिथि डॉ. देश राज शर्मा, संयुक्त निदेशक, नवबहार, बागवानी विभाग, हिमाचल प्रदेश द्वारा शुरूआत की। कार्यशाला में लगभग 10 अधिकारियों/कर्मचारियों ने भाग लिया तथा राजभाषा में काम करने के अपने-अपने अनुभव साझा किए तथा हिंदी में कामकाज के सरल तरीके बताए गए। इस कार्यशाला का समापन केंद्र के अध्यक्ष डॉ. कल्लोल कुमार प्रमाणिक के धन्यवाद ज्ञापन के साथ हुआ।

पुरस्कार व सम्मान

हिंदी में सर्वाधिक सरकारी कामकाज के लिए नकद पुरस्कार योजना (2021-22)

संस्थान में विगत वर्षों की भांति इस वर्ष भी यह पुरस्कार योजना, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार के निर्देशों के अनुसार चलाई गई जिसमें वर्षभर हिंदी में सर्वाधिक सरकारी कामकाज करने वाले संस्थान के 02 कर्मचारी को नकद पुरस्कार प्रदान किए गए, जोकि निम्न प्रकार से है:-

1. सुश्री रीतू कुमारी, अवर श्रेणी लिपिक, पेन्शन अनुभाग, निदेशालय
2. सुश्री नैन्सी गुप्ता, अवर श्रेणी लिपिक, आवास अनुभाग, निदेशालय

अधिकारियों द्वारा हिंदी में श्रुतलेख (डिक्टेशन) देने के लिए पुरस्कार योजना (2021-22)

यह पुरस्कार योजना राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार के निर्देशानुसार लागू की गई है जिसमें अधिकारियों द्वारा अधिक से अधिक हिंदी में श्रुतलेख (डिक्टेशन) देने हेतु अधिकारी द्वारा दिए गए डिक्टेशन की मात्रा व गुणवत्ता को ध्यान में रखते हुए यह पुरस्कार दिया जाता है। गत वर्ष यह पुरस्कार श्री रविन्द्र सिंह, मुख्य प्रशासनिक अधिकारी, निदेशालय को प्रदान किया गया। जिसमें पुरस्कार स्वरूप रु. 5,000/- का नकद पुरस्कार दिया गया।

अन्य उपलब्धियां

संस्थान में दिनांक 09-11 मार्च, 2022 को कृषि उन्नति मेले का आयोजन किया गया। जिसका उद्घाटन केंद्रीय कृषि एवं किसान कल्याण मंत्री श्री नरेंद्र सिंह तोमर जी के कर कमलों द्वारा हुआ। किसान कृषि मेले में समस्त प्रदर्शित सामग्री को हिंदी में सुलभ कराया गया।

पुरस्कार योजनाएं/प्रतियोगिताएं

वर्ष 2021-22 में कर्मचारियों को हिंदी में अपना अधिकाधिक सरकारी कामकाज करने के लिए प्रेरित करने हेतु विभिन्न प्रतियोगिताएं/प्रोत्साहन योजनाएं चलाई गई। रिपोर्टाधीन अवधि में निम्न प्रतियोगिताओं/पुरस्कार योजनाओं का आयोजन किया गया।

हिंदी पत्र व्यवहार प्रतियोगिता (2021-22)

यह प्रतियोगिता, संभाग, अनुभाग/इकाई एवं क्षेत्रीय केंद्र स्तर पर आयोजित की जाती है जिसमें वर्षभर हिंदी में सर्वाधिक कार्य करने वाले एक संभाग व क्षेत्रीय केंद्र एवं एक अनुभाग/इकाई को चल-शील्ड से सम्मानित किया जाता है। रिपोर्टाधीन वर्ष में संभाग स्तर पर प्रथम पुरस्कार, सस्य विज्ञान संभाग एवं द्वितीय पुरस्कार, कीट विज्ञान संभाग , क्षेत्रीय केंद्र स्तर पर प्रथम पुरस्कार, क्षेत्रीय केंद्र, कालिम्पोंग एवं द्वितीय पुरस्कार, क्षेत्रीय केंद्र, कटराईं, कुल्लू घाटी तथा अनुभाग/इकाई स्तर पर प्रथम पुरस्कार, वेतन बिल अनुभाग एवं द्वितीय पुरस्कार, कार्मिक-3 अनुभाग को दिया गया है।

राजभाषा नोडल अधिकारी

संस्थान के समस्त संभागों/इकाइयों एवं इसके अधीनस्थ क्षेत्रीय केंद्रों में हिंदी अनुभाग के बीच बेहतर समन्वय स्थापित करने के उद्देश्य से संपर्क सूत्र के रूप में राजभाषा नोडल अधिकारी नामित किए गए हैं जिससे संस्थान में राजभाषा कार्यान्वयन के कार्य में अभूतपूर्व प्रगति हुई है। राजभाषा नोडल अधिकारियों की भूमिका को महत्व प्रदान करने एवं उन्हें प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से वर्ष 2015 से सर्वश्रेष्ठ राजभाषा नोडल अधिकारी प्रोत्साहन पुरस्कार प्रतियोगिता प्रारंभ की गई थी। वर्ष 2021-22 का सर्वश्रेष्ठ राजभाषा नोडल अधिकारी पुरस्कार संयुक्त रूप से दो अधिकारियों को प्रदान किया गया, जोकि निम्नवत है-

1. डॉ. संजीव रंजन सिन्हा, मुख्य तकनीकी अधिकारी, कीट विज्ञान संभाग
2. श्री बिजय सिंह, तकनीकी अधिकारी, क्षेत्रीय केंद्र, कालिम्पोंग

राजभाषा कार्यान्वयन समिति

संस्थान में राजभाषा अधिनियम 1963 एवं 1976 के अनुसार राजभाषा नीति व नियमों का अनुपालन एवं कार्यान्वयन सुनिश्चित करने के लिए संस्थान के निदेशक की अध्यक्षता में राजभाषा कार्यान्वयन समिति गठित की गई है। संस्थान के सभी संयुक्त निदेशक, संभागाध्यक्ष, लेखा नियंत्रक इसके पदेन सदस्य हैं जबकि उप निदेशक (राजभाषा) इसके सदस्य सचिव हैं। रिपोर्टाधीन अवधि एवं वर्ष 2019 से चले आ रहे कोविड़-19 संक्रमण के कारण तथा भारत सरकार के द्वारा सामाजिक दूरी बनाए रखने हेतु जारी दिशा निर्देशों के अनुसार उक्त बैठक प्रत्येक तिमाही में ऑनलाइन ज़ूम ऐप के माध्यम से आयोजित की गई और संस्थान में राजभाषा के प्रभारी कार्यान्वयन के लिए आवश्यक सुझाव व निर्देश दिए गए। प्रशासन में राजभाषा कार्यान्वयन का प्रभावी अनुपालन सुनिश्चित करने के लिए इसी प्रकार संयुक्त निदेशक (प्रशासन) की अध्यक्षता में तथा सभी संभागों/इकाइयों व केंद्रों में उनके अध्यक्ष/प्रभारी की अध्यक्षता में राजभाषा कार्यान्वयन उप समितियां गठित हैं जिनकी तिमाही बैठकें नियमित रूप से आयोजित की गईं।

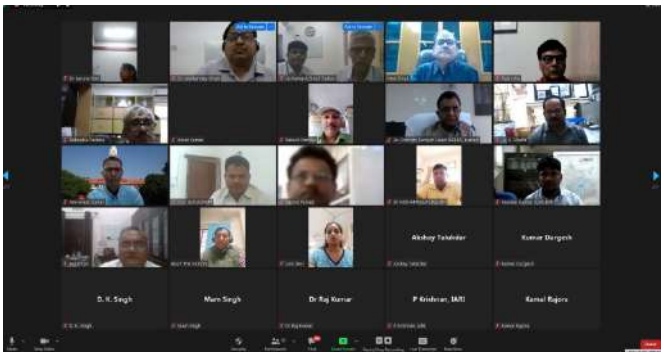

संस्थान राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक।

आपके उद्‌गार.....

आपकी कार्यालय की पत्रिका पूसा सुरभि के 17वें अंक की एक प्रति प्राप्त हुई। पत्रिका में कृषि अनुसंधान, पर्यावरण, जैविक खेती, खाद्‌य पदार्थ आदि संबंधी शोध-लेख पठनीय व ज्ञानवर्द्‌धक हैं। पत्रिका का आवरण पृष्ठ काफी आकर्षक है। इसके अतिरिक्त सुंदर छायाचित्रों ने पत्रिका की शोभा बढ़ा दी है।

पूसा सुरभि के 17वें अंक के प्रकाशन के लिए राजभाषा समिति एवं संपादक मंडल को शुभकामनाएं।

(पूनम भास्कर सिंहमार)
वैज्ञानिक 'ई' एवं राजभाषा अधिकारी
भारत सरकार, रक्षा मंत्रालय
पद्‌धति अध्ययन एवं विश्लेषण संस्थान रक्षा अनुसंधान तथा विकास संगठन
मेटकाफ भवन, दिल्ली

प्रो. एम एस स्वामीनाथन पुस्तकालय
Prof. M S SWAMINATHAN LIBRARY